पूर्वी उत्तर-प्रदेश के ग्रामीण अंचलों के हिन्दुओं में व्यावसायिक गतिशीलता का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डाक्टर आफ फिलासफी (समाजशास्त्र)

उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

१९८८

निर्देशक
डा० गौरी शंकर
प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग

शोधकर्ता
विजेन्द्र प्रसाद राय
एम० ए० (समाज-शास्त्र), बी० एड०

समाज विज्ञान संकाय
समाज-शास्त्र विभाग
काशी विद्यापीठ
वाराणसी–२२१००२

SOC
Dis.

NEHU LIBRARY
Acc. No. 103542
Acc. by
Date 7-7-05
Call No.
Sub. heading by
Enter by
Transcribed by

समाजशास्त्र विभाग

काशी विद्यापीठ

वाराणसी- 2

प्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध "पूर्वी उत्तर-प्रदेश के ग्रामीण अंचलों के हिन्दुओं में व्यावसायिक गतिशीलता का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन" श्री बिजेन्द्र प्रसाद राय द्वारा समाज-शास्त्र में डाक्टर आफ फिलासफी उपाधि हेतु मेरे निर्देशन में काशी विद्यापीठ के नियमानुसार सम्पन्न किया गया है। यह मौलिक कार्य उनके द्वारा एकत्र किये गये तथ्यों पर आधारित है।

(गौरी शंकर)
निर्देशक

PROFESSOR OF SOCIOLOGY
FACULTY OF SOCIAL SCIENCES
Kashi Vidyapith; Varanasi-221002

समर्पण

पूज्य चाचा श्री रघुनाथ राय एवं वन्दनीया चाची श्रीमती सुनिता राय के कमलवत् चरणों में सादर समर्पित ।

आभार

मेरे शोध कार्य को पूर्ण करवाने में जिन लोगों का असीम स्नेह मुझे मिला है, उनके प्रति आभार प्रदर्शित करना मेरा परम महत्वपूर्ण कार्य है।

मैं डॉ० सर्वजीत राय, रीडर, हिन्दी विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी का हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे इस गुरूतर कार्य हेतु काशी विद्यापीठ आमंत्रित किया। उन्होंने मुझे अपार स्नेह प्रदान किया एवं इस कठिन कार्य के सम्पादन हेतु मुझे दिशा निर्देश दिया।

मैं अपने गुरु और निर्देशक डॉ० गौरीशंकर, प्रोफेसर, काशी विद्यापीठ, वाराणसी का आजीवन आभारी रहूँगा, जिन्होंने हमेशा अपने स्नेह एवं प्यार से मुझे मेरे कार्य को सम्पन्न करवाने में भरपूर सहयोग प्रदान किया। डॉ० शरत् कुमार सिंह, विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी का मैं एहसान मन्द हूँ, जिन्होंने मुझे शोध कार्य करने की अनुमति प्रदान की।

मैं अपने गुरु श्री विजयानन्द सिंह, अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग डिग्री कालेज, गाजीपुर एवं श्री अजय प्रताप सिंह और श्री गुप्तेश्वर नाथ तिवारी के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने समय-समय पर अपना सहयोग एवं स्नेह प्रदान किया।

मैं अपने सहकर्मी साथियों श्री कमला राय, श्री गुप्तेश्वर राय व श्री सत्यनारायण राय, इण्टर कालेज, शेरपुर का आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे इस शोध कार्य को करने की प्रेरणा प्रदान की।

अन्त में प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के टंकणकर्ता श्री सोहन लाल, सरिता टाइपिंग स्कूल, डी0 55/48, औरंगाबाद, वाराणसी भी धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने अत्यल्प समय में विशुद्ध टंकण कार्य सम्पन्न किया।

(विजेन्द्र प्रसाद राय)

विषय सूची

		पृष्ठसंख्या
आभार		
प्रथम अध्याय :	भूमिका	१
	(अ) व्यावसायिक गतिशीलता पर सम्पन्न पूर्ववर्ती अनुसन्धान एवं उनकी प्ररचनाएँ ।	१२
	(ब) अनुसन्धान का क्षेत्र एवं समग्र ।	२६
द्वितीय अध्याय :	अनुसन्धान विधियाँ एवं उपकरण	३४
	(क) साक्षात्कार एवं अवलोकन की प्रक्रिया	
	(ख) साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन अनुसूची एवं प्रश्नावली ।	
तृतीय अध्याय :	तथ्यों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण	४६
चतुर्थ अध्याय :	व्यावसायिक गतिशीलता पर प्राप्त तथ्य एवं विभिन्न प्रकार के तथ्यों में सह-सम्बन्ध ।	२१८
पंचम अध्याय :	निष्कर्ष	२४६
	सन्दर्भ सूची	२६४
	साक्षात्कार अनुसूची	२८६

सारिणी सूची

क्रमसंख्या (सारिणी)	विवरण	पृष्ठसंख्या
1-	उत्तरदाताओं की आयु और लिंग	४८
2-	वैवाहिक स्थिति	५१
3-	परिवार की प्रकृति एवं उसका आकार	५३
4-	आयु और वर्ग	५५
5-	तीन पीढ़ियों की शैक्षणिक उपलब्धियां	६८
6-	आगे भी शिक्षा प्राप्त करने की अभिरुचि	७५
7-	सामाजिक समानता और बदलते मूल्य	८४
8-	प्रेरणाएँ एवं आकांक्षाएं	८८
9-	उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा	९८
10-	अन्तर पीढ़ीगत व्यावसायिक गतिशीलता	१०४
11-	उत्तरदाताओं (पुत्र) और उनके पिता की पीढ़ियों के बीच व्यावसायिक गतिशीलता	१११
12-	उत्तरदाताओं द्वारा अपने पुत्रों के लिए पसन्द व्यवसाय	११६
13-	आन्तःपीढ़ी गतिशीलता	१२४
14-	उत्तरदाताओं के पहले वाले व्यवसाय के सन्दर्भ में कुछ तथ्य	१२६
15-	वर्तमान व्यवसाय का विवरण	१३२
16-	उत्तरदाताओं के वर्तमान पेशे के सन्दर्भ में कुछ तथ्य	१३८
17-	उत्तरदाताओं की पत्नी के पिता का व्यवसाय (यदि विवाहित स्त्री है तो उसके पति का व्यवसाय)	१४१

		पृष्ठसंख्या
18-	वर्तमान व्यवसाय के प्रति दृष्टिकोण	१४५
19-	उत्तरदाताओं की वर्गीय सम्बद्धता	१५१
20-	सामाजिक स्थिति का निर्धारक तत्व	१५४
21-	घर और सवारी	१५६
22-	संगठनों के सदस्य और वैचारिक परिवर्तन के सन्दर्भ में दृष्टिकोण	१६१
23-	उत्तरदाताओं का मतदान के सम्बन्ध में आदर्श	१६४
24-	भाग्य और धर्म के प्रति दृष्टिकोण	१६८
25-	विवाह के प्रति दृष्टिकोण	१७४
26-	ईश्वर के प्रति विश्वास की प्रवृत्ति	१८६
27-	विशिष्ट व्यवसाय से सम्बन्धित देवता और उनके प्रति अभिरुचि	१९४
28-	पुनर्जन्म के प्रति अभिरुचि	१९९
29-	पूर्वजों के प्रति अभिरुचि	२०३
30-	ईश्वर के प्रति विश्वास	२०६

प्रथम अध्याय

भूमिका

भूमिका

जाति व्यवस्था भारतीय समाज की एक अतिविशिष्ट एवं महत्वपूर्ण व्यवस्था है। जन्म से ही एक व्यक्ति किसी विशिष्ट जाति का सदस्य हो जाता है, और आजीवन वह उसी जाति में ही बना रहता है, जब तक कि वह अपने जातिगत रीति-रिवाजों एवं नियमों के साथ विद्रोह नहीं करती है। यह एक अन्तर्विवाही इकाई होती है। अत: एक जाति का सदस्य अपनी जाति में ही शादी करने के लिए स्वतन्त्र है। जाति ही भारतीय समाज में परम्परागत रूप से व्यक्ति के व्यवसायों का संरक्षक रही है। जाति और व्यवसाय खासतौर से ग्रामीण क्षेत्रों में एक दूसरे के साथ इतने अधिक घनिष्ठ रूप से संलग्न रहते हैं कि एक दूसरे को पृथक् करके उनके अस्तित्व को पहचानना कठिन होता है। प्रत्येक जाति का पेशा निश्चित होता है। अत: जातियों को व्यावसायिक समूह का भी नाम दिया जाता है। सामाजिक स्तरीकरण में जातिगत पेशों का स्थान भिन्न-भिन्न होता है।

हिन्दू समाज में चार वर्णों की अवधारणा ईश्वर प्रदत्त समझी जाती है, जिसमें ब्राह्मण वर्ण का स्थान सर्वोपरि होता है। क्षत्रिय एवं वैश्य मध्यवर्ती और शूद्र वर्ण सबसे निचले स्तर पर होता है। परम्परागत ढंग से पेशों का इन वर्णों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। जैसे-- ब्राह्मण वर्ण का पेशा पढ़ना, पढ़ाना एवं पूजा तथा धार्मिक क्रिया-कलाप सम्पन्न करना है। क्षत्रिय वर्ण का पेशा युद्ध करना, वैश्य वर्ण का कार्य कृषि, पशुपालन एवं व्यापार तथा शूद्र वर्ण का कार्य या पेशा अपने से उच्च वर्णों की सेवा करना है। ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य वर्ण के लोग एक ऐसे धार्मिक संस्कार को सम्पन्न करते हैं, जिसमें

उनका प्रतीकात्मक रूप से दूसरा जन्म होता है। अत: ये तीनों वर्ण द्विज कहलाते हैं। चार वर्णों की यह अवधारणा प्राचीन भारतीय समाज में समय-समय पर विशिष्ट परिस्थितियों में व्यक्ति को एक विशिष्ट पेशा अपनाने के लिए आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती है। अत: आर्थिक क्षेत्र में जाति का कार्य अप्रतियोगितात्मक है। वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मण वर्ण को कुछ विशिष्ट सुविधाएँ प्रदान की गई हैं। वह धार्मिक नियम बनाने वाला है। ये नियम क्षत्रियों के द्वारा ही लागू करवाये जाते हैं। क्षत्रिय वर्ण ही देश में प्रशासन का संचालन एवं शान्ति बनाये रखने का उत्तरदायी होता है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद देश में औद्योगीकरण का विकास हुआ। विज्ञान एवं तकनीकी से आम भारतीय जन-मानस प्रभावित होने लगा। संचार माध्यमों एवं परिवहन साधनों के विकास ने स्थान से स्थान की दूरी को समाप्त कर दिया। विज्ञान एवं तकनीकी के विकास के फलस्वरूप नये-नये आविष्कार हुए एवं विभिन्न प्रकार की वस्तुओं के उत्पादन के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के उद्योगों का विकास हुआ। औद्योगीकरण के विकास के फलस्वरूप देश के परम्परागत व्यवसायों का ढाँचा धीरे-धीरे टूटने लगा। आज से 50-60 वर्ष पूर्व तक जातिगत आधार पर जीविकोपार्जन हेतु जो पेशे या व्यवसाय अपनाये जा रहे थे, उनमें आधुनिक वर्तमान युग में परिवर्तन आ गया है। यद्यपि जातिगत दृष्टि से निर्मित परम्परागत व्यवसायों का अपना स्थाई एवं प्रभावकारी पक्ष रहा है, परन्तु आधुनिक समय में राजनीतिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों में व्यापक परिवर्तनकारी तत्वों तथा राष्ट्र के आर्थिक विकास के दौर में ऐसे कारण उपस्थित हुए हैं जिनसे व्यक्ति परम्परागत व्यवसायों से पृथक हुआ है, अर्थात् व्यवसायों में परिवर्तन होना प्रारम्भ हो गया है। अब यह आवश्यक नहीं रह गया है कि चमार का लड़का चमड़े का

ही कार्य करेगा, अपितु वह अपना व्यवसाय चुनने के लिए स्वतन्त्र है। वह अपनी योग्यता में सुधार लाकर अधिकारी, अभियन्ता, चिकित्सक, साहित्यकार इत्यादि हो सकता है। इसके अतिरिक्त वह अपने लिए किसी पेशे का चयन भी करने के लिए स्वतन्त्र है।ऐसा देखा जा रहा है कि एक जाति का व्यक्ति दूसरी जाति के व्यक्ति के पेशों को अपना रहा है। पहले जूते का व्यवसाय केवल अनुसूचित जाति के लोग ही करते थे, लेकिन आज आर्थिक लाभ को देखते हुए सभी जातियों के लोग विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए हैं। पहले ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य अपने खेतों में हल चलाना अपना अपमान समझते थे, परन्तु आज वे सारे लोग अपने हाथ से ही अपना हल चला रहे हैं।

तकनीकी प्रगति के फलस्वरूप आज विकसित देशों की प्रतिव्यक्ति वार्षिक आय 1700 है, जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका में यह 2300 है। विकसित देशों की आय की तुलना में विकासशील देशों की प्रतिव्यक्ति वार्षिक आय 110 है, जबकि भारत की बहुत ही कम 70 है। भारत की प्रतिव्यक्ति इस आय में उन ग्यारह परिवारों की आय भी सम्मिलित है जिनकी आय उनके वर्ग के विकसित देशों के लोगों से कम नहीं है। इनकी तुलना में आम भारतीय की वार्षिक प्रतिव्यक्ति आय का कोई प्रतिशत ही नहीं है। यह उल्लेख करना आवश्यक है कि विश्व के लगभग 25·0 प्रतिशत लोग बहुत ही उच्च स्तर का शानदार जीवन व्यतीत कर रहे हैं, जबकि इसके विपरीत लगभग 75·0 प्रतिशत लोग बहुत ही निम्न स्तर का, अभावों एवं बिमारियों से भरा हुआ जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य है।

भारतीय आबादी प्रतिवर्ष 2·5 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है, ऐसी स्थिति में कुछ अनुसन्धानकर्ताओं के अनुसार, परम्परागत व्यवसाय में उनके भाग लेने की दर ज्ञात करना कठिन है। भारत साक्षरता प्रतिवर्ष 1·0

प्रतिशत की दर से बढ़ रही है, फिर भी परम्परागत व्यवसायों में बहुत ही धीमा परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है। अतः यह ज्ञात करना आवश्यक है कि किस प्रकार परम्परागत विचारों के लोग बदलते परिवेश में नई प्रवृत्तियों एवं जीवन के नये मूल्यों को व्यावसायिक परिवर्तन में स्वीकार कर रहे हैं। बीते हुए दो शताब्दियों में विकसित देशों की पूर्व-औद्योगीकरण से आधुनिक औद्योगिक संकुल के सन्दर्भ में आर्थिक संक्रमण से सम्बन्धित समस्याएँ थीं। उसी क्रम में विकासशील देश भी तीव्र गति से परम्परागत व्यवसायों से नये आधुनिक व्यवसायों में प्रवेश कर अपने भाग्य में परिवर्तन की आशा संजोये हुए हैं। इस रूपान्तरण में शिक्षा एक बहुत ही महत्वपूर्ण एवं जीवन्त भूमिका निभाती है। जिस देश में शिक्षा का प्रसार जितना ही अधिक होगा, वहाँ व्यावसायिक गतिशीलता भी उतनी ही तीव्र होगी।

हाल ही में कुछ देश जैसे भारत ने अपनी स्वतन्त्रता को उच्च आदर्श एवं प्रशंसनीय नेतृत्व से प्रारम्भ किया। वे देश जो अपनी स्वतन्त्रता के लिए संघर्षरत थे, वे स्वतन्त्र हुए और अपनी राजनैतिक सत्ता को स्थापित किया। संसद सदस्यों एवं विधानसभा सदस्यों के रूप में स्वतन्त्र मन्त्रिमण्डल का निर्माण किया। देश के लिए राजनैतिक अभिमत प्रगतिशील सत्तारूढ़ दल से प्राप्त हुए। फिर भी बहुत सारे रूढ़िगत तत्वों को नई सामाजिक एवं राजनैतिक आवश्यकताओं के कारण प्रारम्भिक प्राथमिकताएं प्रदान की गई।

वर्तमान राजनैतिक आदर्श के विकास को देश के विकास एवं सामाजिक, आर्थिक दशाओं के सन्दर्भ में देखना आवश्यक है। इसे दूसरे दृष्टिकोण के अन्तर्गत लिया जा सकता है। लेकिन इस प्रकार के सभी अनुसन्धानों में भारतवर्ष के लोगों के जीवन के सन्दर्भ में तथ्यों को ज्ञात करने हेतु जाति-व्यवस्था को प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए। जाति व्यवस्था आज भी

भारत में बहुत ही सुदृढ़ स्थिति को प्राप्त है, परन्तु आज यह नये स्वरूपों को प्राप्त कर रही है। भारत के राजनैतिक दलों में आज भी जातिगत भावनाएं देखी जा सकती हैं। इसी सन्दर्भ में सन् 1957 में जवाहरलाल नेहरू ने ठीक ही कहा था कि "हम आज सम्प्रदायवाद, जातिवाद और प्रान्तवाद के विरूद्ध हैं। हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि ये सारे तत्व हमारे सामाजिक जीवन में जहर घोल रहे हैं।

मनुष्य का अध्ययन अपनी सही भूमिका तब तक भलीभांति प्रदर्शित नहीं कर पायेगा, जब तक कि संसार के पुराने ढंग के दृष्टिकोण में सुधार करके उसे आधुनिक वैज्ञानिक विकास के परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा जाएगा। समाज के ऊपरी ढांचे में सांस्कृतिक विनाश संक्रमणकाल का संकट है। हम अपने समक्ष उपस्थिति होने वाले जातीय संरचना, व्यावसायिक आदर्श, मूल्य, प्रवृत्तियां, सामाजिक गतिशीलता और सामाजिक सम्बन्ध को परिवर्तन के उलझन में समझ पाने में असमर्थ रहे हैं। प्रत्येक नई वस्तु को कठिन संघर्ष से ही उत्पन्न किया जाता है। यह बात सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन एवं व्यावसायिक गतिशीलता के सन्दर्भ में भी सत्य है। हम लोग अपने मूल्यों, प्रवृत्तियों, सामाजिक गतिशीलता एवं सम्बन्धों के समतुल्य परिवर्तन में बहुत ही धीमें रहे हैं। इस असन्तुलन का प्रधान कारण हमारे चारों तरफ कुप्रबन्ध रहा है। जो कुछ भी हमारे समक्ष आज असन्तुलन की स्थिति में है, वह सिर्फ इसलिए है कि जिस गति से हमने तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रगति की है, उस गति से हमने सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रगति नहीं किया है। किन्तु 30 वर्षों में ये परिवर्तन टेढ़े-मेढ़े रेखाओं के समान थे जो अच्छे और बुरे दोनों ही थे। जहाँ तक हमारे देश के राष्ट्रीय संस्कृति के झुकाव का सम्बन्ध है, वहाँ समाजवादी विचारधारा दिशा- निदेशक का कार्य करती है, क्योंकि भारत ने पूर्णतया

समाजवादी आदर्श को स्वीकार किया है। अत: समाजवादी तत्वों का हमारी संस्कृति और जीवन के अन्य क्षेत्रों में प्रतिबिम्बित होने की आशा की जानी चाहिए। फिर भी भारत में राष्ट्रीय समाजवादी संस्कृति अपना अलग स्वरूप निर्धारित नहीं कर सकी है, शायद इसलिए कि भारतीय जनमानस पूर्णरूपेण अपने राष्ट्रीय राजनीतिक आदर्श को आत्मसात नहीं कर सकी है। बहुत ही लम्बी अवधि में एक पुरानी संस्कृति निर्मित हुई थी, जिसने अपने अन्दर जनतान्त्रिक तत्वों को समाहित किया था। राष्ट्रीय संस्कृति और आत्मविश्वास की उन्नति मे लिए यह परमावश्यक थी। इसी कारण से हमें अनगिनत गम्भीर अध्ययन, क्षेत्र-सर्वेक्षण इत्यादि की आवश्यकता है, ताकि हम तथ्यपूर्ण आंकड़े एकत्र कर सकें और ग्रामीणें समाज का जीवन स्तर और परिवर्तन की दर एवं नमूने ज्ञात किये जा सके।

यह सत्य है कि विशाल भारतीय समुदाय में बहुत सारी विभिन्नताएं विद्यमान हैं, जिनमें जाति का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। जातिप्रथा में सामाजिक सम्मान धार्मिक मूल्यों के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। यद्यपि प्रस्थिति समूह विभिन्न प्रकार के समाजों के विशिष्ट लक्षण हैं, तथापि भारत में यह जाति-प्रथा के रूप में बहुत ही सूक्ष्म ढंग से परिभाषित की गई है। वर्गीय-व्यवस्था की अपेक्षा जाति में गतिशीलता बहुत ही धीमी और क्रमिक प्रक्रिया के अन्तर्गत होता है। परम्परागत भारतीय समाज में धार्मिक और कानूनी दोनों मान्यताएं इस जाति व्यवस्था में समाहित हैं। कानून के समक्ष विभिन्न जातियों एवं व्यावसायिक समूहों की असमानताएं जुड़ी हुई हैं। यह सुविज्ञात तथ्य है कि भारत में जाति या वर्ग की धारणाएँ राष्ट्रीय स्तर की अपेक्षा ग्रामीण समाज में बहुत ही स्पष्ट रूप से विद्यमान हैं। वर्गीय-व्यवस्था एवं जाति-व्यवस्था का सम्बन्ध बहुत ही गतिशील है। भारत में वर्ग एवं जाति दोनों एक दूसरे को

आंशिक रूप से ढके हुए हैं और उनमें विभेद करना थोड़ा कठिन प्रतीत होता है, परन्तु वर्गीय व्यवस्था धीरे-धीरे अपने को जाति व्यवस्था से पृथक् करती जा रही है। अत: कोई भी शक्ति के बिन्दु-पथ के रूप में जाति या वर्ग के अस्तित्व को पहचान सकता है।

इस अध्ययन में हम अपना ध्यान ग्रामीण समाज की जाति, व्यवसाय और उसकी गतिशीलता के सम्बन्धों पर केन्द्रित करने का प्रयास करेंगे। ग्रामीण समुदाय एक ऐसा समुदाय है, जिसमें विभिन्न जातियों के लोग अपने विभिन्न पेशों को सम्पन्न करते हुए एक साथ निवास करते हैं। ग्रामीण समुदाय में अधिकांश लोग अपने जातिगत व्यवसायों से जुड़े हुए होते हैं। ग्रामीण समुदाय के लोग एक दूसरे के साथ मित्रवत भावना से जुड़े हुए हैं। वे आपस में अपने विचारों का आदान-प्रदान भी करते रहते हैं। ग्रामीण समुदाय में आर्थिक और राजनैतिक शक्ति का प्रतिनिधित्व कुछ विशिष्ट लोगों द्वारा किया जाता है। परन्तु प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य राजनैतिक या आर्थिक शक्तियाके के सम्बन्ध में न होकर विभिन्न जातियों से सम्बन्धित पेशों में क्या परिवर्तन हुए हैं, यह ज्ञात करना है।

आर्थिक शक्ति के सन्दर्भ में जाति और व्यावसायिक गतिशीलता का अध्ययन बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा है। इस सन्दर्भ में यह नजरअन्दाज नहीं किया जाना चाहिए कि सामाजिक गतिशीलता, आर्थिक परिवर्तन और राजनीतिक सुधार नई समस्याएं, नये विचार और नये सम्बन्धों के आदर्श को उत्पन्न नहीं करेंगे। अनेकों मानवशास्त्रियों ने इस तथ्य को उद्घाटित किया है कि राजनैतिक आधुनिकीकरण या सुधार की समस्याएं व्यक्ति को अन्त:-वैयक्तिक सम्बन्धों के जाल में प्रवेश करने का अवसर प्रदान करती है, जिसमें व्यवसाय, जाति और अन्य बन्धन लोगों को उत्पादन संगठनों से बाहर कर देती है। निम्न आर्थिक स्थिति और बढ़े हुए भौगोलिक गतिशीलता ने परम्परागत

आर्थिक ढाँचे में परिवर्तन किया है। नये राजनैतिक संगठनों के अभ्युदय ने विभिन्न केन्द्रों के प्रदूषित जीवन में जाति और शक्ति के बीच जटिल सम्बन्धों की स्थापना के लिए बाध्य किया है।

आर्थिक सम्बन्धों ने गाँवों की सीमाओं से बाहर आने के लिए लोगों को विभिन्न प्रकार के अवसर प्रदान किये हैं। अत: सामाजिक जीवन के अध्ययन के सन्दर्भ में किसी खास स्थान की जाति और उसके व्यवसाय को ज्ञात करना बहुत ही कठिन कार्य है। अनेकों गाँवों में अधिकांशत: किसान वर्ग के ही लोग निवास करते हैं, परन्तु वहाँ अन्य अनेक ऐसे लोग भी होते हैं, जिनका व्यवसाय किसी न किसी प्रकार के रोजगार या कुटिर उद्योग होते हैं।

आर्थिक या व्यावसायिक परिवर्तन और जातिगत गतिशीलता के फलस्वरूप प्रत्येक समुदाय या जाति में स्वायत्तता प्राप्त करने की प्रवृत्ति पाई जाती है। प्रत्येक परिवर्तन को विकास नहीं समझ लिया जाना चाहिए। आर्थिक विकास एक बहुत ही जटिल प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत बहुत से आर्थिक और गैर-आर्थिक तत्व समाहित रहते हैं। अत: विकास केवल आर्थिक प्रगति और परिवर्तन का ही योग नहीं है, अपितु यह सामाजिक, सांस्कृतिक और संस्थागत और आर्थिक सारे तत्वों का योग है।

व्यावसायिक एवं भौगोलिक गतिशीलता के परिणामस्वरूप आज लगभग सभी गाँव किसी न किसी कस्बे की बाजार या शहर से जुड़े हुए हैं। ये बाजार या शहर गाँवों पर अपना प्रत्यक्ष प्रभाव डालते हैं। जैसाकि डा० डी०पी० सिन्हा ने कस्बे के आदिवासियों में हो रे सांस्कृतिक परिवर्तनों से सम्बन्धित अपने अध्ययन में बताया है। किसी गाँव के सांस्कृतिक महत्व को समझने के लिए वहाँ की सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं अन्य नागरिक

कारण जो मौजूद हैं, उन्हें खोजना पड़ेगा। हाल ही में सम्पन्न हुए कुछ अध्ययनों में इस विषय पर काफी प्रकाश डाला गया है। खासतौर से "बायस (1968)", मैलिनास्की (1926) और "थर्नवाल्ड" (1926) ने अपने अध्ययनों में काफी प्रकाश डाला है।

मैलिनास्की ने ट्रोब्रिएन्ड टापू के निवासियों की आर्थिक गतिविधियों को समाज की सामाजिक-सांस्कृतिक शाखाओं में खोजने का प्रयास किया है। उन्होंने दिखाया कि ट्रोब्रियन्ड टापू के निवासियों की धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक एवं उनसे सम्बन्धित संस्थाएं किस प्रकार उत्पादन की वस्तुओं और उनकी सेवाओं को प्रभावित करते हैं। डॉ० एस० सिन्हा और उनके अन्य साथियों ने बाजारों को जो मूलतः ग्रामीण निवासियों द्वारा उत्पादित वस्तुओं के विक्रय एवं खरीद के केन्द्र होते हैं, ये किस प्रकार लोगों के अन्तःक्रिया के क्रेन्द्र होते हैं। उन्होंने मानव अन्तःक्रिया की विशिष्ट स्थिति या जाति, स्थानीय तत्व और विशिष्ट वस्तु की बिक्री के बीच सम्बन्ध स्थापित किया है। डॉ० रनवीर सक्सेना (1964) ने "ट्राइबल इकोनामी इन सेन्ट्रल इण्डिया" में ट्राइबल निवासियों से भरी हुई विन्ध्य और सतपुड़ा पहाड़ियों के लोगों के जीवन में सामाजिक, आर्थिक, संस्थागत मूल्य, निर्णय इत्यादि के सम्बन्ध में विस्तृत प्रकाश डाला है। डॉ० पी० के० भौमिक ने भी व्यावसायिक परिवर्तन अति और सामाजिक गतिशील का अध्ययन बंगाल की दो बाजारों बेल्पाहारी एवं सिल्दा के सन्दर्भ में किया है, जिसमें उन्होंने व्यावसायिक परिवर्तन और जातिगत संरचना के बीच सम्बन्ध स्थापित किया है।

REFERENCES

1. Bose, N.K. (Prof.) - "Modern Bengal" Vidyodaya, Cal.1959.

2. Gunnar Myrdal- "Asian Drama : An inquiry into the poverty of nations" - A pelical book - 1968.

3. Sinha, Surjit et.al- "Agriculture, caste and weekly Market, Bul. of ASI, Calcutta, Vol. X., 1961.

4. Sinha, D.P.- "Culture change in an inter-tribal market" Asia Publishing House, Bombay etc. 1961.

5. Bhowmik, P.K. (a) "Caste and changing occupation" Vol. III, no. 1, January 1969, pp. 19-46.
(b) "Occupational change and caste structure in rural market", pp. 15-40.

6. Malinowksi, B.- "The primitive economics of the Trobriand Islanders", 1926.

7. Saxena, Ranvir- "Tribal economy in central India," Fa. K.L. Mukhopadhyay, Calcutta, 1964.

8. Thurn Wald, R.- "Economics in primitive communities", London, Oxford book, 1932.

9. Bose, A.N.- "Social and Rural economy of north India", Calcutta- 1942.

10. Desai, M.B.- "Rural Economy of Gujarat, Bombay.

11. Majumdar, D.N.- "A Tribe in Transition", Calcutta, 1937.

12. Thusu K.N.- "The Weekly Market etc. in South East Bihar", Vanyajati, Delhi, XIII, 4, October, 1965.

भूमिका

(अ) व्यावसायिक गतिशीलता पर सम्पन्न पूर्ववर्ती अनुसन्धान एवं उनकी प्रस्थापनाएं

व्यावसायिक गतिशीलता पर इस शोध-प्रबन्ध से पहले भी शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किये गये हैं। इन शोध-प्रबन्धों में व्यावसायिक गतिशीलता को भिन्न-भिन्न आधारों पर देखने का प्रयास किया गया है। डा० पी०के० भौमिक ने व्यावसायिक गतिशीलता को जातिगत आधार पर प्रस्तुत करते हुए बताया है कि "वे विभिन्न हिन्दू जातियाँ जिनका पहले व्यवसाय या पेशा परम्पराओं द्वारा निर्धारित होते थे आज अधिकांश जातियों के लोग अपने जातिगत् पेशों को छोड़कर अब अन्य पेशों की ओर उन्मुख होते जा रहे है। इस सन्दर्भ में उन्होंने पश्चिम बंगाल के मेदिनीपुर जिले में स्थित बेल्पाहारी और सिल्दा बाजारों का अध्ययन किया है। अपने अध्ययन में उन्होंने निम्न तथ्यों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है।

(अ) बाजारें भिन्न-भिन्न लोगों को भिन्न-भिन्न रूपों में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराती हैं, जिसके फलस्वरूप परम्परागत जातिगत पेशों में शिथिलता एवं परिवर्तन हुए हैं।

(ब) धीरे-धीरे बाजारों के विकास के फलस्वरूप प्राचीन जातिगत व्यवसाय जिनका सम्बन्ध व्यक्ति के प्रस्थिति एवं सामाजिक प्रतिष्ठा से था, अब धार्मिक कट्टरपंथ के रूप में कायम नहीं रह सके हैं। अधिकांश वे लोग जो परम्परागत व्यवसायों से जुड़े हुए थे, उन्होंने अब नये व्यवसायों को अपना लिया है।

(स) नये व्यावसायिक नमूनों ने अप्रत्यक्ष रूप से लोगों के बीच नये सम्बन्धों की स्थापना किया है, जिससे लोगों में नये प्रकार के सम्बन्ध एवं समझदारी का विकास हुआ है। इसप्रकार से नये लोकतान्त्रिक, सांस्कृतिक एवं व्यावसायिक मूल्यों में गतिशीलता उत्पन्न हुई है, जिससे अन्तत: विभिन्न जातियों एवं समुदायों के बीच दूरी कम हुई है और वे एक दूसरे के करीब हुए हैं।[1]

पूना शहर की तीन पीढ़ियों के बीच पाई जाने वाली व्यावसायिक गतिशीलता का अध्ययन सोमानी एवं प्रधान ने किया है। उन्होंने अपने अध्ययन में निष्कर्ष निकाला है कि लगभग 27·0 प्रतिशत वे लोग जो पहले शारीरिक श्रम-सम्बन्धी कार्य करते थे वे अब मध्यवर्गीय स्थिति में पहुँच चुके हैं और लगभग एक चौथाई वे लोग जिनके पिता शारीरिक श्रम-सम्बन्धी कार्य नहीं करते थे, आज शारीरिक श्रम-सम्बन्धी कार्यों में संलग्न हो चुके हैं।[2] यह अध्ययन दस प्रकार के व्यवसायों की पृष्ठभूमि में किया गया है और इसमें यह निष्कर्ष निकाला गया है कि नगरीय भारत में सामाजिक एवं व्यावसायिक गतिशीलता बहुत अधिक है।

प्रत्येक समाज में गतिशीलता कई सामाजिक तथ्यों पर निर्भर रहती है, जैसे-- सामाजिक स्तरीकरण, समुदाय का आकार, परिवार की प्रकृति, शिक्षा, तकनीकी और औद्योगिक विकास, राजनैतिक स्थिति, आर्थिक अवसर इत्यादि। ये सारे तथ्य लोगों में एक प्रकार की प्रेरणाएं एवं आशाएँ उत्पन्न करते हैं, जो सामाजिक गतिशीलता के लिए उत्तरदायी होते हैं। भारतीय औद्योगीकरण से पहले की सामाजिक व्यवस्था, जबकि ग्रामीण एवं नगरीय समुदाय सामाजिक एवं भौगोलिक रूप से एक दूसरे से पृथक थे, तब लोगों

में बहुत ही कम व्यक्तिगत आकांक्षाओं को उत्पन्न होने का अवसर प्रदान करते थे। उस समय आधुनिक औद्योगिक युग की अपेक्षा बहुत ही कम व्यावसायिक गतिशीलता देखने को मिलती थी, क्योंकि तब परम्परागत भारतीय समाज जाति के आधार पर स्तरीकृत था और प्रत्येक जाति का अपना एक निजी व्यवसाय था। परन्तु औद्योगीकरण एवं नगरीकरण एवं नये राजनैतिक उदारतावाद ने व्यक्तिगत उपलब्धियों एवं सामाजिक समानतावाद के नये मूल्यों को उत्पन्नकिया, जिसके फलस्वरूप समाज में सामाजिक गतिशीलता को प्रेरणा मिली और लोग नये मूल्यों से प्रभावित होकर परम्परागत पेशों को छोड़ने की ओर उन्मुख हुए।

परम्परागत सामाजिक व्यवस्था में विभिन्न जातियाँ एक दूसरे से इस प्रकार सम्बन्धित थी कि सामाजिक व्यवस्था लोगों में पारस्परिक सहयोग एवं अन्त:निर्भरता को प्रोत्साहित करता था। भारतीय जाति व्यवस्था पारस्परिक सहयोग पर आधारित थी जो प्रतिस्पर्धात्मक प्रवृत्ति को पनपने नहीं देती थी, जिससे सामाजिक परिवर्तन भी परिलक्षित नहीं होता था। परम्परागत भारतीय समाज में लोग स्वयं के पेशों यानी स्वधर्म से जुड़े हुए हैं, ऐसी सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति की प्रस्थिति जन्मजात होती है और एक व्यक्ति किसी विशेष परिवार से सम्बन्धित होने के कारण अपने आप अपने पिता की प्रस्थिति, प्रतिष्ठा एवं व्यवसाय का उत्तराधिकारी बन जाता है, लेकिन व्यवहार में एक व्यक्ति अपने व्यवसाय में परिवर्तन करने के लिए पूर्णतया स्वतन्त्र है, लेकिन इस शर्त के साथ कि इस परिवर्तन से धार्मिक मूल्यों पर प्रभाव न पड़े। उदाहरणस्वरूप - एक ब्राह्मण अपने धार्मिक क्रिया-कलापों के साथ-साथ पूर्णरूपेण कृषि कार्य के लिए भी स्वतन्त्र था। इसी प्रकार से अछूत भी कृषि कार्य के लिए स्वतन्त्र था, लेकिन धार्मिक क्रिया-कलापों के लिए नहीं। ब्राह्मण अपने को किसी भी रूप में चमड़ें के कार्य से संलग्न नहीं कर

NORTH-EASTERN HILL UNIVERSITY LIBRARY
103542
Date 7-7-05

सकता था। यहाँ पर जाति व्यवस्था एवं व्यावसायिक चयन के सन्दर्भ में दो परस्पर संघर्षशील दृष्टिकोण हैं --

(अ) एक समूह के शोधकर्ताओं के अनुसार जाति व्यवस्था न केवल एक व्यक्ति के व्यवसाय को निश्चित करती है, बल्कि व्यवसाय के परिवर्तन से सम्बन्धित कुछ प्रतिबन्धों को भी सुनिश्चित करती है।[3]

(ब) दूसरी तरफ विरोधी दृष्टिकोण के अनुसार "प्राकृतिक रूप से जाति व्यवस्था एकगतिशील व्यवस्था है, जैसाकि घुरिये ने मध्य एवं उसके बाद के कालों में प्रदर्शित करने का प्रयास किया है कि कुछ जातियाँ विभिन्न प्रकार के पेशों का चयन कर सकती है।[4]

सन् 1931 की भारतीय जनगणना रिपोर्ट भी इस दृष्टिकोण का समर्थन करती है, और उसके आँकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि पुरुष श्रमिकों में से केवल आधे ही श्रमिक अपनी जाति के परम्परागत व्यवसाय से सम्बन्धित थे।[5]

अभी हाल ही में जिस्ट और ड्राइवर द्वारा दो सर्वेक्षणसम्पन्न किये गये हैं (ये सर्वेक्षण बंगलोर और मैसूर में सम्पन्न किये गये हैं) इसमें यह पाया गया है कि 40• प्रतिशत से भी अधिक लोग अपने जातिय संरचना में अपने पिता के व्यवसायों से अलग हटे हैं। ब्राह्मण जाति में उनका प्रतिशत 82•7 थी।[6]

सुप्रसिद्ध मानवशास्त्री एम0एन0 श्रीनिवास ने भी अपने अध्ययन में यह पाया है कि प्रत्येक जाति परम्परागत तौर पर एक विशिष्ट व्यवसाय से संलग्न है। यद्यपि कृषि सभी जातियों, यहाँ तक कि गाँवों में ब्राह्मण से लेकर अछूत तक के लिए एक सामान्य पेशा है। अपने अध्ययन में उन्होंने महसूस किया है कि जाति व्यवस्था कठोर व्यवस्था से काफी दूर है। सामाजिक संस्तरण की मध्यवर्ती जातियों में विशेष रूप से व्यवसायिक गतिशीलता पायी जाती है।[8]

एस0एम0 दूबे ने गोरखपुर शहर के सन्दर्भ में सम्पन्न अपने अध्ययन में निम्न विचारों की पुष्टि की है --

(अ) व्यावसायिक परिवर्तन के लिए जाति व्यवस्था कोई बाधा उपस्थित नहीं करती है। यहाँ तक कि आधुनिक शिक्षा के आगमन से पूर्व भी यही बात सत्य थी। अपने अध्ययन में उन्होंने पाया कि केवल 5·33 प्रतिशत लोग ही ऐसे थे जो अपने परम्परागत व्यवसायों, यहाँ तक कि कृषि, से सम्बन्धित थे।

(ब) दूसरी तरफ उन्होंने अपने आकड़ों से यह स्पष्ट किया है कि जाति-व्यवस्था समाज के सभी सदस्यों को समान अवसर प्रदान नहीं करती है, क्योंकि अधिकांश निम्न और मध्यवर्गीय जातियों के लोग शैक्षणिक, सामाजिक एवं आर्थिक अवसरों से वंचित हो जाते हैं।[9]

गोल्ड ने बताया है कि शहर के लोग, जिनमें योग्यता के अनुरूप अर्जित व्यवसाय अपनाने की भावनाएँ प्रबल हैं, परम्परागत सामाजिक संगठन का परित्याग नहीं करते हैं।[10]

हमने अब तक भारतीय सन्दर्भ में व्यावसायिक गतिशीलता से सम्बन्धित विभिन्न अनुसन्धान कार्यक्रमों का विवेचन किया है। व्यावसायिक गतिशीलता पर विभिन्न देशों में भी अनुसन्धान सम्पन्न किये गये हैं। यहाँ हम विदेशों में सम्पन्न हुए कुछ अनुसन्धान कार्यक्रमों का उल्लेख करेंगे, क्योंकि औद्योगीकरण एवं तकनीकीकरण का आविर्भाव पाश्चात्य देशों में ही हुआ है और उन समाजों के व्यवसायों पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद बहुत सारे देशों में व्यावसायिक गतिशीलता से सम्बन्धित अध्ययन सम्पन्न किये गये हैं। इन सारे अध्ययनों में उत्तरदाताओं एवं उनके पिता के व्यवसायों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया गया है। इन अध्ययनों में व्यावसायिक गतिशीलता के विचलन की तुलना भी की गई है। लेकिन इस प्रकार की तुलना करना बहुत ही कठिन कार्य है। अत: कुछ देशों में सम्पन्न अध्ययनों ने इस तुलना को विभिन्न देशों में सम्पन्न अध्ययनों से प्राप्त आकड़ों के आधार पर आसान बनाने का प्रयास किया है। "उनमें से अधिकांश ने व्यवसायों के वर्गीकरण को आधार बनाया जिनकी तुलना एक दूसरे से नहीं की जा सकती और हमेशा ही उत्तरदाताओं का व्यवसाय उनके पिताओं से कभी-कभी ही समान होते हैं। तुलनात्मक विश्लेषण से प्राप्त तथ्यों को प्रायोगिक तौर पर हमने व्यावसायिक श्रेणियों को कम किया और विचित्र देशों के लिए श्रमिक, बुद्धिजीवी एवं खेतिहर इन तीन श्रेणियों को बनाया। इन तथ्यों को प्रस्तुत करने के लिए हमने यह परिकल्पना बनाई है कि पुरुषों में श्रमिक कार्यों से बुद्धिजीवी कार्यों की ओर गतिशीलता उर्ध्व गतिशीलता कहलाएगी।[11]

उपरोक्त परिकल्पना को निम्न आधारों पर प्रस्तुत किया जा सकता है --

(अ) बौद्धिक श्रम सम्बन्धी पुरुषों के कार्य शारीरिक श्रम सम्बन्धी कार्यों यहाँ तक की कौशलपूर्ण कार्यों की अपेक्षा अधिक प्रतिष्ठा-परक है।[12]

इस सन्दर्भ में विभिन्न देशों में किये गये सर्वेक्षणों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है --

व्यावसायिक प्रतिष्ठा की तुलना से सम्बन्धित छः देशों में किये गये अध्ययन व्यावसायिक दर्जों से बहुत अधिक मिलते-जुलते हैं।[13]

दो अन्य औद्योगिक देशों में किये गये अध्ययन भी व्यावसायिक नमूनों से सम्बन्धित मिलते-जुलते निष्कर्ष को उद्घाटित किया है।[14]

दो विकासशील देशों ब्राजील और फिलीपाइन्स में किये गये अध्ययनों से भी विकसित औद्योगिक देशों के समान ही निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं।[15]

पोलैण्ड जैसे साम्यवादी देश से व्यावसायिक प्रतिष्ठा से सम्बन्धित सूचना से प्राप्त तथ्यों में पाया गया है कि अच्छे वेतन प्राप्त श्रम सम्बन्धी कौशलपूर्ण कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए कुछ निम्न वेतन प्राप्त सफेदपोश कार्य करने वाले लोगों की प्रस्थिति तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त हुआ है। ··· अधिकांश स्थितियों में इसे तरक्की की भाँति देखा जाता है ··· यद्यपि प्रस्थिति के नये मानदण्ड के दृष्टिकोण से इसे तरक्की नहीं मान लिया जाना चाहिए।[16]

(ब) सामान्य रूप से पुरुषों में सफेद पोश स्थितियाँ श्रमिक कार्यों की स्थितियों से अधिक आय वाली हैं।

अनेक देशों से प्राप्त आय और व्यवसाय से सम्बन्धित प्रमाणों से यह प्रकट होता है कि कौशलपूर्ण शारीरिक कार्य करने वालों की अपेक्षा सफेद पोश कार्य करने वालों की आय परम्परागत रूप से अधिक होती है। पर्याप्त सम्पन्नता एवं मुद्रास्फिति की लम्बी अवधि में इन दोनों का अन्तर अवश्य कुछ कम हो जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 1951 में 35 वर्ष से ऊपर के प्रत्येक आयु समूह के लोगों के (कृषि कार्य से सम्बन्धित नहीं) व्यवसायों को आय के आधार पर निम्न क्रम में अवस्थिति किया गया था उच्च नौकरियाँ (प्रशासन, शिक्षा, चिकित्सा इत्यादि), प्रबन्धकीय कार्य, लिपिक और विक्रेता, शिल्पकार, कारखाने का श्रमिक नौकर और मजदूर।[17]

(स) सामान्य रूप से सफेदपोश (बुद्धिजीवी कार्य के लिए शारीरिक श्रम सम्बन्धी कार्यों की अपेक्षा अधिक शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है।[18]

(द) सफेदपोश स्थितियों को प्राप्त, यद्यपि कम वेतन प्राप्त लोग अपने को शारीरिक श्रम सम्बन्धी कार्य करने वालों की अपेक्षा अपने को मध्यमवर्गीय स्थितियों का सदस्य मानते हैं और उपभोग के आदर्श में भी उसी प्रकार का व्यवहार प्रदर्शित करते हैं।[19]

(य) शारीरिक श्रम सम्बन्धी कार्य करने वाले लोगों की अपेक्षा निम्न स्तर के सफेदपोश कार्य करने वाले लोगों में राजनैतिक चेतना पाई जाती है, जो उच्च-मध्यवर्गी लोगों की प्रवृत्तियों से मेल खाता है। यह तथ्य ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, नार्वे,

कनाडा इत्यादि से प्राप्त हुए हैं।[20]

इस तथ्य का उल्लेख किया जाना चाहिए कि एक देश में किसी दूसरे देश की अपेक्षा गतिशील सदस्यों का प्रतिशत अधिक हो तो इसका अर्थ यह नहीं है कि उस देश में सदस्यों को समान आर्थिक अवसर उपलब्ध है। बल्कि ऐसा भी होता है कि एक देश में गतिशील सदस्यों का प्रतिशत अधिक है और वहाँ बहुत कम समान आर्थिक अवसर उपलब्ध हैं। उदाहरणार्थ-- किसी देश में जहाँ सबकके समान अवसर उपलब्ध है, यदि वहाँ 90·0 प्रतिशत किसान हों तो समान अवसर उपलब्ध होते हुए भी किसानों के लड़के अधिकांश किसान ही रह जाते हैं। यद्यपि यदि प्रत्येक गैर-कृषि स्थान किसानों के लड़कों से भर दिये जायं तो भी केवल 11·0 प्रतिशत किसानों के लड़के ही अपना व्यवसाय परिवर्तित कर सकते हैं।

दूसरी तरफ यदि कोई देश तीव्र आर्थिक परिवर्तनों के दौर से गुजर रहा हो और सफेदपोश कार्यों की वृद्धि इतनी हो जाय कि सभी स्थानों का 50·0 प्रतिशत हो जाय तो ऐसी स्थिति में भी अग्रवर्ती (उर्ध्व) गतिशीलता की दर असमानता ही प्रदर्शित करती है।[21]

हाल ही में किये गये एशिया की दो शहरों टोकियो (जापान) एवं पूना (भारत) की जनसंख्या के सर्वेक्षण रिपोर्ट से उच्च दर की सामाजिक गतिशीलता प्रदर्शित होती है। जापान में किये गये सर्वेक्षण से पता चलता है कि लगभग एक तिहाई वे पिता जो शारीरिक श्रम सम्बन्धी कार्यों से संलग्न थे-- उनके पुत्र साक्षात्कार के समय सफेदपोश कार्यों में संलग्न थे।[22]

भारत में किये गये सर्वेक्षण रिपोर्ट से यह पता चलता है कि लगभग 27·0 प्रतिशत श्रमिक तरक्की करके मध्यवर्ग में पहुँच चुके हैं और लगभग 25·0

प्रतिशत वे लोग जिनके पिता सफेदपोश कार्यों में संलग्न थे वे अब श्रमिक वर्ग में आ गये हैं।[23]

1912 के लगभग ग्रेट-ब्रिटेन में एक बहुत ही अच्छा अनुसन्धान कार्य हुआ था, जिसमें यह बताया गया था कि सूती उद्योग में कार्यरत दो तिहाई से भी अधिक मिल-मालिकों, डाइरेक्टरों एवं प्रबन्धकों ने या तो शारीरिक श्रम सम्बन्धी कार्यों से अपने जीवन चर्या को प्रारम्भ किया या निम्न प्रस्थिति के लिपिकीय कार्यों के रूप में।[24]

सामान्य एवं तकनीकी शिक्षा के प्रसार ने आबादी में अपनी प्रस्थिति से ऊपर गतिशील होने के लिए लोगों को प्रेरित किया है। जैसे-जैसे देश का विकास हो जाता है, वैसे ही वैसे अतिविशिष्ट एवं जटिल सामान्य, तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा के प्रसार की आवश्यकता होती है। शिक्षा एवं तकनीकी ज्ञान के फलस्वरूप एक निम्न आर्थिक एवं सामाजिक प्रस्थिति का व्यक्ति समाज का उच्च आर्थिक और सामाजिक स्तर प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार एक व्यक्ति व्यावसायिक और आर्थिक रूप से ऊपर उठ सकता है और अपने को उस वर्ग से निकला हुआ, जिसका वह सदस्य है, पा सकता है और उसकी आर्थिक स्थिति उस व्यक्ति को ऊँची प्रस्थिति में स्थापित कर देता है। ऐसी प्रस्थिति में उस व्यक्ति का झुकाव अभिजातवर्गीय मूल्यों और सुविधाओं की ओर हो जाता है।

REFERENCES

1. Dr. P.K. Bhowmik - "Occupational Mobility and caste structure in Bengal", Indian Publications, 3, British Indian Street, Calcutta-1, pp. 19.
2. N.V. Sumani & Kusum Pradhan- "Occupational Mobility in Poona-city," Between three generations. The Indian Economic review, 2, (1955), pp. 23-26.
3. A. Masson Ollott- "The Caste system of India", American Sociological review (Dec. 1944), p. 655.

   B. J.H. Hutton- "Caste in India" (London : Oxford University Press- 1946), pp. 122-24.

   C. Abbe J. Dubbois- "Hindu Manners, Customs and ceremonies, Oxford Clarendon Press, 1897.
4. G.S. Ghurye : "Caste and class in India" (Popular Book Depot, Bombay 1950), pp. 15-17.
5. Kinglsey Davis : "The population of India and Pakistan", (Princeton University Press 1951), p. 168.
6. Noel Gist- "Caste differentials in South India", American Sociological review, April 1954, pp. 130-134.
7. Edwin D. Driver : "Caste and occupational structure in Central India" Social forces (Oct. 1962), pp. 26-31.
8. M.N. Srinivas : "Religion and Society among the Coorgs of South India", Oxford : Clarendon, 1952, pp. 24-31.
9. S.M. Dubey : Social Mobility among the professions, Popular Prakashan, Bombay, 1975, pp. 78-79.

10. H.A. Gould : "Lucknow Riksha Wallas" : The Social organisation of an occupational category. International journal of comparative sociology (1965), p. 45-46.

11. Lipset & Bendix - Social Mobility in Industrial society Berkeley and Los Angeles (1959), University of California Press, pp. 14.

12. National Opinion Research center- "Jobs and occupations A Popular Evaluation Opinion, News, 9 (1949), pp. 3-13.

13. Alex Inkeles and Peter Rossi-- "National comparison of occupational prestige", American Journal of Sociology, 61 (1956), p. 329-339.

14. RonaldTaft : "The social Grading of occupations in Austrailia", British Journal of Sociology, 4 (1953), pp. 181-188.

15. A. Bee Bertram Huchinson--"The Social Grading of occupations in Brazil, British Journal of Sociology, 8, (1957), p. 176-81

B. Edward A. Tiryakian - The prestige Evaluation of occupations in an under developed country : The Philippines, American Journal of Sociology, 63 (1958), pp. 390-399.

16. S. Ossowski--"Social Mobility Brought about by Social Revolution" (wordking papers eleven submitted to the fourth working conference on social stratification and social Mobility.

International Sociological Association, December, 1957, p. 3.

17. Herman P. Miller--"Income of the American People" (New York) Wiley, 1955), p. 54.

18. Lawrence Thomas-- The occupational structure and education, (New York : Prentice Hall, 1956), p. 39.

19. Richard centers--"The psychology of social classes", Princeton University Press, 1949, p. 86.

20. S.M. Lipset et.al -- The Psychology of Voting : An analysis of Political behaviour.

21. Emily Perrin-- On the contingency between occupation in the case of fathers and sons (Biometrika, 3 (1904), p. 467-469.

22. A.G. Ibi-- Occupational stratification and Mobility in the large urban community : A report of research on social stratification and Mobility in Tokyo II, Japanese sociological review, 4, (1954),pp. 135-149.

23. N.V. Somani & Kusum Pradhan -- Occupational Mobility in Poona city between three generations, The Indian Economic Review, 2 (1955), pp. 23-36.

24. S.J. Chapman and F.J. Marquis-- The recruiting of the Employing classes from the ranks of the wage corners in the cotton Industry, Journal of the Royal Statistical Society, 75, (1912),pp. 293-306.

(ब) क्षेत्र एवं समग्र

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के लिए गाजीपुर जनपद के गांवों का अध्ययन सम्मिलित किया गया है। गाजीपुर जनपद आधुनिक औद्योगिक विकास के दौड़ में बहुत ही पिछड़ा हुआ जनपद है, अत: इस जनपद की आर्थिक गतिविधियाँ प्रमुखरूप से कृषि से ही सम्बन्धित रह गई हैं। गाजीपुर जनपद के निवासियों एवं यहाँ की भौगोलिक स्थिति का परिचय निम्नवत् है --

गाजीपुर जनपद का परिचय

1- गाजीपुर जनपद, वाराणसी मण्डल के पूर्वी छोर का निर्माण करता है। यह जनपद, जौनपुर जनपद के पूर्वी व वाराणसी जनपद के उत्तर-पूर्वी छोर पर $25^{0}19$ व $25^{0}54$ उत्तरी अक्षांश तथा $83^{0}4$ व $83^{0}58$ पूर्वी अक्षांश के बीच स्थित है। यह उत्तर-पश्चिम की ओर आजमगढ़ जनपद से तथा उत्तर-पूर्व की ओर बलिया जनपद से घिरा हुआ है। यह दक्षिण-पूर्व की ओर बिहार प्रान्त के भोजनपुर जनपद से घिरा हुआ है, जिसकी सीमा रेखा का निर्माण कर्मनाशा नदी करती है। गाजीपुर जनपद का क्षेत्रफल भारत के सर्वेयर जनरल के अनुसार 3383 वर्ग कि०मी० है।

2- गाजीपुर जनपद में कुल चार तहसीलें -- गाजीपुर, सैदपुर, जमानियाँ व मुहम्मदाबाद हैं। क्षेत्र एवं आबादी के आधार पर सैदपुर तहसील जनपद की सबसे बड़ी तहसील है जिसका क्षेत्रफल 1104 वर्ग कि०मी० तथा आबादी 4,96,474 है। मुहम्मदाबाद तहसील का क्षेत्रफल 819·2 वर्ग कि०मी० तथा आबादी 3,70,676 है। जमानियाँ का क्षेत्रफल 768·7 वर्ग कि०मी० तथा आबादी 3,15,847 एवं गाजीपुर तहसील का क्षेत्रफल 672·9 वर्ग कि०मी० तथा आबाद 3,48,657 है।

3- गाजीपुर तहसील जनपद का मुख्यालय है जो अन्य जिलों से रेलवे मार्ग एवं सड़क मार्ग द्वारा जुड़ा हुआ है। उत्तर-पूर्व रेलवे की एक रेल लाइन (मीटर-गेज) इस जनपद में छपरा से वाराणसी तक औंरिहार जं0, सैदपुर-भितरी, गाजीपुर, यूसुफपुर व फेफना जं0 होती हुई बिछी हुई है। गाजीपुर के दक्षिण दिशा में गंगा के पार से एक रेल लाइन (पूर्वी रेलवे ब्राड-गेज) ताड़ी घाट से दिलदार नगर जाकर दिल्ली-हावड़ा मुख्य रेल लाइन से जुड़ती है। यह रेल लाइन जनपद की जमानियाँ तहसील के अधिकांश हिस्सो से होकर गुजरती है। इस जिले का सम्बन्ध अन्य जिलों से सड़कों द्वारा भी जुड़ा हुआ है। सड़क मार्ग से यह जनपद बलिया, वाराणसी, जौनपुर, आजमगढ़ व गोरखपुर से जुड़ा हुआ है। गाजीपुर नगर क्षेत्र में गंगापार पक्का पुल बन जाने के कारण यह जनपद बिहार प्रान्त से सीधा जुड़ा हुआ है।

4- सामान्यत: इस जनपद की भूमि उर्वरा व समतल है। गंगा की घाटिय व अन्य नदियों जैसे बेसो, मगई इत्यादि की ही सतह कुछ समतल नहीं है, यहा की भूमि में बलुआ, दोरस, मटियार व दोमट मुख्य प्रकार की मिट्टी पाई जाती है। इसजिले की समतल भूमि का ढलान उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर है। इस जिले की मुख्य नदियों में गंगा सबसे बड़ी नदी है तथा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से गोमती, गांगी, बेसो, मगई तथा छोटी सरयू (टोंस) इस जिले में गंगा की सहायक नदियां हैं।

5- यह जनपद पूर्वी उत्तर-प्रदेश के अन्य जनपदों से मिलता-जुलता है। इस जनपद में ठंढक का मौसम अपेक्षाकृत छोटा तथा गर्मी का मौसम बड़ा व गर्म है। इस जनपद में औसत वर्षा 108·2 से0मी0 है जो औसत वर्षा 102·3 से0मी0 से कुछ अधिक है।

6- गंगा की बाढ़ से ऊपरी पर्त पर मिट्टी पड़ते रहने के कारण इस जनपद की कोई भौगोलिक विशेषताएं नहीं हैं। सतह के कुछ नीचे बहुत ही उपयोगी चूने का पत्थर पाया जाता है, जिसे कंकर कहते हैं। यह सड़कों के निर्माण तथा चूना जलाने के काम आता है।

7- इस जनपद में कहीं कोई जंगल नहीं है। छोटे-छोटे बगीचे जनपद के समस्त भागों में पाये जाते हैं। बगीचों में मुख्य रूप से आम के पेड़ पाये जाते हैं, जो लोगों के लिए उपयोगी खाद्य-पदार्थ की आपूर्ति करते हैं। गूलर, जामुन, महुआ, नीम, सीरस, बरगद, पीपल, सेमल, शीशम, बाँस, इमली तथा कटहल के पेड़ मुख्यरूप से बहुतायत में पाये जाते हैं। पोस्ते के पौधों की खेती भी पर्याप्त मात्रा में की जाती है, लेकिन अब भारत सरकार द्वारा लगाये गये प्रतिबन्ध के कारण इसकी खेती कम हो गई है। केवल अनुमति प्राप्त लोग ही इसकी खेती करते हैं और अपना उत्पाद केन्द्रिय ओपियम फेक्ट्री, गाजीपुर को आपूर्ति करते हैं। यह कारखाना अपने तरह का देश में अकेला कारखाना है। पोस्ते के फूलों से पोस्ते का दाना प्राप्त किया जाता है जिसका उपयोग तेल के उत्पादन तथा गरीब लोगों के लिए खाद्य पदार्थ के रूप में काम आता है।

8- इस जनपद में कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल 77·5 प्रतिशत है, जिसमें मुख्यत: खरीफ और रबी की फसलें बोई जाती हैं। खरीफ की मुख्य फसल चावल, ज्वार व बाजरा है तथा चना, खेसारी, मसूर, जौ और गेहूँ रबी की मुख्य फसलें हैं। केवल गन्ना ही इस जनपद की मुख्य नगदी फसल (कैश-क्राप) है।

जनसंख्या

1- उत्तर-प्रदेश के जनपदों में क्षेत्रफल के आधार पर गाजीपुर जनपद का 50वाँ स्थान है तथा आबादी के दृष्टिकोण से 30वाँ स्थान है। जनगणना से प्राप्त आंकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि इस जनपद की आबादी 1901 से 1931 तक लगातार वृद्धि करती गई है। यह जनसंख्या वृद्धि 1931 से 1941 के वर्षों में सर्वाधिक रही है। सन् 1951 से 1961 के दशक में इस जनपद की जनसंख्या में 1,80,646 की वृद्धि हुई जो जनपद की कुल जनसंख्या का 15·83 प्रतिशत थी। 1961 से 1971 के दशक में जनसंख्या वृद्धि कुल 15·90 प्रतिशत की दर से हुई और लगभग यही वृद्धि दर 1971 से 81 के बीच भी रही है।

2- गाजीपुर जनपद में जनसंख्या घनत्व 457 प्रतिवर्ग कि0मी0 है, जिसमें सैदपुर तहसील का जनसंख्या घनत्व 447, गाजीपुर 518, मुहम्मदाबाद 452 तथा जमानियाँ 411 प्रतिवर्ग कि0मी0 है।

3- इस जनपद में कुल 3375 ग्राम हैं जिसमें 2510 आबाद ग्राम हैं तथा 858 गैर-आबाद ग्राम है। प्रति एक हजार की जनसंख्या में 955 लोग गाँवों में निवास करते हैं तथा औसतन प्रति गाँव में 510 लोग निवास करते हैं। अधिकांश गाँव छोटे-छोटे हैं, जिनकी आबादी 500 व्यक्ति से भी कम है। ऐसे गांवों की संख्या 1723 (लगभग 70·0 प्रतिशत) है। 500 से 2000 तक की आबादी वाले गाँवों का प्रतिशत 27·5 है और

4- बड़े आकार के गाँवों का प्रतिशत जिनकी आबादी 2000 से अधिक है, 3·6 है। इस जनपद में आठ गाँव ऐसे हैं जिनकी आबादी 5000 से अधिक तथा पाँच गाँव ऐसे हैं जिनकी आबादी 10,000 से अधिक है।

4- प्रति एक हजार आबादी में 45 लोग नगरों में निवास करते हैं, गाजीपुर की नगर-पालिका, तृतीय श्रेणी की नगर-पालिका है।

5- इस जनपद में यौन-अनुपात सन् 1921 में प्रति एकहजार पुरुषों में 958 स्त्रियाँ थी। सन् 1931 में 951, 1941 में 972, 1951 में 999, 1961 में 1020 तथा 1971 में 977 हो गई। ग्रामीण क्षेत्रों में यौन-अनुपात औसत 1024 है। यह यौन-अनुपात सैदपुर तहसील में 1045, गाजीपुर तहसील में 1018, मुहम्मदाबाद तहसील में 1002 और जमानियाँ में 1026 है। सभी तहसीलों में ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्रियों की संख्या पुरुषों की अपेक्षा अधिक है। इसका कारण यह है कि अधिकांश पुरुष अपना गाँव छोड़कर रोजी-रोटी की तलाश में नगरों की तरफ प्रवास कर गये हैं।

आर्थिक गतिविधियाँ

1- काम करने वाले लोग - जिले की सम्पूर्ण जनसंख्या का 45·0 प्रतिशत पुरुष तथा 9·56 प्रतिशत स्त्रियाँ काम करने वाली हैं। यह प्रतिशत प्रदेश के 50·76 प्रतिशत कार्य करने वाले पुरुषों की अपेक्षा कम तथा 8·06 प्रतिशत कार्य करने वाली महिलाओं की अपेक्षा अधिक है। कार्य न करने वाले लोग इस जनपद में 55·0 प्रतिशत पुरुष तथा 90·35 प्रतिशत स्त्रियाँ हैं। सन् 1951 की जनगणना के अनुसार कार्य करने वाले लोगों में 78·9 प्रतिशत लोग कृषक व खेतिहर मजदूर थे, 8·6 प्रतिशत लोग गृह कार्य एवं अन्य निर्माण कार्यों में संलग्न थे। व्यापार और वाणिज्य में 10·6 प्रतिशत तथा अन्य सेवाओं में 1·9 प्रतिशत लोग थे। सन् 1981 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या में खेतिहर पुरुष 26·85 प्रतिशत तथा स्त्रियाँ 2·36 प्रतिशत हैं। कृषि

मजदूरों में पुरुष 7·56 प्रतिशत तथा स्त्रियाँ 3·17 प्रतिशत हैं। गृह उद्योग में कुल 1·87 प्रतिशत पुरुष तथा ·46 प्रतिशत स्त्रियां हैं। अन्य सेवाओं जैसे-- व्यापार एवं वाणिज्य तथा नौकरियों में कुल 8·18 प्रतिशत पुरुष तथा ·56 प्रतिशत स्त्रियां हैं।

कार्य न करने वाले लोग - कार्य न करने वाले लोग 55·0 प्रतिशत हैं एवं ऐसे व्यक्ति जो साल-भर में छः माह से कम कार्य करते हैं, इनकी संख्या ·54 प्रतिशत पुरुष तथा 3·10 प्रतिशत स्त्रियां हैं। विगत् 30 वर्षों के आंकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि कार्य करने वाले लोगों का प्रतिशत क्रमशः बढ़ता गया है। उनमें भी कृषि करने वाले एवं कृषि-मजदूरों की संख्या दिन-प्रतिदिन कम होती गई है।

कार्य करने वाले लोगों का एक बड़ा समूह 44·7 प्रतिशत लोग 15 से 35 वर्ष आयु समूह के हैं। 36 से 60 वर्ष की आयु समूह के लोग 36·9 प्रतिशत हैं। 15 वर्ष से कम उम्र के कार्य करने वाले लोगों की संख्या बहुत ही कम 8·2 तथा 60 वर्ष से ऊपर उम्र के कार्य करने वाले लोग केवल 10·2 प्रतिश ही हैं। इस प्रकार निम्न और उच्च आयु वर्ग के कार्य करने वाले लोगों का प्रतिशत बहुत ही कम है।

भाषा

इस जिले के लोगों की मुख्य भाषा हिन्दी है। ग्रामीण आबादी में 93·6 प्रतिशत लोग हिन्दी एवं 6·3 प्रतिशत लोग उर्दू भाषा बोलते हैं और लिखते हैं। नगरीय क्षेत्र की आबादी में हिन्दी 75·3 प्रतिशत तथा उर्दू 23·9 प्रतिशत लोगों द्वारा बोली और लिखी जाती है। अन्य भाषाएं इस जिले में नगण्य है।

धर्म

सम्पूर्ण जिले की जनसंख्या का 91·8 प्रतिशत हिन्दू हैं और 8·2 प्रतिशत मुसलमान हैं। अन्य धर्मों के मानने वाले लोगों में सिख लगभग-300, इसाई-345, बौद्ध- 9 और जैन- 10 हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में 92·4 प्रतिशत हिन्दू तथा 7·6 प्रतिशत मुस्लिम हैं। नगरीय क्षेत्र में 75·1 प्रतिशत हिन्दू तथा 24·4 प्रतिशत मुसलमान निवास करते हैं। अन्य धर्मों के लोगों की संख्या ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्र में अतीव कम है।

साक्षरता

जिले की सम्पूर्ण आबादी में साक्षरता का प्रतिशत 1981 की जन-गणना के अनुसार 27·62 प्रतिशत है, जबकि उत्तर-प्रदेश की औसत साक्षरता 27·16 प्रतिशत है। साक्षरता के आधार पर इस जिले का स्थान प्रदेश में 22वाँ हैं। सन् 1951 में इस जनपद में पुरुषों की साक्षरता 18·8 प्रतिशत तथा स्त्रियों की 3·7 प्रतिशत थी। सन् 1961 में बढ़कर पुरुषों की साक्षरता 28·9 प्रतिशत तथा स्त्रियों की 7·2 प्रतिशत हो गई। सन् 1981 में इस जनपद की साक्षरता पुरुषों की 41·45 प्रतिशत तथा स्त्रियों की 13·63 प्रतिशत हो गई। प्रत्येक दशक में साक्षरता का प्रतिशत क्रमशः बढ़ता ही गया है।

नगरीय क्षेत्र की साक्षरता 46·97 प्रतिशत की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों की साक्षरता 25·96 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुषों की साक्षरता 39·82 प्रतिशत तथा स्त्रियों की 12·04 प्रतिशत हैं। नगरीय क्षेत्र में पुरुषों की साक्षरता 59·49 प्रतिशत और स्त्रियों की 33·07 प्रतिशत है।

शिक्षण संस्थाएं

गाजीपुर जनपद में कुल 236 प्राथमिक विद्यालय हैं। हाईस्कूल एवं इण्टरमीडिएट कालेजों की संख्या 85 है। दो स्नातकोत्तर महाविद्यालय जिनमें एक लड़कियों के लिए तथा दूसरा लड़के एवं लड़कियों दोनों के लिए है। स्नातक महाविद्यालयों की संख्या 5 है।

कार्यशालाएँ एवं कारखानें

जिले में कुल पंजीकृत लघु उद्योगों की संख्या 1200 तथा गैर-पंजीकृत कार्यशालाएं 324 हैं। बड़े कारखानों की संख्या 4 है जो सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत् संचालित हैं।

स्रोत 1- गाजीपुर गजेटियर

2- जनगणना हस्त पुस्तका (ब) 1961

3- जनगणना पुस्तिका 1981

द्वितीय अध्याय

अनुसन्धान विधियाँ एवं उपकरण

अनुसन्धान विधियाँ एवं उपकरण

अध्ययन की समस्या

वर्तमान अध्ययन पूर्वी उत्तर-प्रदेश के गाजीपुर जनपद में स्थित शेरपुर, गुण्डर एवं बाराचवर गाँवों में निवास करने वाले विभिन्न जातियों ब्राह्मण, भूमिहार, क्षत्रिय, पिछड़ी जातियों (यादव, कुर्मी, लोहार, बनिया और राजभर) तथा अनुसूचित जातियों के लोगों पर सम्पन्न किया गया है। जैसाकि पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है, पूर्वी उत्तर-प्रदेश के गाजीपुर जनपद के इन गाँवों की विगत् दशकों में न केवल जनसंख्या में वृद्धि हुई है, बल्कि इनकी परम्परागत् व्यावसायिक संरचना में भी परिवर्तन हुआ है। इन गाँवों के लोग पहले अधिकांश मात्रा में अपने परम्परागत् जातिगत व्यवसायों से ही सम्बद्ध थे, परन्तु अब इन गाँवों में शिक्षा के बढ़ते प्रभाव तथा व्यापारिक गतिविधियों में भी वृद्धि हुई है। भारत में जैसे-जैसे औद्योगिकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया में वृद्धि हुई है, वैसे-वैसे पूर्वी उत्तर-प्रदेश के गाँवों में भी औद्योगिक एवं नगरीय संस्कृति का विकास हुआ है, जिसके फलस्वरूप अधिकांश लोगों ने अपने परम्परागत् जातिगत् पेशों से इतर हटकर नये-नये व्यवसायों की ओर उन्मुख हुए हैं। गाँवों में स्थित लोगों की सामाजिक परिवर्तन की दिशा का निर्धारण करने वाला एक आवश्यक तत्व व्यावसायिक गतिशीलता का अध्ययन है।

गाँवों में परिवर्तन का अध्ययन करने के लिए हमें सातत्य और परिवर्तन की अवधारणा अपनानी पड़ेगी। सातत्य और परिवर्तन एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। सातत्य और परिवर्तन (कान्टीन्यूटी एण्ड चेन्ज) के

सन्दर्भ में मैकाइवर ने स्पष्ट किया है कि "जब हम परिवर्तन का प्रत्यक्षीकरण करते हैं तो सातत्य सामने आता है और जब सातत्य का प्रत्यक्षीकरण करते हैं तो परिवर्तन को समझते हैं"[1]। बिना एक के हम दूसरे को नहीं समझ सकते हैं। व्यावसायिक परिवर्तन शून्य में नहीं होता। पहले से विद्यमान परिस्थिति और सामाजिक घटनाओं के सातत्य में होता है। वर्तमान परिस्थितियों की तुलना यदि हम सातत्य से करें तो परिवर्तन का पता चलता है।

प्रस्तुत अध्ययन में गाँवों में रहने वाले लोगों के व्यावसायिक परिवर्तन की व्याख्या की गई है। नई परम्पराओं एवं संस्थाओं में सब कुछ नया नहीं होता, नवीनता में प्राचीनता का समावेश होता है। प्रस्तुत अध्ययन में मुख्य रूप से यही प्रयास किया गया है कि व्यावसायिक परिवर्तन के क्षेत्रों में जो नवीनताएँ सामने आ रही है, उनका उद्घाटन हो।

शोध-प्ररचना

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में "पूर्वी उत्तर- प्रदेश के ग्रामीण अंचलों में व्यावसायिक गतिशीलता की समस्या का अध्ययन किया गया है। गतिशीलता या परिवर्तन से तात्पर्य आधुनिक औद्योगीकरण के युग में गाँवों के बदलते स्वरूप को देखना है, इस अध्ययन में गाँव को एक इकाई मान लिया गया है। इन गाँवों में रहने वाले लोगों का सामाजिक जीवन, पेशा, परिवार, जाति-व्यवस्था आदि की जानकारी तथा आधुनिक औद्योगीकरण के प्रभाव के कारण उस गाँव के आदर्श प्रारूप में आज कितना परिवर्तन हो गया है।

उपकल्पनाएं एवं अध्ययन उद्देश्य

इस अध्ययन में कुछ उपकल्पनाएं प्रस्तुत की गई हैं, जो विभिन्न बिन्दुओं पर अध्ययन का एक खाका (फ्रेम वर्क) प्रस्तुत करती हैं। विभिन्न

अध्यायों में इन्हीं उपकल्पनाओं में उत्पन्न समस्याओं का अध्ययन व निदान प्रस्तुत किया गया है --

1- वर्तमान समय में तकनीकी विकास और औद्योगीकरण के परिणाम स्वरूप परम्परागत् हिन्दू समाज में व्यावसायिक परिवर्तन हो रहा है। अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि ग्रामींण अंचलों में औद्योगीकरण का क्या प्रभाव पड़ा है ?

2- अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि ग्रामीण लोगों की शिक्षा और उनका व्यवसाय क्या है ?

3- ग्रामीण निवासियों के उद्योग और व्यापार के अध्ययन से यह ज्ञात करना है कि वे अपने व्यवसाय से सन्तुष्ट हैं या नहीं ? उनके व्यवसाय में क्या परिवर्तन हो रहा है, और उनके व्यवसाय का क्या उद्देश्य है ?

4- क्या व्यावसायिक परिवर्तन की गति हिन्दू समाज की सभी जातियों में समान रूप से हो रहा है ?

5- इस अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि आधुनिक समाज के शिक्षित वर्ग के लोगों में व्यावसायिक परिवर्तन की प्रवृत्ति कैसी है ?

6- इस अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि व्यावसायिक परिवर्तन के युग में लोगों का विवाह के प्रति दृष्टिकोण क्या है ?

7- अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों की आवासीय सुविधाएँ कैसी हैं ?

8- औद्योगीकरण, आधुनिक शिक्षा और तकनीकी प्रगति के युग में लोगों के धार्मिक विश्वास में क्या परिवर्तन हुआ है। इस अध्ययन

से यह भी ज्ञात किया जायगा कि व्यावसायिक परिवर्तन का प्रभाव क्या लोगों की धार्मिक भावनाओं पर पड़ता है ?

9- इस अध्ययन द्वारा यह भी ज्ञात किया जाएगा कि ग्रामीण निवासियों में राजनैतिक चेतना किस स्तर पर है।

निदर्शन (सैम्पलिंग)

गाजीपुर जनपद में स्थित शेरपुर एवं गुणउर गाँव में हिन्दुओं की कई जातियों के लोग निवास करते हैं। बाराचवर क्षत्रिय बहुल गाँव है। हिन्दुओं की अनेकों जातियों में से मुख्यत: पाँच जातियों के लोगों का अध्ययन के लिए चुनाव किया गया है। ये हैं -- ब्राह्मण, भूमिहार, क्षत्रिय, पिछड़ी जाति तथा अनुसूचित जाति। पिछड़ी जातियों में केवल यादव, कुर्मी, लोहार, बनिया तथा राजभर एवं अनुसूचित जातियों में से केवल हरिजनों को लिया गया है। अन्य हिन्दू जाति के लोगों की संख्या लगभग उपेक्षणीय होने के कारण उन्हें अध्ययन में सम्मिलित नहीं किया गया है।

अपने निदर्शन को प्रतिनिधि निदर्शन बनाने हेतु अनुसन्धानकर्ता को मल्टीस्टेज सैम्पलिंग तथा I स्ट्रेटीफाइड सैम्पलिंग का अनुसरण करना पड़ा है। सम्पूर्ण समग्र का नमूना चार स्टेज में पूरा किया गया है।

1- प्रथम स्तर पर गाँवों में रहने वाली आबादी में से केवल हिन्दू जाति का चुनाव करना पड़ा।

2- दूसरे स्तर पर हमें अपने निदर्शन के लिए इन जातियों के लोगों के आकार को सुनिश्चित करना पड़ा। इस प्रक्रिया में गाजीपुर जनपद के मुहम्मदाबाद तहसील में स्थित तीन गाँवों शेरेपुर, गुणउर एवं बाराचवर के लोगों को अध्ययन के लिए चुना गया, क्योंकि

इन गाँवों में हिन्दुओं की सभी जातियों के लोग पर्याप्त संख्या में उपलब्ध थे।

3- तृतीय स्तर पर अनुसन्धानकर्ता को अध्ययन से सम्बन्धित विभिन्न हिन्दू जातियों में से केवल उन्हीं जातियों का चुनाव करना पड़ा जिनकी जनसंख्या अधिक थी। उन हिन्दू जातियों को अध्ययन से बाहर रखा गया जिनकी जनसंख्या बहुत कम थी, जैसे-- नोनिया, धरिकार, धोबी और खट्टिक इत्यादि, और अन्त में पाँच हिन्दू जातियों का अध्ययन के लिए चुनाव किया गया।

4- इस अध्ययन के सन्दर्भ में अन्तिम और महत्वपूर्ण समस्या साक्षात्कार के लिए उत्तरदाताओं का चुनाव करना था। अध्ययन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए इन गाँवों की सम्पूर्ण आबादी के लगभग 5·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं का चयन किया गया है।

स्तरीकृत निदर्शन (स्ट्रेटीफाइड सेम्पलिंग)

विभिन्न जाति के लोगों की संख्या को ध्यान में रखते हुए बहुल स्तरीय दैव निदर्शन (मल्टीस्टेज रैन्डम सेम्पलिंग) के दोषों को दूर करने हेतु अनुसन्धानकर्ता ने स्तरीकृत निदर्शन (स्ट्रेटीफाइड सेम्पलिंग) का अनुसरण करने का निश्चय किया। कार्य करने वाले लोगों के समूह (आकूपेशनल ग्रुप्स) को पाँच श्रेणियों में स्तरीकृत किया --(1) ब्राह्मण, (2) भूमिहार, (3) क्षत्रिय, (4) पिछड़ी जाति और (5) अनुसूचित जाति। इन विभिन्न जातियों के बड़े समूह में से प्रत्येक जाति के केवल 100-100 लोगों को रैन्डम बेसिस पर साक्षात्कार के लिए चुना। जातिगत् आधार पर चुने गये

उत्तरदाताओं का आकार निम्न प्रकार से है --

ब्राह्मण	-	100
भूमिहार	-	100
क्षत्रिय	-	100
पिछड़ी जाति	-	100
अनुसूचित जाति	-	100

इस सन्दर्भ में लिंग अनुपात का स्पष्टीकरण आवश्यक प्रतीत होता है। ग्रामीण अंचलों में निवास करने वाली करीब-करीब सभी महिलाएं अपने-अपने घरेलू कार्यों में ही संलग्न हैं। परन्तु महिलाओं की व्यावसायिक भावनाओं की खोज करने हेतु अनुसन्धानकर्ता ने दैव आधार पर इण्टरमीडिएट कालेज में पढ़ने वाली युवा छात्राओं को साक्षात्कार के लिए चुना।

तथ्य संकलन

प्रस्तुत अध्ययन मुख्य रूप से प्राथमिक आँकड़ों पर आधारित है, जिसे साक्षात्कार अनुसूची की सहायता से इक्ट्ठा किया गया है। साक्षात्कार अनुसूची में साक्षात्कार और सहभागी अवलोकन (पार्टीसिपेन्ट आब्जरवेशन) इन दोनों तकनीकों का प्रयोग किया गया है। अनुसन्धानकर्ता को ग्रामीण अंचल में निवास करने के कारण ग्रामीण लोगों से आत्मीय सम्बन्ध होने के कारण ग्रामीण लोगों का अनुसन्धानकर्ता को भरपूर सहयोग मिला।

साक्षात्कार अनुसूची के पाँच भाग किये गये हैं। पहले भाग में सामान्य सूचनाएँ हैं, जिसमें मुख्य रूप से उत्तरदाता का नाम और पता लिखा गया है। द्वितीय खण्ड में उत्तरदाताओं की व्यक्तिगत सूचनाएँ हैं, जैसे-- परिवार, शिक्षा और व्यवसाय तथा वैवाहिक स्थिति इत्यादि।

तृतीय खण्ड में उत्तरदाताओं की प्रस्थिति से सम्बन्धित प्रश्न हैं। चतुर्थ खण्ड में उनकी प्रवृत्तियों एवं अभिरुचियों की पड़ताल से सम्बन्धित प्रश्न हैं तथा पाँचवें खण्ड में उनकी धार्मिक एवं आध्यात्मिक अभिरुचियों से सम्बन्धित प्रश्न हैं। इसके साथ ही उत्तर की सुविधा के लिए प्रश्नों के साथ हाँ/नहीं लिख दिये गये हैं। कुछ प्रश्नों के सुविधा के लिए संरक्षित उत्तर लिख दिये गये हैं, जैसे-- वैवाहिक स्थिति के अन्तर्गत विवाहित/अविवाहित/विधवा/विधुर/परित्यक्त/परित्यक्ता इत्यादि।

ग्रामीण आबादी अधिकांशत: अशिक्षितों की है। अनुसन्धान कार्य के लिए साक्षात्कार का उन्हें कोई महत्त्व मालूम न होने के कारण कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जब उत्तरदाताओं को अनुसन्धान कार्य के लिए साक्षात्कार की उपयोगिता समझाई गई तब वे खुलकर नि:संकोच उत्तर देने लगे। एक कठिनाई यह भी थी कि साक्षात्कार अनुसूची में पूछे गये अधिकांश प्रश्नों को वे समझ नहीं पाये। जब उन प्रश्नों का विश्लेषण करके उन्हें समझाया गया तब उत्तरदाताओं ने उन प्रश्नों का सही उत्तर दिया। कुछ लोग ऐसे भी मिले जिन्हें उचित और स्पष्ट उत्तर देने में कठिनाई का अनुभव हुआ। वे यह निश्चित नहीं कर पाये कि इस प्रश्न का मैं उचित उत्तर क्या दूँ और वे हिचकिचाहट महसूस करते हुए कुछ प्रश्नों के स्पष्ट उत्तर दिये। कुछ उत्तरदाता साक्षात्कार अनुसूची के प्रश्नों का उत्तर देने में ही आना-कानी करने लगे उन्हें जब इसके महत्व को समझाया गया तब उन्होंने अपना उत्तर दिया।

जिन उत्तरदाताओं के उत्तर स्पष्ट नहीं थे उन लोगों को कई बार समझाकर स्पष्ट उत्तर प्राप्त किया गया। इस प्रकार अनुसूची भरवाये जाने के पश्चात् बड़े ध्यानपूर्वक सभी निदर्शन का निरीक्षण किया गया तथा

निष्कर्ष निकाले गये।

द्वितीयक आँकड़ों का संकलन जो इन गाँवों की आबादी और उनके भौगोलिक स्थिति से सम्बद्ध था उसका संकलन जिला जनगणना रिपोर्ट, जिला गजेटियर तथा अन्य सरकारी रिकार्डों से प्राप्त किया गया।

प्रकाशन, वर्गीकरण और सारणीयन

साक्षात्कार अनुसूची भर लेने के पश्चात् आँकड़ों का सावधानीपूर्वक छटनी कर लिया गया। साक्षात्कार अनुसूची की जाँच कर ली गई। कुछ मामलों में ऐसा देखा गया है कि सूचना सही नहीं थी, खासतौर से पिता और बाबा के व्यवसाय के सन्दर्भ में। जहाँ कहीं इस प्रकार की कमियों का सामना हुआ, वहाँ अनुसन्धानकर्ता ने उन्हें सही करने का हर सम्भव प्रयास किया है, यहाँ तक कि सूचनाओं के कुछ अंश गलत हो सकते हैं, परन्तु यहाँ पर ऐसी कोई पूर्ण प्रमाणित विधि नहीं है, जिससे उसकी जाँच की जाय। उन्हें छोड़ देने के अतिरिक्त हमारे पास कोई दूसरा विकल्प नहीं है। सब कुछ के बावजूद हमें उत्तरदाताओं के उत्तर पर ही आश्रित होना पड़ा।

दूसरा चरण आँकड़ों के सारणीयन का है। जैसाकि एल०एन० कोन्नर ने बताया है कि "वर्गीकरण वस्तुओं को समूहों में या वर्गों में क्रमबद्ध करना है।[2] आकड़ों के सारणीयन के सन्दर्भ में व्यवसाय को कई वर्गों में बाँटा गया है, जैसे--

1- हाथ सम्बन्धी कार्य (मैनुअल वर्क्स)- कृषक तथा कृषि मजदूर ।

2- बिना हाथ सम्बन्धी कार्य (नान मैनुअल) - व्यापार, दुकानदारी इत्यादि।

3- सफेद पोश कार्य (ह्वाइट कलर वर्क्स) - नौकरी इत्यादि ।

साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण इस प्रकार किया गया था कि अधिकांश सम्भव उत्तरों को आसानी से वर्गीकृत किया जा सके। फिर आँकड़ों का वर्गीकरण उत्तरदाताओं के परिवार के आकार, उम्र इत्यादि के अनुसार किया गया। सारणीयन करने के दौरान आँकड़ों को क्रमबद्ध और वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने हेतु प्रत्येक सम्भव सावधानियों का अवलोकन कर लिया गया है, ताकि विचार करने के लिए ली गई समस्याओं की व्याख्या आसानी से पर्याप्त रूप में हो सके।

इस अध्ययन को प्रस्तुत करने का एक विशेष प्रयोजन "तुलनात्मक रूप से लोगों के आन्त:पीढ़ी (इन्ट्रा जनरेशन) तथा अन्त:पीढ़ी (इन्टर-जनरेशन) व्यावसायिक गतिशीलता" से है। जैसाकि मिलर ने बताया है कि "अन्त:पीढ़ी गतिशीलता के आँकड़े विभिन्न प्रकार से संगठित और विश्लेषित किये जा सकते हैं"।[3] मिलर ने अन्त:पीढ़ी गतिशीलता के आँकड़ों को दो विधियों द्वारा विश्लेषित करने का सुझाव दिया है। (अ) अन्तर्वाह विश्लेषण (इनफ्लो एनालिसिस) और (ब) वर्हिवाह विश्लेषण (आउटफ्लो एनालिसिस)। अधिकांश अन्तर्वाह विश्लेषण केवल दो पीढ़ियों से ही सम्बद्ध हैं (पिता और पुत्र) लेकिन यह अध्ययन तीन पीढ़ियों (बाबा, पिता और स्वयं उत्तरदाता) के विश्लेषण पर आधारित है।

व्यावसायिक गतिशीलता पर आँकड़ों को प्राप्त करने हेतु अनुसन्धानकर्ता द्वारा दो विधियों का प्रयोग किया गया है --

1- प्रमाण-प्रलेख और अभिलेख (डाकूमेन्ट्स एण्ड रिकार्ड)

2- साक्षात्कार (इन्टरविव)

प्रमाण-प्रलेख और अभिलेख

अधिकांश देशों में अनुसन्धान के आँकड़ों के लिए डाकूमेन्टरी रिकार्ड्स का अनुसरण करना सम्भव है, जैसे-- जन्म-मृत्यु अभिलेख या ऐसे अभिलेख जो शादियों से सम्बन्धित हैं। कालेज या व्यवसाय करने के दिनों में सरकार द्वारा तैयार कराये जाते हैं, परन्तु भारत में इस प्रकार के विधिवत् आँकड़े प्राप्त नहीं हो पाते, फलत: उत्तरदाताओं की मनोवृत्तियों के अध्ययन के लिए इस विधि का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

साक्षात्कार (इन्टरव्यू)

यह आँकड़ों को संग्रह करने का सीधा तरीका है, खासतौर से उत्तरदाताओं के विश्वास और उनकी मनोवृत्तियों को जानने के सन्दर्भ में। अनुसन्धानकर्ता ने भी इसी विधि का उपयोग आँकड़ों के संग्रह के लिए किया है। अन्त:पीढ़ी गतिशीलता के अध्ययन के लिए उत्तरदाताओं से उनके पिता, बाबा और उनके स्वयं के पेशे के सन्दर्भ में प्रश्न पूछे गये हैं। इस प्रकार हम केवल उत्तरदाताओं के उत्तरों से ही अपने आँकड़े प्राप्त करने के लिए बाध्य हैं। कभी-कभी उत्तरदाताओं के उत्तर की प्रामाणिकता ही प्रश्न सूचक हो जाती है। खासतौर से भारत में जहाँ लोग अपनी परम्परागत प्रस्थिति तथा पारिवारिक प्रतिष्ठा के प्रति बहुत अधिक सावधानी बरतते हैं, पिता या बाबा के व्यवसाय के सन्दर्भ में सही सूचना प्राप्त न होने की अधिकांश सम्भावनाएँ विद्यमान रह सकती हैं, जिन्हें पूर्णतया दूर नहीं किया जा सकता, फिर भी हर सम्भव प्रयास किये गये हैं, ताकि इस प्रकार की त्रुटियाँ कम से कम हो सकें।

समस्याएं और कठिनाइयां

प्रस्तुत अध्ययन सम्पन्न करने में अनुसन्धानकर्ता को बहुत सारी कठिनाइयों एवं समस्याओं का सामना करना पड़ा है। पहली कठिनाई निदर्शन की थी। सम्पूर्ण ग्रामीण जन समूह का एक निश्चित अवधि में अध्ययन सम्भव नहीं था, अतः हमने प्रतिनिधि स्वरूप कुछ थोड़े से लोगों को ही प्रतिनिधि निदर्शन हेतु चुना। निदर्शन की तकनीक निःसन्देह बहुत सही प्रमाणित हुई, परन्तु यह नहीं भूल जाना चाहिए कि इस तकनीक की भी अपनी कुछ सीमाएं हैं। सम्पूर्ण आबादी का कितना प्रतिशत निदर्शन के तौर पर लिया जाय, इस सन्दर्भ में कोई स्पष्ट और निश्चित नियम नहीं है। अतः हमने केवल सम्पूर्ण आबादी 5.0 प्रतिशत ही उत्तरदाताओं का चयन निदर्शन प्रतिनिधि स्वरूप चुना। दूसरी कठिनाई तुलनात्मक रूप से एक ही समान प्रस्थिति और प्रतिष्ठा वाले व्यवसायों के वर्गीकरण के समय प्रस्तुत हुई ।

REFERENCES

1. MacIver - Social causation, p. 7.

2. L.N. Connor : Statistics in Theory and Practice, 1926, p. 18.

3. S.M. Miller : Comparative Social Mobility : Current Sociology, Vol. IX, No. 1, 1960, p. 5.

तृतीय अध्याय

तथ्यों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

तथ्यों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

उत्तरदाता और उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि

मनुष्य के व्यक्तित्व के निर्माण, उसके विचारों एवं क्रिया-कलापों पर सामाजिक वातावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। हमारे उत्तरदाता विभिन्न प्रकार के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के हैं और साथ ही साथ वे विभिन्न आयु-समूहों के भी हैं। उनकी आय एवं परिवार का आकार भी भिन्न-भिन्न हैं। मानव जाति की प्रवृत्तियों एवं व्यवहारों की उचित जाँच-पड़ताल और खोज के लिए यह आवश्यक है कि उसके सामाजिक पृष्ठभूमि को भलीभाँति समझ लिया जाय।

प्रस्तुत अध्ययन में हिन्दू समुदाय की विभिन्न जातियों को सम्मिलित किया गया है। ये निम्न हैं --

क्रमसंख्या	जाति	संख्या
1-	ब्राह्मण	100
2-	भूमिहार	100
3-	क्षत्रिय	100
4-	पिछड़ी जातियां	100
5-	अनुसूचित जातियां	100

लिंग अनुपात

कुल 500 उत्तरदाताओं में से पुरुषों की संख्या 473 तथा महिलाओं की संख्या 27 है। यदि जातिगत आधार पर पुरुषों एवं महिलाओं के लिंग-अनुपात को देखा जाय तो ब्राह्मण जाति के कुल 100 उत्तरदाताओं में पुरुषों की संख्या 88 तथा महिलाओं की संख्या 12 है। इसी प्रकार भूमिहार जाति के कुल 100 उत्तरदाताओं में से पुरुषों की संख्या 85 तथा स्त्रियों की संख्या 15 है। क्षत्रिय, पिछड़ी जातियों एवं अनुसूचित जाति के कुल उत्तरदाता पुरुष ही हैं।

आयु-समूह

प्राप्त आकड़ों का अध्ययन करने से यह पता चलता है कि कुल 500 उत्तरदाताओं में से 143 पुरुष 20 से 29 वर्ष की आयु-समूह के अन्तर्गत हैं। 30 से 39 वर्ष की आयु-समूह में कुल 100 पुरुष तथा 2 स्त्रियां हैं। 20 से 29 वर्ष की आयु-समूह के अन्तर्गत कुल 25 महिलाएं हैं। 40 से 49 वर्ष आयु-समूह में 91 पुरुष, 50 से 59 वर्ष आयु-समूह में कुल 78 पुरुष तथा 60 वर्ष से ऊपर के आयु-समूह में कुल 61 पुरुष हैं। आयु-समूह 40-49, 50-59 एवं 60 वर्ष से ऊपर स्त्रियां नहीं हैं।

सारिणी संख्या 1 से यह स्पष्ट है कि सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 270 उत्तरदाता 40 वर्ष से कम उम्र के हैं, जबकि 230 उत्तरदाता 40 वर्ष से ऊपर उम्र के हैं। महिला उत्तरदाताओं में सभी की सभी (27) 40 वर्ष से कम उम्र की हैं। 40 वर्ष से ऊपर उम्र की एक भी महिला उत्तर-दाता नहीं है। पुरुष उत्तरदाताओं में से 243 उत्तरदाता 40 वर्ष से कम उम्र के हैं और 230 पुरुष उत्तरदाता 40 वर्ष से अधिक उम्र के हैं।

सारिणी संख्या 1 : उत्तरदाताओं की आयु और लिंग

क्रम संख्या / जाति	पूर्ण योग	लिंग		आयु समूह (वर्षों में) 20 से 29		30 से 39		40 से 49		50 से 59		60 से ऊपर		
		पुरुष	स्त्रियां	पुरुष	स्त्रियां	पुरुष	स्त्रियां	पुरुष	स्त्रियां	पुरुष	स्त्रियां	पुरुष	स्त्रियां	मध्यमान आयु
1-ब्राह्मण	100	88	12	28	10	26	2	16	-	8	-	10	-	36·90
2-भूमिहार	100	85	15	36	15	16	-	9	-	14	-	10	-	
3-क्षत्रिय	100	100	-	15	-	24	-	26	-	19	-	16	-	
4-मध्यवर्गीय जातियां (यादव, कुर्मी, राजभर, लोहार, कोहार, गोड़ इत्यादि) या पिछड़ी जातियां	100	100	-	33	-	27	-	17	-	12	-	11	-	
5-अनुसूचित जातियां	100	100	-	31	-	7	-	23	-	25	-	14	-	
योग	500	473	27	143	25	100	2	91	-	78	-	61	-	
		94·6%	5·4%	28·6%	5%	20%	·4%	18·2%		15·6%		12·2%		

यदि जातिगत आधार पर उम्र का बटवारा किया जाय तो यह स्पष्ट है कि ब्राह्मण जाति में 28 पुरुष तथा 10 महिलाएं आयु-समूह 20 से 29 वर्ष के अन्तर्गत हैं। 26 पुरुष तथा 2 महिलाएं 30 से 39 वर्ष आयु समूह तथा 16 पुरुष 40 से 49 वर्ष आयु-समूह, 8 पुरुष 50 से 59 वर्ष आयु-समूह तथा 10 पुरुष 60 वर्ष से ऊपर की आयु-समूह में हैं। भूमिहार जाति में 36 पुरुष तथा 15 महिलाएं 20 से 29 वर्ष आयु-समूह के अन्तर्गत हैं। केवल 16 पुरुष 30 से 39 वर्ष आयु-समूह, 9 पुरुष 40 से 49 वर्ष आयु-समूह, 14 पुरुष 50 से 59 वर्ष आयु-समूह तथा 10 पुरुष 60 वर्ष से ऊपर की आयु-समूह के अन्तर्गत हैं। क्षत्रिय जाति में 15 पुरुष 20 से 29, 24 पुरुष 30 से 39, 26 पुरुष 40 से 49, 19 पुरुष 50 से 59 तथा 16 पुरुष 60 वर्ष से ऊपर की आयु-समूह के अन्तर्गत पिछड़ी जातियों में 33 पुरुष 20-29, 27 पुरुष 30 से 39, 17 पुरुष 40 से 49, 12 पुरुष 50 से 59 तथा 11 पुरुष 60 वर्ष से ऊपर की आयु-समूह के अन्तर्गत हैं। अनुसूचित जाति में 31 पुरुष 20 से 29, 7 पुरुष 30 से 39, 23 पुरुष 40 से 49, 25 पुरुष 50 से 59 तथा 14 पुरुष 60 वर्ष से ऊपर आयु-समूह के अन्तर्गत हैं।

उत्तरदाताओं का एक बड़ा समूह 143 आयु-समूह 20 से 29 वर्ष के अन्तर्गत हैं। दूसरा बड़ा उत्तरदाताओं का समूह आयु-समूह 30 से 39 के अन्तर्गत है। क्षत्रिय जाति के उत्तरदाताओं का सबसे बड़ा समूह 40 से 49 वर्ष आयु-समूह के अन्तर्गत है।

<u>वैवाहिक स्थिति</u>

कुल 500 उत्तरदाताओं में से 372 विवाहित हैं। इन विवाहित उत्तरदाताओं में 370 पुरुष तथा 2 स्त्रियां हैं। अविवाहित उत्तरदाताओं की संख्या 120 है, जिनमें से 95 पुरुष तथा 25 महिलाएं हैं। कुल 500

उत्तरदाताओं में से केवल 15 पुरुष विधुर हैं तथा केवल 1 पुरुष तलाक शुदा हैं। विधवा स्त्रियाँ और तलाकशुदा स्त्रियां उत्तरदाताओं में नहीं हैं। उत्तरदाताओं की विभिन्न जातियों में विवाहित उत्तरदाताओं की संख्या लगभग 70-80 प्रतिशत के मध्य है। केवल भूमिहार जाति के विवाहित उत्तरदाताओं की संख्या 63 प्रतिशत ही है। ब्राह्मण जातिय में विवाहित उत्तरदाताओं की संख्या 74 है, जिसमें दो महिलाएँ भी हैं। भूमिहार जाति में कुल विवाहित उत्तरदाता 63, क्षत्रिय जाति में सबसे अधिक विवाहित उत्तरदाताओं की संख्या 81 है। पिछड़ी जाति के विवाहित उत्तरदाताओं की संख्या 79, तथा पिछड़ी जाति में विवाहित उत्तरदाताओं की संख्या 75 है। इसी प्रकार ब्राह्मण जाति में अविवाहित उत्तरदाताओं की संख्या 24 है, जिनमें 14 पुरुष तथा 10 महिलाएं हैं। सबसे अधिक अविवाहित उत्तरदाताओं की संख्या भूमिहार जाति में है। यह संख्या 33 है। क्षत्रिय जाति में 13, पिछड़ी जातियों में 19, तथा अनुसूचित जाति में कुल 21 अविवाहित उत्तरदाता हैं। कुल 15 विधुर उत्तरदाताओं में ब्राह्मण जाति के2, भूमिहार जाति के 3, क्षत्रिय जाति के 4, पिछड़ी जातियों के 2 तथा अनुसूचित जाति के 4 विधुर उत्तरदाता है। समस्त उत्तरदाताओं में केवल एक ही पुरुष तलाकशुदा है।

सारिणी संख्या 2 को देखने से यह निष्कर्ष निकलता है कि आज भी परम्परागत भारतीय ग्रामीण जीवन में वैवाहिक बन्धन ढीले नहीं हुए हैं, जबकि भारतीय गाँवों पर भी पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव कुछ न कुछ मात्रा में अवश्य देखने को मिलता है। समस्त 500 उत्तरदाताओं में से केवल एक ही व्यक्ति तलाकशुदा है, और वह भी कानूनी स्तर पर तलाकशुदा नहीं है।

सारिणी संख्या 2 : वैवाहिक स्थिति

क्रमसंख्या जाति	योग		अविवाहित		विवाहित		विधवा/विधुर		तलाकशुदा	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
1- ब्राह्मण	88	12	14	10	72	2	2	-	-	-
2- भूमिहार	85	15	18	15	63	-	3	-	1	-
3- क्षत्रिय	100	-	13	-	81	-	4	-	-	-
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	-	19	-	79	-	2	-	-	-
5- अनुसूचित जातियां	100	-	21	-	75	-	4	-	-	-
योग	473	27	95	25	370	2	15	-	1	-

परिवार का आकार

सारिणी संख्या 3 से यह स्पष्ट है कि 63·2 प्रतिशत संयुक्त परिवार हैं तथा 36·8 प्रतिशत एकांकी परिवार हैं। ग्रामीण समुदाय के संयुक्त और एकांकी परिवारों का आकार ध्यान देने योग्य तथ्य है। ग्रामीण समुदाय के एकांकी परिवार में रहने वाले लोगों में 1-3 सदस्य संख्या के 3·4 प्रतिशत परिवार हैं। 4-6 सदस्य संख्या के 18·6 प्रतिशत, 7-9 सदस्य संख्या के कुल 14·8 प्रतिशत परिवार हैं। 10 से ऊपर सदस्य संख्या का एकांकी परिवार कोई नहीं है। संयुक्त परिवारों में 1-5 सदस्य संख्या वाले कुल 7·4 प्रतिशत परिवार हैं। 6-10 सदस्य संख्या वाले सर्वाधिक 30·8 प्रतिशत तथा 11 से ऊपर सदस्य संख्या वाले कुल परिवारों की संख्या 25·0 प्रतिशत है।

एकांकी परिवारों की सबसे अधिक संख्या अनुसूचित जातियों में 52·0 प्रतिशत है, जबकि ब्राह्मण जाति में एकांकी परिवारों की सबसे कम संख्या केवल 30·0 प्रतिशत है। भूमिहार, क्षत्रिय एवं पिछड़ी जातियों में एकांकी परिवारों की संख्या लगभग समान है। संयुक्त परिवारों की संख्या सबसे अधिक 70·0 प्रतिशत ब्राह्मण जाति में हैं, लेकिन अनुसूचित जाति में संयुक्त परिवारों की संख्या सबसे कम केवल 48·0 प्रतिशत है। भूमिहार, क्षत्रिय तथा पिछड़ीवर्गीय जातियों में संयुक्त परिवार की संख्या लगभग समान है।

सारिणी संख्या 3 : परिवार की प्रकृति एवं उसका आकार

क्रमसंख्या जाति		परिवार की प्रकृति		एकाकी परिवार का आकार (सदस्य संख्या सहित)			संयुक्त परिवार का आकार (सदस्य संख्या सहित)			परिवार का मध्यमान आकार	
		संयुक्त	एकाकी	1-3	4-6	7-9	1-5	6-10	11 से ऊपर	संयुक्त	एकाकी
1- ब्राह्मण	100	70	30	2	18	10	-	36	34		
2- भूमिहार	100	68	32	4	12	16	15	27	26		
3- क्षत्रिय	100	66	34	5	16	13	11	35	20		
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	64	36	4	21	11	2	34	28		
5- अनुसूचित जातियां	100	48	52	2	26	24	9	22	17		
योग	500	316 63·2%	184 36·8%	17 3·4%	93 18·6%	74 14·8%	37 7·4%	154 30·8%	125 25·0%		

सारिणी संख्या 3 से एक महत्वपूर्ण तथ्य पर प्रकाश पड़ता है औद्योगीकरण, आर्थिक गतिविधियों के विकास एवं आधुनिक शिक्षा का प्रभाव भारतीय समाज पर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ रहा है। परम्परागत भारतीय ग्रामीण जीवन में संयुक्त परिवार प्रथा समाज का एक महत्वपूर्ण तथ्य रहा है, लेकिन धीरे-धीरे संयुक्त परिवार प्रथा का ग्रामीण जीवन में लोप हो रहा है और आधुनिक संस्कृति की उपज एकांकी परिवार प्रथा की वृद्धि हो रही है। जैसाकि सारिणी संख्या 3 से स्पष्ट है कि ब्राह्मण जातियों में 30·0 प्रतिशत, भूमिहार में 32·0 प्रतिशत, क्षत्रिय में 34·0 प्रतिशत, पिछड़ी जातियों में 36·0 प्रतिशत तथा सर्वाधिक संख्या 52·0 प्रतिशत अनुसूचित जातियों में एकांकी परिवारों की है।

आय

सारिणी संख्या 4 उत्तरदाताओं की प्रतिमाह आय पर प्रकाश डालती है। प्रतिमाह आय के दृष्टिकोण से उत्तरदाताओं को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है --

(अ) उच्च आय वर्ग

(ब) निम्न आय वर्ग ।

(अ) उच्च आय वर्ग

सारिणी संख्या 4 से स्पष्ट है कि भूमिहार एवं क्षत्रिय जातियों के लोग जिनमें क्रमशः 501 से अधिक आय वाले 65 एवं 72·0 प्रतिशत लोग हैं, यह स्पष्ट करता है कि अन्य जाति के लोगों की अपेक्षा इन दो जातियों की आय उच्च है।

सारिणी संख्या 4 : आय और वर्ग

क्रमसंख्या जाति		आय प्रतिमाह (रूपयों में)				वर्ग			
		50-250 रू0	251-500 रू0	501 से अधिक रू0	प्रतिमाह आयका मध्यमान रू0	उच्च	उच्च-मध्य	मध्य-निम्न	निम्न
1- ब्राह्मण	100	18	36	46	507·00	34	48	18	-
2- भूमिहार	100	17	18	65	580·00	34	29	31	6
3- क्षत्रिय	100	12	16	72	618·00	36	32	28	4
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	42	46	12	325·50	4	31	49	16
5- अनुसूचित जाति	100	65	28	7	255·00	-	3	29	68
योग	100 30·8%	154 28·8%	144 28·8%	202 40·4%	457·10 (मध्यमान आय)	108 21·6%	143 28·6%	155 31·0%	94 18·8%

ब्राह्मण जाति के लोगों की आय अनुसूचित एवं मध्यवर्गीय जातियों से अधिक, परन्तु भूमिहार और क्षत्रिय जाति के लोगों से कम है। जैसाकि सारिणी संख्या 4 से स्पष्ट है कि ब्राह्मण जाति के लोगों की 501 रु0 से अधिक प्रतिमाह मासिक आय केवल 46·0 प्रतिशत लोगों की ही है।

(ब) निम्न आय वर्ग

इस आय वर्ग के अन्तर्गत पिछड़ी जातियों एवं अनुसूचित जातियों के लोग हैं। सारिणी संख्या 4 से स्पष्ट है कि 501 रु0 प्रतिमाह आय वाले पिछड़ी जातियों में 12·0 प्रतिशत एवं अनुसूचित जातियों में केवल 7·0 प्रतिशत लोग हैं।

अनुसूचित जातियों के लोगों का एक बड़ा समूह निम्न आय वर्ग के अन्तर्गत है। जैसाकि सारिणी संख्या 4 से स्पष्ट है, 50-250 रु0 प्रति माह आयवर्ग के अन्तर्गत 65·0 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के लोग हैं। पिछड़ी जातियों में भी अधिकांश लोग लगभग 42·0 प्रतिशत, 50-250 आय वर्ग के अन्तर्गत है। ब्राह्मण, भूमिहार एवं क्षत्रिय जाति के लोगों की बहुत कम संख्या आय वर्ग 50-250 के अन्तर्गत है। इनकी संख्या क्रमश: 18·0 प्रतिशत, 17·0 प्रतिशत, 12·0 प्रतिशत है। 251-500 आय वर्ग के अन्तर्गत ब्राह्मण एवं पिछड़ी जाति तथा अनुसूचित जाति के लोगों की संख्या अन्य दो जातियों भूमिहार तथा क्षत्रिय की अपेक्षा अधिक है, यह क्रमश: 36·0, 46·0 एवं 28·0 प्रतिशत है।

भारतीय ग्रामीण जीवन में लोगों की आय का प्रमुख स्रोत कृषि है। ग्रामीण जीवन में जिन लोगों के पास कृषि योग्य भूमि जितनी ही अधिक है, उनका आय उतना ही अधिक है। ग्रामीण औद्योगीकरण के पूर्णतया अभाव के कारण गाँवों में वे लोग ही आर्थिक स्थिति में उच्च हैं जिनके पास कृषि योग्य भूमि है। जिनके पास कृषि योग्य भूमि नहीं है, वे लोग निम्न आय वर्ग के अन्तर्गत हैं। कृषि योग्य भूमि पर मुख्यत: ब्राह्मण, भूमिहार एवं क्षत्रिय जाति के लोगों का ही आधिपत्य है, फलत: ये लोग उच्च आय वर्ग के अन्तर्गत हैं। भूमिहार एवं क्षत्रिय की अपेक्षा ब्राह्मण जाति के लोगों के पास अपेक्षाकृत कृषि योग्य भूमि कम है, फलत: ये लोग मध्य आय वर्ग के अन्तर्गत हैं। अनुसूचित जातियों एवं पिछड़ी जातियों के लोगों के पास बहुत कम जमीन है, फलत: ये लोग निम्न आय वर्ग के अन्तर्गत हैं। इनके आय का मुख्य स्रोत पशु पालन तथा मजदूरी है।

वर्ग

सामाजिक विज्ञानों की शब्दावली में वर्ग की अवधारणा एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है, लेकिन यह शब्द किसी व्यक्ति के वर्ग का निर्धारण करने में यथार्थता से दूर हो जाता है, क्योंकि इसके निर्धारण में व्यक्ति निष्ठता का प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ने लगता है। लोगों से जब यह प्रश्न किया गया कि "आप अपने को किस सामाजिक वर्ग का समझते हैं, तो उत्तरदाताओं ने भिन्न-भिन्न प्रकार के उत्तर दिये। उनके उत्तर कई प्रकार के विचारों से प्रभावित थे, जैसे अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा का विचार, परिवार की प्रस्थिति, सम्पूर्ण आय और जाति का विचार इत्यादि। अत: हम जाति, आय और वर्गीय सम्बद्धता के बीच कोई अनुरूपता या मेल नहीं पाते हैं। पूर्वी उत्तर-प्रदेश के ग्रामीण अंचलों में जातिवाद का बोलबाला है

SOCIOLOGY LIBRARY
Sl No ......
NEHU : SHILLONG

तथा ब्राह्मण, भूमिहार और क्षत्रिय उच्च जातियों का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसके बावजूद भी 6·0 प्रतिशत भूमिहार तथा 4·0 प्रतिशत क्षत्रिय जाति के लोगों ने अपने को निम्नवर्ग का समझा है, पिछड़ी जातियों के लोग वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुसार मध्यवर्गीय जातियाँ हैं परन्तु इनमें भी 16·0 प्रतिशत लोग अपने को निम्न वर्ग का समझते हैं, जबकि अनुसूचित जातियों के लोग आज भी गाँवों में उपेक्षित एवं निम्न वर्ग के समझे जाते हैं, परन्तु इनमें से भी केवल 68·0 प्रतिशत लोग ही अपने को निम्न वर्ग का समझते हैं।

जाति व्यवस्था के अन्तर्गत ब्राह्मण उच्च वर्ग के कहे जाते हैं, परन्तु 48·0 प्रतिशत उच्च मध्य तथा 18·0 प्रतिशत मध्य निम्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये लोग मध्य आय वर्गीय होने के कारण अपने को मध्य वर्ग का महसूस करते हैं। अनुसूचित जातियों में भी जो थोड़ी अच्छी आर्थिक स्थिति के थे, उन्होंने अपने को मध्य वर्ग का प्रतिनिधि माना। पिछड़ी जातियों में भी 4·0 प्रतिशत लोग अपने को उच्च वर्ग का समझते हैं। ब्राह्मण और भूमिहार जाति के लोग जो गाँवों में उच्च जाति एवं उच्च आर्थिक स्थिति का प्रतिनिधित्व करते हैं उनमें भी केवल 34·0 प्रतिशत लोग ही अपने को उच्च वर्ग का समझते हैं। वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत क्षत्रिय जाति के लोग ब्राह्मण एवं भूमिहार जातियों से निम्न जाति का प्रतिनिधित्व करते हैं, परन्तु इनमें भी 36·0 प्रतिशत लोग अपने को उच्च वर्ग का समझते हैं।

सारिणी संख्या 4 से स्पष्ट होता है कि गाँव के लोगों और मध्य वर्ग के बीच एक निश्चित सम्बन्ध दिखाई पड़ता है। ग्रामीण जीवन के अधिकांश लोग अपने को या तो उच्च-मध्य वर्ग या निम्न-मध्य वर्ग का समझते हैं, उपर्युक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए हमने विचार किया है कि व्यावसायिक गतिशीलता के अध्ययन के सन्दर्भ में निर्णायक तथ्य के रूप में वर्ग को छोड़ दिया जाय ।

सवारी का उपयोग

किसी व्यक्ति का जीवन स्तर और उसकी सामाजिक प्रस्थिति उसके द्वारा उपभोग किये जाने वाले वस्तुओं एवं आधुनिक सुविधाओं का उपयोग करने से निर्धारित किया जाता है, जिसमें सवारियों का उपयोग एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस अध्ययन में सारिणी संख्या 19 से यह स्पष्ट है कि स्वचालित सवारी जैसे स्कूटर या मोटर साइकिल का उपयोग करने वाले लोग पूरे समुदाय में केवल 2·6 प्रतिशत लोग ही है, जिनमें प्रति 100 उत्तरदाताओं में ब्राह्मण 4·0 प्रतिशत, भूमिहार 3·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 5·0 प्रतिशत तथा 1·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति के लोग हैं। स्वचालित सवारी का उपयोग करने वाला अनुसूचित जाति का कोई उत्तरदाता नहीं है। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में 60·36 प्रतिशत लोगों के पास कोई भी सवारी नहीं है। ग्रामीण समुदाय का सबसे अधिक लोकप्रिय सवारी साइकिल है, जिसका उपयोग उत्तरदाताओं की कुल संख्या का 33·2 प्रतिशत लोग करते हैं। ब्राह्मण जाति में कुल 36·0 प्रतिशत, भूमिहार 35·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 40·0 प्रतिशत, पिछड़ी जातियों में 30·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में 25·0 प्रतिशत लोग साइकिल का उपयोग सवारी के रूप में करते हैं। गाँवों में रिक्सा का उपयोग करने वालों का प्रतिशत अत्यन्त अल्प है। यह केवल 0·6 प्रतिशत लोगों द्वारा ही उपयोग में लाई जाने वाली सवारी है।

व्यावसायिक गतिशीलता के कारण

प्रत्येक समाज में गतिशीलता कई प्रकार के सामाजिक तथ्यों पर आश्रित होती है, जैसे-- सामाजिक स्तरीकरण, समुदाय का आकार, परिवार की प्रकृति, शिक्षा, तकनीकी और औद्योगिक प्रगति का स्तर,

राजनैतिक व्यवस्था तथा आर्थिक गतिविधियों के लिए उपलब्ध अवसर इत्यादि। ये वस्तुगत सामाजिक तथ्य तथा साथ ही साथ व्यक्तिगत आकांक्षाएँ एवं प्रेरणाएं एक ऐसी स्थिति का निर्माण करते हैं जो सामाजिक या व्यावसायिक गतिशीलता के लिए उत्तरदायी होते हैं। औद्योगीकरण से पूर्व की सामाजिक व्यवस्था, आधुनिक औद्योगीकृत सामाजिक व्यवस्था की अपेक्षा बहुत कम व्यक्तिगत आकांक्षाओं को उत्पन्न करती थीं और व्यक्ति को समाज की ऊपरी सीढ़ियों पर चढ़ने का अवसर भी बहुत कम उपलब्ध था, क्योंकि औद्योगीकरण से पूर्व ग्रामीण क्षेत्र नगरी क्षेत्र से अलग-अलग पड़े हुए थे। आर्थिक गतिविधियों का क्षेत्र सीमित था तथा जाति व्यवस्था के अन्तर्गत सभी जातियों के अपने-अपने परम्परागत व्यवसाय निर्धारित थे।

औद्योगिक नगरीकरण और राजनैतिक उदारतावाद ने व्यक्तिगत उपलब्धियों और सामाजिक समानतावाद के नये मूल्यों को स्थापित किया है जिसने आधुनिक समाज को सामाजिक गतिशीलता के क्षेत्र के रूप में बहुत अधिक विस्तृत बना दिया है। गतिशीलता के कारणों पर विचार करते समय हमें पश्चिमी औद्योगिक समाज और विकासशील परम्परागत समाजों में पाये जाने वाले सामाजिक और आर्थिक दशाओं को दृष्टि से ओझल नहीं कर दिया जाना चाहिए। पश्चिमी योरोप और संयुक्त राज्य अमेरिका में गतिशीलता और प्रवास औद्योगीकरण की ही उपज हैं। लेकिन विकासशील देशों में खासतौर से भारत में जहाँ पर औद्योगीकरण अभी अपनी शैशवावस्था में है, सामाजिक गतिशीलता बहुत कुछ विश्वविद्यालयीय शिक्षा और अंग्रेजी प्रशासन के कारण ही परिलक्षित होता है, जिसके फलस्वरूप शिक्षित अल्पसंख्यकों को सफेद-पोश कार्य करने के अधिक अवसर उपलब्ध हुए हैं। यह कथन गाँवों में निवास करने वाले लोगों के लिए अधिक सत्य है। शिक्षा की भूमिका स्वयं में उतनी महत्वपूर्ण नहीं है। जब तक की हम इसे सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था के सन्दर्भ में न देखें।

परम्परागत भारतीय समाज जाति के आधार पर स्तरीकृत था और प्रत्येक जाति का पेशा निश्चित था।

जाति व्यवस्था और भारत में व्यावसायिक एवं सामाजिक गतिशीलता

परम्परागत ग्रामीण भारतीय सामाजिक व्यवस्था में विभिन्न जातियाँ एक दूसरे से इतना अधिक सम्बन्धित थीं कि यह व्यवस्था विभिन्न जातियों की पारस्परिक अन्त:निर्भरता एवं सहयोग को प्रोत्साहन प्रदान करती थी। इसे अक्सर यजमान प्रथा के रूप में हम जानते हैं। भारतीय जाति-व्यवस्था सहयोग पर आधारित थी और उसने कभी प्रतियोगितात्मक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित नहीं किया, जिससे सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन हो सके। परम्परागत भारतीयता का सांसारिक दृष्टिकोण इस बात में निहित था कि प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वधर्म (जातिगत पेशा) से जुड़ा रहे। इस प्रकार की सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति की प्रस्थिति जन्मजात थी और एक व्यक्ति किसी खास परिवार में जन्म लेकर स्वत: ही वह अपने पिता की प्रस्थिति और व्यवसाय का उत्तराधिकारी बन जाता था। परन्तु व्यवहार में ऐसा देखा जाता था कि एक व्यक्ति अपने व्यवसाय को बदलने के लिए पूर्णतया स्वतन्त्र था, लेकिन यह स्वतन्त्रता वहीं तक थी जब तक कि इस परिवर्तन से उसके धार्मिक क्रिया-कलापों पर मूलरूप से कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। उदाहरणस्वरूप एक ब्राह्मण अपने धार्मिक कृत्य के अतिरिक्त या उसके साथ ही साथ कृषि कार्य भी करने के लिए स्वतन्त्र था। इसी प्रकार एक अछूत भी कृषि कार्य करने के लिए स्वतन्त्र था, लेकिन वह कभी-भी धार्मिक क्रिया-कलापों को करने के लिए स्वतन्त्र नहीं था। इसी प्रकार एक ब्राह्मण भी चमड़े के कार्य में अपने को संलग्न नहीं कर सकता था।

जाति व्यवस्था, व्यावसायिक चयन और सामाजिक गतिशीलता के बीच सम्बन्ध के सन्दर्भ में यहाँ परस्पर विरोधी दो दृष्टिकोण हैं --

(अ) लेखकों के एक समूह के अनुसार --

"The caste system not only assigns a definite occupation to each individual but imposes certain restrictions also on the change of occupation."[1]

अर्थात् जाति व्यवस्था प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक निश्चित पेशे का निर्धारण ही नहीं करती अपितु व्यवसाय या पेशे के परिवर्तन के सन्दर्भ में कुछ निश्चित प्रतिबन्ध भी लगाती है।

(ब) दूसरे समूह के लेखकों के अनुसार जाति व्यवस्था एक गतिशील प्रकृति की व्यवस्था है, और जैसाकि घुरिये ने दिखाने का प्रयास किया है कि --

During the middle ages and after, certain castes participated in a number of occupations.[2]

अर्थात् मध्य युग और उसके बाद के कालों में कुछ जातियों ने विभिन्न प्रकार के पेशों को अपना लिया।

सन् 1931 की जनगणना रिपोर्ट भी इस तथ्य का समर्थन करती है और इसके आँकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि केवल कार्य करने वाले आधे पुरुष ही अपनी जाति से सम्बन्धित परम्परागत व्यवसायों में लगे हुए थे।

The census of India for 1931 also supports this view and its data reveal that only half of the male workers were engaged in occupations traditionally associated with their castes.[3]

अभी हाल ही में कुछ दिनों पूर्व नोएल जिस्ट और डी० ड्राइवर द्वारा दो अध्ययन सम्पन्न किये गये हैं। ये अध्ययन बंगलोर और मैसूर में सम्पन्न हुए हैं। इनसे यह प्रदर्शित होता है कि प्रत्येक जातिगत संरचना में 40·0 प्रतिशत से अधिक लोग अपने पिता के जातिगत पेशों से अलग हुए हैं। ब्राह्मणों के सन्दर्भ में यह 82·7 प्रतिशत है।[4]एडविन डी० ड्राइवर ने मध्य भारत (नागपुर जिला) के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में जाति और व्यावसायिक संरचना के सम्बन्ध का वर्णन किया है। इन्होंने अपने अध्ययन के द्वारा इस दृष्टिकोण की पुष्टि की है कि जाति व्यवस्था व्यावसायिक परिवर्तन में अवरोध उत्पन्न नहीं करती है।

एम० एन० श्रीनिवास ने विचार किया है कि प्रत्येक जाति परम्परागत रूप से अलग-अलग व्यवसायों से सम्बन्धित है, फिर भी कृषि कार्य गांवों में सभी जाति के लोगों के लिए एक सामान्य पेशा है। इसे ब्राह्मण से लेकर अछूत तक सभी करने के लिए स्वतन्त्र हैं। उन्होंने महसूस किया है कि जाति व्यवस्था कठोर व्यवस्था नहीं है।

"The caste system is a far from rigid system. Movement has always been possible, and especially so in the middle regions of the hierarchy."[5]

इसी प्रकार की विचारधारा "बेटिली" की भी है। उन्होंने बताया है कि अब किसी खास जाति में उत्पन्न होकर भी व्यक्ति अपने परम्परागत पेशे से अलग हटकर आर्थिक और राजनैतिक उपलब्धियाँ अर्जित कर सकता है।

"In traditional system birth in a particular caste fixed not only one's ritual status, but, by and large, also one's economic and political positions. Today, it is possible to achieve a variety of economic and political positions inspite of one's birth in a particular caste."[6]

अपने आँकड़ों के आधार पर हम तीन महत्वपूर्ण निष्कर्षों पर पहुँचते हैं --

1- जाति व्यवस्था व्यावसायिक परिवर्तन में कोई बाधा उपस्थित नहीं करती है। यहाँ तक कि आधुनिक शिक्षा एवं तकनीकी के आगमन के पूर्व भी अनेकों लोग अपने जातीय पेशे से अलग हटकर अन्य पेशों में लगे हुए थे। वर्तमान अध्ययन में केवल 36·6 प्रतिशत लोग ही परम्परागत व्यवसाय के रूप में अपने जातिगत पेशे (कृषि मजदूर सहित) में लगे हुए थे। अत: लोगों का अपने जातिगत पेशे से विलगाव केवल आधुनिक शिक्षा के फलस्वरूप ही नहीं हुआ, अपितु इस विलगाव की जड़े हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में ही सन्निहित है।[7]

2- आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि जाति- व्यवस्था ने समाज के सभी सदस्यों को समान अवसर प्रदान नहीं किया है। सारिणी संख्या 5,9 और 17 से यह निष्कर्ष निकलता है कि निम्न जातियाँ

उच्चवर्गीय जातियों की अपेक्षा शिक्षा, सामाजिक एवं आर्थिक अवसरों से वंचित रही हैं। ये व्यावसायिक गतिशीलता की आधारभूत दशाएँ हैं।

3- एच0एच0 गोल्ड ने बताया है कि आधुनिक शिक्षा एवं तकनीकी के फलस्वरूप अर्जित व्यवसाय की परम्परा ने पूर्णरूप से परम्परागत सामाजिक व्यवस्था का परित्याग नहीं किया है।[8] नगरों की अपेक्षा ग्रामीण समुदाय में परम्परागत सामाजिक व्यवस्था काफी सुदृढ़ है और आज भी अधिकांश लोग अपने परम्परागत व्यवसायों से जुड़े हुए हैं। हमारे आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि ग्रामीण समुदाय में आज भी ९०·० प्रतिशत परिवारों के लोग किसी न किसी रूप में अपने परम्परागत व्यवसायों में लगे हुए हैं।[9] अर्जित व्यवसायों की आधुनिक परम्परा ने पूर्णरूपेण, ग्रामीण समुदाय की परम्परागत व्यावसायिक बन्धन एवं संयुक्त परिवार प्रथा को, प्रभावित नहीं कियाहै। ग्रामीण समुदाय के लोगों को संक्रमणशील लोग कहा जा सकता है, जो आधुनिकता और परम्पराओं को साथ-साथ गतिशील बनाये हुए हैं।

तीन पीढ़ियों की शैक्षणिक उपलब्धि

भारतवर्ष में विश्वविद्यालय की शिक्षा ने लोगों में आधुनिकता एवं पाश्चात्य मूल्य बोध को उत्पन्न किया है और इस शिक्षा के फलस्वरूप शिक्षित मध्यवर्ग का उदय हुआ है। यह शिक्षित मध्य वर्ग विभिन्न प्रकार के सफेदपोश कार्य, जैसे- सरकारी, अर्धसरकारी या व्यक्तिगत क्षेत्र के संस्थानों की नौकरियों या चिकित्सा, कानून या अध्यापन के कार्यों में लगा हुआ है।

शिक्षा के प्रतिशत के बढ़ने के साथ ही साथ नौकरियों के अवसर बढ़ते हैं, और साथ ही साथ उध्र्वगामी गतिशीलता भी बढ़ जाती है।[10]

हाल ही में सम्पन्न अनेक नगरीय अध्ययनों में भी विभिन्न जातियों की व्यावसायिक उपलब्धियों और उनके औपचारिक शिक्षा के स्तर के बीच धनात्मक सह-सम्बन्ध प्राप्त हुए हैं। हाल ही में "नोएल जिस्ट" ने मैसूर और बंगलौर इन दो नगरों का सर्वेक्षण करके बताया है कि औपचारिक शिक्षा ने विभिन्न जातियों के परम्परागत व्यवसायों में परिवर्तन किया है। इन शहरों में ब्राह्मण जाति के लोग अधिक शिक्षित थे, अतः इस जाति के लोगों में व्यावसायिक परिवर्तन का प्रतिशत सबसे अधिक था।[11] एक दूसरा अध्ययन नागपुर जिले का एडविन डी0 ड्राइवर द्वारा किया गया है। उन्होंने बताया है कि मध्य-भारत में अन्तर-पीढ़ीगत व्यावसायिक गतिशीलता अक्सर पाई जाती है, लेकिन यह गतिशीलता सामान्य रूप से समान स्तर के व्यवसायों तक ही सीमित है और व्यवसाय का यह परिवर्तन आधुनिक शिक्षा के कारण सम्भव होता है।"[12]

इस सन्दर्भ में भौतिक गतिशीलता के पीछे छुपे हुए तथ्यों पर भी विचार कर लिया जाना चाहिए। भारत में यह सर्वविदित मत है कि गाँव से शहर की ओर प्रवास का मुख्य कारण गरीबी है। लेकिन एच0ए0 गोल्ड[13] अपने अध्ययनों के द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि गाँव से नगर की ओर प्रवास का कारण आधुनिक व्यवसाय की खोज है जो जटिल प्रेरणाओं के द्वारा उत्पन्न होता है और इस प्रकार साधारण आर्थिक तथ्यों जैसे गरीबी और भूमिहीनता के सन्दर्भ में इसकी व्याख्या नहीं की जा सकती है। नगरीय जीवन का आकर्षण, व्यवसाय और शिक्षा का समान अवसर, आर्थिक योजनाओं के प्रभाव के फलस्वरूप बढ़ रहे रोजगार के अवसर और जनतन्त्रीकरण

का विभिन्न जातियों की प्रेरणाओं पर प्रभाव भी प्रवास के महत्वपूर्ण कारक हैं।[14]

व्यावसायिक और सामाजिक गतिशीलता का निर्धारक तत्व अकेले शिक्षा ही नहीं कही जा सकती है। शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत प्रशिक्षण का प्रकार और सामाजिक मूल्य अन्य शक्तिशाली कारक है।[15] जहाँ तक हमारे अध्ययन के निष्कर्ष का सवाल है, सारिणी 5 से यह स्पष्ट है कि शैक्षणिक गतिशीलता की उच्च मात्रा तीन पीढ़ियों के बीच उपस्थित है तथा इन पीढ़ियों के बीच शिक्षा में वृद्धि हुई है। इस सारिणी के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- अशिक्षा का परिमाण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में लगातार घटता जा रहा है। ब्राह्मण जाति में बाबा का अशिक्षा का प्रतिशत 62, भूमिहार जाति में 88, क्षत्रिय में 78, पिछड़ी जातियों में 95 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में 100 प्रतिशत है। अशिक्षा का प्रतिशत पिता की पीढ़ी में सभी जातियों में सभी जातियों में बहुत अधिक कम हुआ है। पिता की पीढ़ी में अशिक्षा का प्रतिशत ब्राह्मण जाति में 28, भूमिहार जाति में 32, क्षत्रिय में 31, पिछड़ी जातियों में 40 तथा अनुसूचित जातियों में सबसे कम 93 प्रतिशत है। अशिक्षा का यह प्रतिशत उत्तरदाताओं की पीढ़ी में और भी अधिक कम हुआ है। ब्राह्मण जाति के उत्तरदाताओं की पीढ़ी में अशिक्षा का प्रतिशत 4, भूमिहार जाति में 4, क्षत्रिय में 6, पिछड़ी जातियों में 31 तथा अनुसूचित जातियों में सर्वाधिक 59 प्रतिशत अशिक्षित व्यक्ति हैं।

सारिणी संख्या 5 : तीन पीढ़ियों की शैक्षणिक उपलब्धियाँ

क्रमसंख्या	जाति (संख्यासहित)	पीढ़ी	अशिक्षित	प्राइमरी/ मिडिल स्कूल	हाईस्कूल/ इण्टर- मिडिएट	स्नातक/ स्नात- कोत्तर/ आचार्य	मेडिकल/ इन्जीनियरिंग कानून	पी-एच0 डी0	उत्तरदाताओं के बच्चों की शिक्षा (केवल उच्च शिक्षा प्राप्त)
1		2	3	4	5	6	7	8	9
		बाबा	62	32	-	6 (आचार्य)	-	-	स्नातक- 8 इण्टर - 18
1- ब्राह्मण	100	पिता	28	52	8	12	-	-	मिडिल- 4
		आपस्वयं	4	12	52	32	-	-	
		बाबा	88	11	-	1	-	-	मेडिकल- 1 इन्जी0- 1
2- भूमिहार	100	पिता	32	33	27	7	1	-	स्नातक / स्नातको } 11
		आपस्वयं	4	16	56	22	1	1	हा0/इ0 -14 प्रा0इ0/मि0-11

क्रमशः ...

1		2	3	4	5	6	7	8	9
		बाबा	78	20	1	1	-	-	मेडिकल- 1 इन्जी0- 2
3- क्षत्रिय	100	पिता	31	32	22	13	2	-	स्नातक स्नातको 12
		आपस्वयं	6	14	50	27	3	-	हा0/इ0- 17
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	बाबा	95	3	2	-	-	-	स्नातक- 6 इण्टर- 12
		पिता	70	20	9	-	1(कानून)	-	प्रा0/मिडि-12
		आपस्वयं	31	16	36	15	2(कानून)	-	
		बाबा	100	-	-	-	-	-	स्नातक - x इण्टर- 25
5- अनुसूक्ति जाति	100	पिता	93	7	-	-	-	-	प्रा0/ मिडिल- 19
		आपस्वयं	59	2	35	4	-	-	

2- इसी प्रकार साक्षरता का परिमाण एवं शैक्षणिक उपलब्धि बाबा की पीढ़ी से पिता एवं उत्तरदाताओं की पीढ़ी तक लगातार बढ़ रही है।

3- ब्राह्मण, भूमिहार और क्षत्रिय जाति के उत्तरदाताओं के पिता की शैक्षणिक उपलब्धियां पिछड़ी जाति और अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं के पिता की अपेक्षा अधिक है। ब्राह्मण जाति के उत्तरदाताओं के पिता स्नातक/स्नातकोत्तर स्तर तक 12 प्रतिशत, भूमिहार स्नातक/स्नातकोत्तर 7 प्रतिशत तथा मेडिकल डिग्री प्राप्त 1 प्रतिशत हैं। क्षत्रिय जाति के उत्तरदाताओं के 13 प्रतिशत पिता स्नातक/स्नातकोत्तर स्तर तक तथा 1 प्रतिशत इन्जीनियरिंग और 2 प्रतिशत कानून शिक्षा प्राप्त हैं, जबकि पिछड़ी जाति और अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं के कोई भी पिता स्नातक/स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके हैं, पिछड़ी जाति में केवल 1 प्रतिशत पिता ही कानून की शिक्षा प्राप्त करने में सफल हो सका है।

4- सारिणी संख्या 5 से स्पष्ट है कि अन्तर पीढ़ीगत शैक्षणिक गतिशीलता ने व्यावसायिक गतिशीलता के परिमाण को बढ़ा दिया है।[16]

इस सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण प्रश्न जो उभड़ता है, वह यह है कि पुत्रों की शिक्षा और उनका प्रशिक्षण कहाँ तक उनके पिता की शिक्षा और प्रशिक्षण से प्रभावित होता है ? अपने निष्कर्ष को प्रस्तुत करने से पहले हम विचार कर सकते हैं कि बहुत सारे समाज-शास्त्रियों द्वारा बहुत ही दिलचस्प और महत्वपूर्ण अध्ययन लोगों की शैक्षणिक उपलब्धि और उनके व्यावसायिक आकांक्षाओं के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के सम्बन्ध में किये गये हैं।[17] इस

प्रश्न पर शोधकर्ताओं द्वारा तीन परिकल्पनाएं प्रस्तुत की गई हैं --

1- "सामाजिक वर्ग परिकल्पना"। यह परिकल्पना प्रमाणित करती है कि निम्न वर्ग या मजदूर वर्ग के बच्चों की अपेक्षा मध्य वर्ग के बच्चों में व्यावसायिक और शैक्षणिक आकांक्षाएं अधिक हैं।[18]

2- दूसरी परिकल्पना "समान आयु समूह"[19] के युवा व्यक्तियों के सन्दर्भ में है। शेरिफ ने अपने अध्ययन में प्रदर्शित किया है कि युवा लोगों की मनोवृत्तियों का विकास उनकी आपस की पारस्परिक क्रियाओं के फलस्वरूप होता है।[20] "समान आयु-समूह" परिकल्पना यह प्रदर्शित करती है कि निम्न वर्ग के युवा मध्य वर्ग के युवाओं से अपने सम्पर्क के कारण उर्ध्व-गतिशीलता की ओर अग्रसर होते हैं, क्योंकि मध्यवर्गीय मूल्य मध्य वर्ग के युवाओं से निम्न वर्ग के युवाओं को प्राप्त होते हैं।[21]

3- तीसरी "पैतृक प्रभाव परिकल्पना" है। एक किशोर गतिशीलता की महत्वाकांक्षा उसी परिमाण तक रखता है, जितना उसके माता-पिता उसकी शैक्षणिक और व्यावसायिक गतिशीलता की महत्त्वाकांक्षा को प्रोत्साहित करते हैं।[22] सभी व्यक्तियों में एक समान ही शैक्षणिक और व्यावसायिक महत्त्वाकांक्षा नहीं पाई जाती है। एक दूसरी, "विलगाव गतिशीलता आकांक्षा" की है। इसके अनुसार वह व्यक्ति जो परिवार से वंचित परिस्थिति में है उसमें उन व्यक्तियों की अपेक्षा जो सन्तुष्ट पारिवारिक परिस्थितियों में है, महत्त्वाकांक्षाएं अधिक पाई जाती हैं।

यहाँ हमारा सम्बन्ध स्पष्टरूप से उपरिलिखित सभी परिकल्पनाओं से नहीं है। हमारा सम्बन्ध प्राथमिक रूप से परिवार का प्रभाव, खासतौर से पिता के प्रभाव से है, क्योंकि भारतीय पारिवारिक व्यवस्था में पिता का स्थान निर्विवाद रूप से महत्वपूर्ण है। सारिणी संख्या 5 के अनुसार ब्राह्मण जाति में 84·0 प्रतिशत उत्तरदाता हाई स्कूल से स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त व्यक्ति हैं कोई भी व्यक्ति मेडिकल, इन्जीनियरिंग या कानून की शिक्षा नहीं पाया है। यहाँ हमें इस जाति के उत्तरदाता और उनके पिता की शैक्षणिक उपलब्धियों के बीच एक धनात्मक सह-सम्बन्ध प्राप्त होता है। ब्राह्मण जाति के उत्तरदाताओं के 8·0 प्रतिशत पिता हाई स्कूल/इण्टरमीडिएट स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं जबकि 52·0 प्रतिशत उत्तरदाता हाईस्कूल/इण्टरमीडिएट हैं। उत्तरदाताओं के 12·0 प्रतिशत स्नातक या स्नातकोत्तर हैं, तो 32·0 प्रतिशत उत्तरदाता स्नातक या स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं। ब्राह्मण जाति की कोई भी पीढ़ी मेडिकल, इन्जीनियरिंग या कानून की शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकी है। इसी प्रकार उत्तरदाताओं के बच्चे भी सामान्य शिक्षा प्राप्त हैं। भूमिहार जाति के उत्तरदाताओं 34·0 प्रतिशत पिता हाई-स्कूल से लेकर स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं और 1·0 प्रतिशत पिता कानून की शिक्षा प्राप्त हैं। उत्तरदाताओं में 78·0 प्रतिशत हाईस्कूल से स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं, और 1·0 प्रतिशत उत्तरदाता कानून की शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं, और 1·0 प्रतिशत पी-एच0डी0 उपाधिधारी भी हैं। इस जाति के उत्तरदाताओं के बच्चे भी हाईस्कूल से स्नातकोत्तर स्तर तक 25·0 प्रतिशत शिक्षा प्राप्त हैं, जबकि मेडिकल और इन्जीनियरिंग की शिक्षा क्रमश: 1·0 प्रतिशत व्यक्तियों को प्राप्त है। इस जाति में भी ब्राह्मण जाति के समान ही सामान्य शिक्षा ही प्रधान है। क्षत्रिय जाति के उत्तरदाताओं के 35·0 प्रतिशत पिता हाई स्कूल से स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं, केवल 2·0 प्रतिशत पिता ऐसे हैं, जिन्होंने या तो इन्जीनियरिंग की शिक्षा

प्राप्त की है या कानून की शिक्षा प्राप्त किये हैं। उत्तरदाताओं में 77·0 प्रतिशत उत्तरदाता हाईस्कूल से लेकर स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं, और 3·0 प्रतिशत उत्तरदाता मेडिकल/इन्जीनियरिंग/कानून की शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। उत्तरदाताओं के बच्चे भी अपने पिता की ही शिक्षा का अनुसरण करते हुए मेडिकल में एक, इनजीनियरिंग में दो तथा स्नातक/स्नातकोत्तर स्तर तक 12 बच्चे शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। पिछड़ी जातियों के उत्तरदाताओं के 9·0 प्रतिशत पिता हाईस्कूल/इण्टरमीडिएट स्तर तक पढ़े हैं। स्नातक/स्नातकोत्तर कोई नहीं है। 1·0 प्रतिशत पिता कानूनी शिक्षा प्राप्त हैं, जबकि उत्तरदाताओं में 36·0 प्रतिशत हाईस्कूल/इण्टर स्तर तक तथा 15·0 प्रतिशत स्नातक/स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं, कानूनी शिक्षा 2·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने प्राप्त किया है। इन्हीं की राह पर इनके बच्चे चलकर इण्टर स्तर तक 12 तथा स्नातक तक 6 बच्चों ने शिक्षा प्राप्त की है। अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं के 7·0 प्रतिशत पिता प्राइमरी/मिडिल स्तर तक पढ़े हैं, जबकि 35·0 प्रतिशत उत्तरदाता हाईस्कूल/इण्टर तक और 4·0 प्रतिशत स्नातक/स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। कोई भी उत्तरदाता मेडिकल, कानून या इन्जीनियरिंग की शिक्षा नहीं प्राप्त कर सका है। इनके 25 बच्चे इण्टर स्तर तक पढ़े हैं।

सारिणी संख्या 5 के विश्लेषण के आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि पिता की शैक्षणिक उपलब्धियाँ और प्रशिक्षण उनके पुत्रों की शैक्षणिक उपलब्धियों को ग्रामीण अंचलों में प्रभावित करती हैं। इसके अतिरिक्त समान पद समूह और प्रोफेसर[23] भी शिक्षा की प्रकृति को निर्धारित करने में कुछ भूमिका रखते हैं, लेकिन वर्तमान अध्ययन में इस बिन्दु पर विचार नहीं किया जाएगा।

अधिक शिक्षा प्राप्त करने की अभिरुचि

सारिणी संख्या 6 से स्पष्ट है कि उच्च जातियों, जैसे ब्राह्मण, भूमिहार और क्षत्रिय, में अधिकांश क्रमशः 56·0 प्रतिशत, 64·0 प्रतिशत और 67·0 प्रतिशत लोग अभी और अधिक शिक्षा प्राप्त करने की अभिरुचि रखते हैं,ये सभी लोग करीब-करीब सामान्य शिक्षा प्राप्त व्यक्ति हैं। इनमें से कुछ लोग कृषि कार्य में संलग्न हैं, और कुछ लोग नौकरियों से जुड़े हुए हैं, लेकिन इनकी प्रतिमाह आय इतनी पर्याप्त नहीं है कि ये उच्च-जीवन स्तर उपलब्ध कर सकें। नगरों में रहने वाले उच्च शिक्षा प्राप्त लोग उच्च जीवन स्तर उपलब्ध कर लेते हैं, उन्हीं का अनुकरण करते हुए ये लोग भी उच्च शिक्षा की आकांक्षा को सजोये हुए हैं। एक दूसरा तथ्य यह भी है कि ये सभी ग्रामीण लोग निम्न मध्यवर्गीय परिवारों से सम्बद्ध हैं, और इनकी यह विचारधारा है कि उच्च जीवन स्तर उपलब्ध करने का एकमात्र रास्ता उच्च शिक्षा ही है।

ग्रामीण समुदाय में पिछड़ी जातियां और अनुसूचित जातियां अत्यन्त ही निर्धन स्थिति को प्राप्त हैं। इनके पास कृषि करने योग्य भूमि उपलब्ध नहीं है। इनकी जीविका का प्रमुख स्रोत पशुपालन और मजदूरी ही है। धन के अभाव में इनको शिक्षा भी पर्याप्त रूप से उपलब्ध नहीं हो सकी है। लेकिन मध्यवर्ग के लोगों का जीवन स्तर प्राप्त करने की आकांक्षा इनमें है जिसके फलस्वरूप पिछड़ी जातियों में 45·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में 47·0 प्रतिशत उत्तरदाता उच्च शिक्षा के आकांक्षी हैं। शेष बचे हुए लोग अपनी उम्र या धनाभाव के कारण शिक्षा प्राप्त करने की अभिरुचि का परित्याग कर चुके हैं।

सारिणी संख्या 6 : आगे भी शिक्षा प्राप्त करने की अभिरुचि

क्रमसंख्या	जाति		हाँ	नहीं
1-	ब्राह्मण	100	56	44
2-	भूमिहार	100	64	36
3-	क्षत्रिय	100	67	33
4-	पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	45	55
5-	अनुसूचित जाति	100	47	53

नगरीकरण

किसी भी समाज में ज्यों-ज्यों सामाजिक गतिशीलता बढ़ती है, वैसे-वैसे ही व्यावसायिक गतिशीलता की दर भी बढ़ जाती है। यह एक सामान्य उक्ति है कि नगरीकरण और सामाजिक गतिशीलता धनात्मक रूप से एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। नगरीकरण ने रोजगार के अधिक अवसरों को उपलब्ध कराकर ग्रामीण क्षेत्रों मे लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया है और इस प्रकार इसने व्यावसायिक गतिशीलता की गति और मात्रा को बहुत अधिक बढ़ा दिया है। जिसके फलस्वरूप ग्रामीण जीवन में लोगों ने अपने परम्परागत व्यवसायों को छोड़कर औद्योगीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न नये व्यवसायों को अपना लिया है। विज्ञान और तकनीकी के विकास के फलस्वरूप औद्योगीकरण की वृद्धि हुई है, और औद्योगीकरण के विकास के फलस्वरूप नगरीकरण एवं शिक्षा का भी अप्रत्याशित विकास हुआ है। शिक्षा के प्रति लोगों में आकर्षण बढ़ा है। ग्रामीण समुदाय में रहने वाले सीधे-सादे और अनपढ़ लोगों में शिक्षा ने एक नये उत्साह और नये मूल्य बोध का विकास किया है, जिसके फलस्वरूप ग्रामीण समुदाय के लोग अपने परम्परागत व्यवसायों से हटकर नये औद्योगिकृत व्यवसायों की ओर उन्मुख हुए हैं। यही कारण है कि ग्रामीण समुदाय की विभिन्न जातियों के लोग शिक्षा को ही सामाजिक स्थिति का निर्धारक तत्व मानते हैं, जबकि गांवों में लोगों की सामाजिक स्थिति का निर्धारण उसकी जाति करती रही है, ब्राह्मण जाति में 62·0 प्रतिशत, भूमिहार 75·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 73·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति 60·0 प्रतिशत और अनुसूचित जातियों में 38·0 प्रतिशत लोगों ने शिक्षा को सामाजिक स्थिति का निर्धारक तत्व माना है। औद्योगिक विकास के फलस्वरूप उच्च तकनीकी शिक्षा प्राप्त लोगों की संख्या में वृद्धि हुई है और ये सारे लोग ग्रामीण समुदाय से हटकर नगरों में निवास करने लगे हैं।[24]

समुदाय का आकार और उसकी प्रकृति

अनेक नगरीय शोधकार्य जो नगरीय श्रमिक बाजार के लोगों खासतौर से ग्रामीण सुमुदाय और छोटे कस्बे के मूल निवासियों की सामाजिक गतिशीलता के सम्बन्ध में सम्पन्न किये गये हैं, उनसे यह प्रदर्शित होता है कि ग्रामीण और छोटे नगरीय परिवेश में रहने वाले लोगों की अपेक्षा बड़े नगरीय परिवेश में रहने वाले लोग उध्र्व-सामाजिक गतिशीलता या उध्र्व व्यावसायिक गतिशीलता की ओर अ ग्रसर होने में काफी अधिक सफल हुए हैं। लिपसेट और बेन्डिक्स द्वारा आक्लैण्ड-कैलिफोर्निया के निवासियों पर सम्पन्न शोधकार्य से प्रदर्शित होता है कि बड़े नगरीय परिवेश में रहने वाले लोग अपने उध्र्व सामाजिक गतिशीलता में काफी हद तक सफल हुए हैं।[25] बोल्ट ने स्टाक होम के लोगों पर सम्पन्न अपने अध्ययनों में पाया है कि स्टाक होम के उद्योगों में श्रमिकों की नियुक्ति अधिकांशत: ग्रामीण एवं छोटे नगरीय परिवेश के लोगों में से की गई थी, जबकि स्टाक होम में पैदा हुए श्रमिकों के युवा पुत्रों में मध्य-वर्गीय व्यवसायों को प्राप्त करने की अभिरूचि देखी गई है।[26] हमारा अध्ययन भी उपयुक्त तथ्य की ही पुष्टि करता है। सारिणी संख्या 11 से स्पष्ट है कि विभिन्न जातियों के उत्तरदाताओं में ब्राह्मण जाति में 38·0 प्रतिशत, भूमिहार जाति में 34·0 प्रतिशत, क्षत्रिय जाति में 36·0 प्रतिशत, पिछड़ी जातियों में 33·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में केवल 7·0 प्रतिशत लोग ही अपने व्यवसायों को छोड़कर नौकरियों में संलग्न हो सके हैं। दुकानदारी में क्रमश: 6,3,2 और 9·0 प्रतिशत लोग ही संलग्न हैं। अनुसूचित जाति में कोई व्यापारी नहीं है।

किसी भी समुदाय का आकार और उसकी प्रकृति किस प्रकार वहाँ के निवासियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं को प्रभावित करती है, इस सन्दर्भ में एक अध्ययन फ्लोरिडा के 9वीं दर्जे के 26,313 विद्यार्थियों पर सम्पन्न किया

गया, जिसमें समुदाय का आकार और व्यावसायिक आकांक्षा के बीच धनात्मक सह-सम्बन्ध प्राप्त हुआ है।[27]

माता-पिता का प्रभाव और परिवार का आकार

1930 से लेकर अब तक अनेक अध्ययन, परिवार का आकार और माता-पिता का कितना प्रभाव उनके पुत्रों की व्यावसायिक आकांक्षाओं पर पड़ता है, इसे जानने के लिए सम्पन्न किये गये हैं। कुछ शोधकार्यों में जिनमें कुछ पुरुषों का साक्षात्कार लिया गया था, जिनके पुत्र वयस्क हो चुके थे और वे एकांकी परिवारों से सम्बद्ध थे, उनसे यह पता चला कि वे लोग आर्थिक प्रगति के सामान्य मूल्यों को स्वीकार कर चुके हैं। ये लोग उच्च शिक्षा , अच्छा व्यवसाय, उच्च आमदनी से सम्पन्न और ग्रामीण जीवन का बहुत कम अनुभव प्राप्त थे, और अपने जीवन काल में बहुत अधिक भौगोलिक रूप से गतिशील थे। इसके विपरीत लक्षण उन लोगों में पाये गये जो बड़े पारिवारिक परिवेश अर्थात् संयुक्त परिवार प्रथा से सम्बद्ध थे।[28] अन्य बहुत से शोधकार्य भी सम्पन्न किये गये हैं जिनमें यह प्रतिपादित किया गया है कि उर्ध्व सामाजिक गतिशीलता के लिए छोटा परिवार ही उपयुक्त है। उदाहरणार्थ -- ड्यूमान्ट द्वारा प्रतिपादित "सामाजिक केशिकत्व" का सिद्धान्त यह बल प्रदान करता है कि जिस प्रकार "केशिकत्व बल" के फलस्वरूप किसी तरल पदार्थ को ऊपर उठने के लिए पृष्ठ का स्तम्भ पतला होना चाहिए, उसी प्रकार सामाजिक पैमाने पर ऊपर उठने के लिए परिवार का भी छोटा होना आवश्यक है।[29] भारतीय ग्रामीण परिवेश मूलत: संयुक्त परिवार प्रथा के अन्तर्गत संचालित हैं, और सम्भवत: इसी कारणवश ग्रामीण समुदाय आज भी शिक्षा व्यवसाय और उच्च आय से वंचित है, और

व्यावसायिक गतिशीलता बहुत ही कम दिखाई पड़ती है। हमारे अध्ययन के द्वारा भी उपर्युक्त तथ्यों की पुष्टि होती है। हमारे शोधकार्य में यह तथ्य प्राप्त हुआ है कि ब्राह्मण जाति में 70•0 प्रतिशत उत्तरदाता संयुक्त परिवार के सदस्य हैं, और 30•0 प्रतिशत लोग एकांकी परिवारों के सदस्य हैं। भूमिहार जाति के समस्त उत्तरदाताओं में से 68•0 प्रतिशत उत्तरदाता संयुक्त परिवार के हैं तथा 32•0 प्रतिशत उत्तरदाता एकांकी परिवारों के सम्बद्ध हैं। इसी प्रकार क्षत्रिय जाति में 66•0 प्रतिशत संयुक्त परिवार तथा 34•0 प्रतिशत एकांकी परिवार के सदस्य हैं। पिछड़ी जातियों में 64•0 प्रतिशत संयुक्त परिवार तथा 36•0 प्रतिशत एकांकी एवं अनुसूचित जातियों के 48•0 प्रतिशत उत्तरदाता संयुक्त परिवार के तथा 52•0 प्रतिशत उत्तरदाता एकांकी परिवार के सदस्य हैं। ब्राह्मण, भूमिहार, क्षत्रिय तथा पिछड़ी जातियों के लोगों में संयुक्त परिवारों की संख्या बहुत अधिक है और यह तथ्य उनकी व्यावसायिक गतिशीलता की मात्रा को प्रभावित करती है। अनुसूचित जातियों में संयुक्त परिवार कम हैं, और उनके परिवार का आकार भी छोटा है, जैसाकि सारिणी संख्या 3 से स्पष्ट है। अत: उपर्युक्त अध्ययनों के अनुसार अनुसूचित जातियों को अन्य जातियों की अपेक्षा सामाजिक पैमाने पर ऊँचा रहना चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं है। ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूचित जाति के लोग आज भी शिक्षा एवं कृषि योग्य भूमि से वंचित हैं, फलत: इनकी आर्थिक स्थिति अत्यन्त ही दयनीय है, इसके बावजूद भी संयुक्त परिवार कम होने का प्रभाव उनके व्यावसायिक परिवर्तन में दिखाई पड़ता है। अनुसूचित जातियों का परम्परागत व्यवसाय चमड़े का कार्य ही था लेकिन आज अधिकांश (लगभग 95•0 प्रतिशत) लोगों ने इस व्यवसाय को छोड़कर अन्य व्यवसायों को अपना लिया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुसूचित जातियों में अन्य जातियों की अपेक्षा व्यावसायिक परिवर्तन की

दर बहुत अधिक है। इस प्रकार हमारे शोधकार्य से भी इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है कि उर्ध्व सामाजिक गतिशीलता, उर्ध्व व्यावसायिक गतिशीलता तथा परिवार छोटे आकार के बीच धनात्मक सह-सम्बन्ध पाया जाता है। अपने तथ्यों के आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि निम्न आय, निम्न भौगोलिक, सामाजिक एवं व्यावसायिक गतिशीलता, समुदाय का छोटा आकार और ग्रामीण पृष्ठभूमि एक दूसरे के सह-सम्बन्धी हैं। इसके विपरीत उच्च आय, उच्च भौगोलिक एवं सामाजिक गतिशीलता, समुदाय का बड़ा आकार और नगरीय पृष्ठभूमि घनिष्ठ रूप से एक दूसरे से सम्बन्धित हैं।[30]

हाल ही में आस्ट्रेलिया में 120 पुरुष अध्यापकों पर एक शोध कार्य किया गया है। इस शोध कार्य के लिए निम्न दो परिकल्पनाएं बनाई गई थी।[31]

अ- अगतिशीलता, परिवार के बड़े आकार से सम्बन्धित है, या इसके विपरीत गतिशीलता या सामाजिक प्रगति, परिवार के छोटे आकार से सम्बन्धित हैं।

ब- अगतिशीलता थोड़े समय के लिए विवाह और बच्चे के प्रथम जन्म के बीच पाई जाती है।

चूंकि यह अध्ययन एक विशिष्ट समूह से सम्बन्धित था इसलिए यह पूर्णतया सत्यापित नहीं माना जा सकता।

अपने शोध कार्य में स्टुर्ट ने प्रदर्शित किया है कि नगरीय क्षेत्र में एकांकी परिवार का व्यक्ति बहुत अधिक क्रियाशील होता है, क्योंकि बड़े परिवार से स्वतन्त्र होने के कारण उसे अपनी निष्ठा और पहिचान

अपेक्षाकृत छोटी सी गृहस्थी में ही बनाने का अवसर उपलब्ध होता है।[32]

परिवार का आकार और उसकी प्रकृति ही केवल परिवार के सदस्यों की व्यावसायिक और शैक्षणिक उपलब्धियों को निर्धारित नहीं करती, बल्कि यह तथ्य केवल माता-पिता की एवं परिवार के अन्य सदस्यों की शैक्षणिक उपलब्धियों और उनकी व्यावसायिक आकांक्षाओं की सहयोगी है। प्राय: ऐसा देखने में आता है कि भारतीय शिक्षित परिवारों के लड़कों की शैक्षणिक उपलब्धियाँ उसके माता-पिता एवं बड़े भाइयों से प्राय: अधिक ही रहती है, इसके विपरीत वे लोग जो ग्रामीण परिवेश या कम पढ़े-लिखे परिवारों के सदस्य हैं, वे अपनी भविष्य की योजनाएं अपने संगी-साथियों या पास-पड़ोस के परिचितों से प्रभावित होकर बनाते हैं। हमने पिछले अध्यायों में इस तत्य पर विचार किया है कि माता-पिता की शैक्षणिक और व्यावसायिक उपलब्धियां उसके पुत्रों की शिक्षा एवं व्यवसाय को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

सामाजिक समानता और बदलते मूल्य

परम्परागत भारतीय समाज व्यवस्था जाति व्यवस्था के आधार पर स्तरीकृत थी। एक व्यक्ति की प्रतिष्ठा उसके किसी खास परिवार में जन्म लेने पर निर्भर थी। आधुनिकीकरण, नगरीय एवं औद्योगिक विकास, राजनैतिक जागरूकता एवं स्वतन्त्रता प्राप्ति ने भारतीय समाजिक व्यवस्था के स्तरीकरण में गम्भीर परिवर्तन लाकर जनतान्त्रिक मूल्यों एवं सामाजिक समानता के मार्ग को प्रशस्त किया है। अनेक समाज-शास्त्रीय अध्ययनों द्वारा यह सहमति व्यक्त की गई है कि सामाजिक मूल्यों द्वारा ही किसी व्यक्ति

की व्यावसायिक आकांक्षाएं और सामाजिक गतिशीलता की मात्रा प्रभावित होती है। यह एक सुविज्ञात तथ्य है कि आधुनिक व्यावसायिक गतिशीलता जो औद्योगिक, सामाजिक और आर्थिक संगठनों की देन है, उसमें और जनतान्त्रिक तथा व्यावहारिक मूल्यों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। रोजेन वर्ग और उनके सहयोगियों द्वारा एक बहुत महत्वपूर्ण शोध कार्य किया गया है जिसमें कालेज के विद्यार्थियों द्वारा चुने गये व्यवसाय के प्रकारों और उनके सामाजिक मूल्यों में सम्बन्ध की स्थापना की गई है।[33]

उनका अध्ययन यह सहमति व्यक्त करता है कि वे लोग जो भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यवसायों में प्रवेश करते हैं वे जीवन के तथ्य के रूप में कार्य के प्रति भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण वाले हैं। यहाँ यह स्पष्टरूप से समझ लिया जाना चाहिए कि सामाजिक मूल्य, व्यावसायिक चयन पर प्रभाव डालते हैं और व्यावसायिक परिवर्तन के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं, लेकिन दूसरी तरफ व्यावसायिक और सामाजिक गतिशीलता नये मूल्यों को उत्पन्न भी करते हैं। इस प्रकार सामाजिक मूल्य और व्यावसायिक गतिशीलता एक दूसरे से अन्त: सम्बद्ध हैं। रिचार्ड एल० सिम्पसन और इडा हार्पर सिम्पसन ने अपने अध्ययनों में इस तथ्य पर विशेष बल दिया है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि सामाजिक मूल्य, व्यक्तिगत प्रभाव और व्यावसायिक चयन अलग-अलग तीन घटक हैं और इनका एक दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनमें से एक घटक अन्य दोनों घटकों के साथ अन्त:क्रिया करता रहता है।[34]

परम्परागत ग्रामीण भारतीय सामाजिक संगठन जिसमें व्यक्ति सामाजिक प्रस्थिति जन्मजात थी, किस प्रकार बदलते मूल्यों से प्रभावित होकर अर्जित प्रस्थिति की ओर झुकी है, इसे जानने के लिए साक्षात्कार अनुसूची में कई प्रश्न समाहित किये गये थे। उत्तरदाताओं से एक प्रश्न पूछा गया कि "कौन कारक आपकी सामाजिक स्थिति का निर्धारण करता है" तो

लोगों ने एक से अधिक कारकों की ओर अपना मत व्यक्त किया। ब्राह्मण जाति के लोगों में 6·0 प्रतिशत जन्म, 20·0 प्रतिशत सम्पत्ति, 12·0 प्रतिशत व्यवसाय और 62·0 प्रतिशत ने शिक्षा को सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारक तत्व माना। भूमिहार जाति में 7·0 प्रतिशत जन्म, 16·0 प्रतिशत सम्पत्ति, 10·0 प्रतिशत व्यवसाय और 67·0 प्रतिशत लोग शिक्षा को। क्षत्रिय जाति में 6·0 प्रतिशत जन्म, 17·0 प्रतिशत सम्पत्ति, 11·0 प्रतिशत व्यवसाय तथा 66·0 प्रतिशत शिक्षा। पिछड़ी जातियों में 8·0 प्रतिशत जन्म, 19·0 प्रतिशत सम्पत्ति, 14·0 प्रतिशत व्यवसाय एवं 59·0 प्रतिशत शिक्षा तथा अनुसूचित जातियों में 5·0 प्रतिशत जन्म, 24·0 प्रतिशत सम्पत्ति, 21·0 प्रतिशत व्यवसाय तथा 50·0 प्रतिशत लोगों ने शिक्षा को सामाजिक स्थिति का निर्धारक तत्व माना है (सारिणी संख्या 7)

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि लोगों के विचार एवं व्यवहार में सामाजिक प्रस्थिति के सन्दर्भ में भारी परिवर्तन आ चुका है। जन्म और व्यवसाय के विपरीत अनेक लोगों ने सम्पत्ति और शिक्षा को ही सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारक तत्व माना है। लोगों के विचारों में यह परिवर्तन "अर्जित सामाजिक मूल्यों" के उत्पन्न होने का स्पष्ट संकेत है।

उत्तरदाताओं से एक दूसरा प्रश्न किया गया कि क्या "आपका पेशा आपकी सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठाने में सहायक हुआ है"? इस प्रश्न के उत्तर में 70·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 75·0 प्रतिशत भूमिहार, 73·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 60·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति और 38·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोगों ने सकारात्मक उत्तर दिया। 62·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोगों ने नकारात्मक उत्तर दिया। इसके पीछे यही कारण है कि अनुसूचित जातियों का जातिगत पेशा चर्म कार्य था, परन्तु उसे छोड़कर वे अब मजदूरी करने लगे हैं

सारिणी संख्या 7 : सामाजिक समानता और बदलते मूल्य

क्रमसंख्या जाति	कौन कारक आपकी सामाजिक स्थिति का निर्धारण करता है?				क्या आपका पेशा आपकी सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठाने में सहायक हुआ है?			अच्छा पेशा अपनाकर क्या अपनी सामाजिक स्थिति को ऊँचा सकते हैं?			क्या सामाजिक स्थिति अपरिवर्तनशील है?			क्या सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अच्छा बनाने का पर्याप्त अवसर आपको उपलब्ध है?		
	जन्म	सम्पत्ति	व्यवसाय	शिक्षा	हाँ	नहीं	तटस्थ	हाँ	नहीं	अनिश्चित	हाँ	नहीं	अनिश्चित	हाँ	नाहीं	अनिश्चित
1-ब्राह्मण 100	6	20	12	62	70	22	8	88	4	8	20	64	16	60	34	6
2-भूमिहार 100	7	16	10	67	75	18	7	85	7	8	38	50	12	64	30	6
3-क्षत्रिय 100	6	17	11	66	73	17	10	86	6	8	40	51	9	65	28	7
4-मध्यवर्गीय या पिछड़ी जातियां 100	8	19	14	59	60	35	5	91	5	4	42	45	13	49	49	2
5-अनसूचित जाति 100	5	24	21	50	38	50	12	90	-	10	30	58	12	39	52	9

और भारतीय समाज में मजदूर की सामाजिक प्रतिष्ठा निम्न है। सम्भवतः मजदूरी का व्यवसाय करने वाले लोगों ने यह माना है कि उनका पेशा उनकी सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठाने में सहायक नहीं हुआ है। इसी क्रम में उत्तरदाताओं से एक दूसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आप अच्छा पेशा अपनाकर अपनी सामाजिक प्रस्थिति को ऊँचा उठा सकते हैं ? 88·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 85·0 प्रतिशत भूमिहार, 86·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 91·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति के लोग तथा 90·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोगों ने सकारात्मक उत्तर दिया। अन्य प्रश्नों की अपेक्षा इस प्रश्न में हाँ का प्रतिशत बहुत अधिक है। इसका कारण यह है कि ग्रामीण परिवेश में रहने वाले लोगों की आय अत्यन्त कम है तथा उनका जीवन स्तर भी निम्न है, इसी कारण अनेकों लोगों में व्यावसायिक परिवर्तन की भावनाएँ अत्यधिक हैं। पिछड़ी जातियों और अनुसूचित जातियों में हाँ का प्रतिशत अत्यधिक होने का कारण सिर्फ गरीबी के कारण उत्पन्न व्यावसायिक परिवर्तन की भावना है।

उत्तरदाताओं से अगला प्रश्न किया गया कि "क्या आप सोचते हैं कि अपने समुदाय में आपकी सामाजिक प्रस्थिति स्थाई है, जो कभी बदल नहीं सकती ? उत्तरदाताओं में 64·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 50·0 प्रतिशत भूमिहार, 51·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 45·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियाँ तथा 58·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोगों ने नकारात्मक उत्तर दिया जबकि क्रमशः 16·0प्रतिशत, 12·0 प्रतिशत, 9·0 प्रतिशत, 13·0 प्रतिशत तथा 12·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग इस प्रश्न पर तटस्थ हो गये। इन आकड़ों से यह अर्थ निकलता है कि समाज का लगभग दो तिहाई जनमत यह मानता है कि सामाजिक प्रस्थिति स्थाई नहीं है। इसे अर्जित किया जा सकता है।

एक दूसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आपको अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अच्छा बनाने का पर्याप्त अवसर उपलब्ध है ? इस प्रश्न के उत्तर में तीन विकल्प रखे गये थे --(1) हाँ, (2) नहीं तथा (3) अनिश्चित । उत्तर में ब्राह्मण जाति में क्रमश: 60, 34 व 6·0 प्रतिशत, भूमिहार में 64, 30 तथा 6·0 प्रतिशत, क्षत्रिय जाति में 65, 28 तथा 7·0 प्रतिशत, पिछड़ी जातियों में 49, 49 तथा 2·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति में 39, 52 तथा 9·0 प्रतिशत लोगों ने उत्तर दिये। तीनों ऊँची जातियों का हाँ का प्रतिशत अधिक है और पिछड़ी जाति तथा अनुसूचित जाति में हाँ का प्रतिशत अपेक्षाकृत कम है। इसका कारण यह है कि गाँवों में ऊँची जातियों में छोटी जातियों की अपेक्षा शिक्षा का प्रतिशत अधिक है और वे समाज द्वारा प्रदत्त आर्थिक अवसरों के प्रति जागरूक हैं। जबकि छोटी जातियों के लोग अशिक्षा के कारण सामाजिक, आर्थिक अवसरों की उपलब्धता को समझ न पाने के कारण ऐसा मानते हैं कि कोई अवसर सामाजिक या आर्थिक प्रगति का उपलब्ध नहीं है।

व्यक्ति की आकांक्षाएं

व्यक्ति की व्यक्तिगत आकांक्षाओं और उसकी प्रेरणाओं के सन्दर्भ में अनेकों समाज-शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक अध्ययन हुए हैं, जिसमें यह बल दिया गया है कि सामाजिक या व्यावसायिक गतिशीलता का कारण व्यक्ति की आकांक्षाएँ एवं उसकी प्रेरणाएँ ही है। इस तथ्य की पुष्टि हमारे अध्ययन द्वारा भी होती है।

सारिणी संख्या 8 के आधार पर हम निम्न निष्कर्ष निकाल सकते हैं --

1- जब लोगों से प्रश्न किया गया कि "क्या अपने जीवन में जो कुछ भी आपने उपलब्ध किया है, वह आपके भाग्य का परिणाम है ? तो अधिकांश लोगों ने सकारात्मक उत्तर दिया। नकारात्मक उत्तर देने वालों की संख्या अपेक्षाकृत कम थी। इससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय ग्रामीण जीवन कर्म की अपेक्षा भाग्य की महत्ता समझता है, क्योंकि वैज्ञानिक एक तकनीकी प्रगति के बावजूद भी हिन्दू समाज की आस्था ईश्वर एवं भाग्य में अटूट है, जबकि कुछ लोग कर्म को ही प्रधान मानकर ग्रामीण जीवन में व्याप्त वैज्ञानिक और तकनीकी प्रभाव का स्पष्ट परिचय दिया है। भारतीय ग्रामीण जीवन में शिक्षा की कमी के कारण अनेकानेक लोग भाग्यवादी बने हुए हैं। ब्राह्मण जाति में 62·0 प्रतिशत, भूमिहार में 64·0 प्रतिशत, क्षत्रिय में 63·0 प्रतिशत, पिछड़ी जातियों में 66·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में 71·0 प्रतिशत लोगों ने अपनी उपलब्धियों को भाग्य का ही परिणाम माना है।

2- लोगों से जब दूसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आप कठिन परिश्रम से अपनी स्थिति में सुधार ला सकते हैं" ? तो उत्तरदाताओं में 96·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 95·0 प्रतिशत भूमिहार, 97·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 93·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियां तथा 93·0 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के लोगों ने सकारात्मक उत्तर दिया। इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समाज में ऊँचा उठने की आकांक्षाएं सभी जातियों में बहुत अधिक है, लेकिन अवसर के अभाव में वे ऐसा नहीं कर पा रहे हैं। उनमें व्यावसायिक परिवर्तन की भावनाएं भी उतनी

सारिणी संख्या 8 : प्रेरणाएं एवं आकांक्षाएं

क्रमसंख्या	जाति	क्या आप सोचते हैं कि जीवन में जो कुछ भी आपने उपलब्ध किया है वह आपके भाग्य का परिणाम है?		क्या आप साक्ते हैं कि कठिन परिश्रम से आप अपने जीवन की स्थिति में सुधार ला सकते हैं?		क्या आप अपने वर्तमान जीवन से सन्तुष्ट हैं? या कभी इसे बेहतर बनाने की इच्छा रखते हैं?	
		हां	नहीं	हां	नहीं	हां (सन्तुष्ट)	नहीं (बेहतर बनाने की इच्छा रखते हैं)
1-ब्राह्मण	100	62	38	96	4	7	93
2-भूमिहार	100	64	36	95	5	8	92
3- क्षत्रिय	100	63	37	97	3	6	94
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	66	34	93	7	11	89
5- अनसूचित जातियां	100	71	29	93	7	3	97

ही प्रबल हैं। नकारात्मक उत्तरदाताओं की संख्या अत्यल्प है, और वे ही लोग हैं जिनकी उम्र ढल चुकी है और काम करने में असमर्थ हैं।

3- एक तीसरा प्रश्न लोगों से किया गया कि "क्या आप अपने वर्तमान जीवन से सन्तुष्ट हैं, या कभी इसे बेहतर बनाने की इच्छा रखते हैं?" तो लगभग सभी लोगों ने नकारात्मक उत्तर दिया अर्थात् अपने जीवन से लोग सन्तुष्ट नहीं हैं, बल्कि इसे बेहतर बनाने की इच्छा रखते हैं। बेहतर बनाने की इच्छा रखने वालों में ब्राह्मण 93·0 प्रतिशत, भूमिहार 92·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 94·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति 89·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति 97·0 प्रतिशत हैं। जो थोड़े से लोग सन्तुष्ट हैं वे सारे लोग ढलती उम्र के प्रतिनिधि हैं।

गतिशीलता की आकांक्षाओं की माप के लिए समाजशास्त्रियों द्वारा दो तरीके सुझाए गये हैं[35] --

(अ) <u>निरपेक्ष माप</u> - लोगों की तुलना उनकी शैक्षणिक, व्यावसायिक और आय के सन्दर्भ में एक दूसरे से की जाती है। जो लोग उच्च शिक्षा, उच्च व्यवसाय और उच्च आय प्राप्ति की इच्छा व्यक्त करते हैं, उनमें (यह जानना चाहिए कि) तीव्र गतिशीलता की आकांक्षाएं विद्यमान हैं।

(ब) <u>सम्बन्धित माप</u> - व्यक्ति की शिक्षा, व्यवसाय और आय की तुलना उसके माता-पिता की शिक्षा, व्यवसाय और आय से की जानी चाहिए।

एक समाजशास्त्रीय अध्ययन में पाया गया है कि मध्यवर्ग के लड़कों में निरपेक्ष आकांक्षाएँ पाई जाती है तथा निम्नवर्ग के लड़कों में सम्बन्धित आकांक्षाएँ विद्यमान रहती हैं।

पीढ़ीगत व्यावसायिक गतिशीलता

परम्परागत प्राचीन भारतीय समाज में सभी जाति के व्यक्तियों के लिए व्यवसाय निश्चित थे। भारतीय हिन्दू समाज वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित समाज था, और प्रत्येक वर्ण का कार्य निश्चित था। ये वर्ण चार थे --(अ) ब्राह्मण, (ब) क्षत्रिय, (स) वैश्य और (द) शूद्र - इन वर्णों की उत्पत्ति ईश्वरीय मानी जाती थी, जैसाकि वेदों से प्राप्त तथ्यों के अनुसार--

ब्राह्मणो स्य मुखमासीद्, बाहु राजन्य: कृत:,
उरूतदस्य यदद्वैश्य:, पदाभ्याम् शूद्रो जायत् ।[37]

अर्थात् ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण, भुजा से क्षत्रिय, पेट और जंघा से वैश्य तथा पैर से शूद्र की उत्पत्ति हुई। वेद का उपर्युक्त श्लोक प्रतिकात्मक है। इसका अर्थ यह लगाया जाता है कि ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण की उत्पत्ति अर्थात् शरीर में जो कार्य मुख और मस्तिष्क का है, वही कार्य ब्राह्मणों का भी है अर्थात् ब्राह्मण वर्ण के लोग वेद पढ़ने और पढ़ाने तथा धार्मिक क्रिया-कलापों को सम्पन्न करने का कार्य करते हैं। क्षत्रिय वर्ण की उत्पत्ति ब्रह्मा के बाहु से अर्थात् शरीर में बाहु या भुजा का कार्य रक्षा से सम्बन्धित है, अत: क्षत्रिय वर्ण के लोग रक्षा का कार्य करते हैं, वे राजा और सेनापति, पुलिस या फौज का का कार्य करते हैं। वैश्य की उत्पत्ति पेट और जंघा से हुई। पेट और जंघा शरीर के पोषण का कार्य करता है। पेट का भोजन समस्त शरीर को पहुंचाया जाता है, इस प्रकार वैश्य वर्ण के लोग कृषि, पशुपालन और व्यापार के द्वारा समस्त समाज का पोषण करते हैं। पैर से शूद्र की उत्पत्ति हुई। पैर शरीर की सेवा करता है। अत: शूद्र वर्ण को समाज का

सेवक कहा गया है। इस प्रकार उपर्युक्त तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि परम्परागत भारतीय समाज में सभी वर्णों के कार्य निश्चित थे। पहले वर्ण की सदस्यता गुण पर आधारित थी, और इनका विभाजन भी गुण के आधार पर ही किया गया था, जैसाकि गीता में श्रीकृष्ण ने कहा भी है कि "चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं, गुण-कर्म विभागशः" । परन्तु कालान्तर में आगे चलकर इन वर्णों ने जाति का स्वरूप प्राप्त कर लिया और अब वर्ण की सदस्यता गुण के आधार पर न होकर जन्म के आधार पर होने लगी। इन वर्णों की कार्यों के आधार पर सामाजिक प्रतिष्ठा भी निर्धारित थी। ब्राह्मण वर्ण सबसे उच्च स्थान को प्राप्त था। इसके बाद दूसरे स्थान की सामाजिक प्रतिष्ठा क्षत्रिय वर्ण को तीसरे स्थान की प्रतिष्ठा वैश्य वर्ण को तथा सबसे निम्न प्रतिष्ठा शूद्र वर्ण को प्राप्त थी। प्रतिष्ठा के आधार पर ही इन वर्णों का स्तरीकरण भी था। इस प्रकार पूरा भारतीय हिन्दू समाज इन चार वर्णों में स्तरीकृत था।

वैज्ञानिक प्रगति के फलस्वरूप टेक्नालाजी और उद्योगों का विकास हुआ। इसके साथ ही साथ नये-नये व्यवसायों की उत्पत्ति हुई। सामन्त प्रथा का अन्त हुआ। पुरानी सामाजिक संरचनाएँ टूटने लगी और नये जनतान्त्रिक, सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों की स्थापना होने लगी, जिसके परिणामस्वरूप वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित हिन्दू समाज में व्यापक परिवर्तन आने लगे। आज बीसवी शताब्दी के अन्त में सामाजिक प्रतिष्ठा वर्ण या जाति के आधार पर निश्चित नहीं की जाती, बल्कि इनका निर्धारण औद्योगीकरण के द्वारा निर्मित उच्च पदों एवं व्यवसायों के आधार पर किया जाताहै। इस प्रकार व्यवसायों में भारी परिवर्तन आ चुका है। व्यवसायों के परिवर्तन से नये व्यवसायों का स्तरीकरण एक नई समस्या

उत्पन्न करता है। पहली समस्या गतिशीलता से सम्बन्धित है। ऊपर की ओर गतिशीलता और नीचे की ओर गतिशीलता की माप तथा दूसरी व्यवसायों से सम्बन्धित प्रस्थिति और उनकी प्रतिष्ठा की मूल्य की माप।

ये दोनों ही बहुत जटिल समस्याएँ हैं और इनके विश्लेषण के लिए मिश्रित तकनीक की आवश्यकता है। इस अध्ययन में हमने लिप्सेट-बेन्डिक्स की तकनीक का प्रयोग किया है। यह तकनीक अन्य तकनीकों की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय है। हमने उत्तरदाताओं के व्यवसायों के अतिरिक्त उनके बाबा और पिता के व्यवसायों को भी खोजने का प्रयास किया है और लिप्सेट-बेन्डिक्स व्यावसायिक स्तरीकरण माडल के अनुसार विभिन्न व्यवसायों को उनकी प्रतिष्ठात्मक मूल्यों के आधार पर स्तरीकृत किया है। हमने विभिन्न पीढ़ियों की ऊपर तथा नीचे की ओर गतिशीलता की प्रवृत्ति को इस तकनीक के आधार पर विश्लेषित करने का प्रयास किया है। लिप्सेट और बेन्डिक्स ने विभिन्न व्यवसायों को निम्नक्रम में व्यवस्थित किया है[38] --

1- बिना श्रम-सम्बन्धी (नान-मैनुअल) अधिकांश पुरुष व्यवसायों की प्रतिष्ठा, श्रम सम्बन्धी (मैनुअल) अधिकांश व्यवसायों, यहाँ तक कि कौशलपूर्ण व्यवसायों की अपेक्षा अधिक है।[39]

2- श्रम सम्बन्धी रोजगार की अपेक्षा पुरुषों की सफेद-पोश स्थितियाँ सामान्य रूप से अधिक आय का प्रतिनिधित्व करती हैं।

3- श्रम-सम्बन्धी कार्यों की अपेक्षा बिना श्रम-सम्बन्धी स्थितियों के लिए अधिक शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है।

4- बिना-श्रम सम्बन्धी कार्य करने वाले लोग, यहाँ तक कि बहुत ही छोटे सफेद-पोश कार्य करने वाले लोग, श्रम-सम्बन्धी कार्य करने वाले लोगों की अपेक्षा अपने को अपने कार्यों और व्यवहारों से मध्यवर्ग का महसूस करते हैं।[40]

5- श्रम-सम्बन्धी कार्य करने वालों की अपेक्षा निम्नवर्गीय बिना श्रम-सम्बन्धी कार्य करने वाले लोगों में अधिक राजनीतिक व्यवहार पाये जाते हैं, जो उच्चम-मध्य वर्ग के समतुल्य है।

औद्योगीकरण और नगरीकरण ने एक सार्वभौम-सर्वदेशीय जीवन पद्धति का विकास किया है और एक अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठन का विकास किया है। इसके साथ ही साथ एक सामान्य प्रतिष्ठा और प्रस्थिति वाले व्यवसायों का विकास भी हुआ है। व्यवसायों की प्रतिष्ठात्मक स्तरीकरण की ओर अनेकों इन सामाजिक शोधकर्ताओं का ध्यान आकृष्ट हुआ है, जो स्तरीकरण और गतिशीलता के अध्ययन में रुचि रखते हैं।[41] इस तथ्य की पुष्टि व्यावसायिक प्रतिष्ठा के सन्दर्भ में सम्पन्न दो अध्ययनों के द्वारा होती है। ये अध्ययन संयुक्त राज्य अमेरिका में, "नेशनल ओपिनियन सेन्टर" द्वारा 1947 में और 1961 में किये गये हैं। किन्तु कुछ वर्षों में व्यावसायिक स्तरीकरण के सन्दर्भ में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुए हैं। ऐसे किसी भी अध्ययन से यह प्रमाण नहीं मिलता है कि व्यावसायिक प्रतिष्ठा का स्तरीकरण एक देश से दूसरे देश और एक ही देश में भिन्न-भिन्न समुदायों में भिन्न-भिन्न है[42] ।

शोधकर्ता ने अपने अध्ययन में विभिन्न व्यवसायों का वर्गीकरण उनकी प्रतिष्ठा के आधार पर इस प्रकार प्रस्तुत किया है --

1- श्रम-सम्बन्धी व्यवसाय

इस श्रेणी के व्यवसायों में हमने जातिगत पेशा, और कृषि मजदूर को सम्मिलित किया है। प्रतिष्ठा के दृष्टिकोण से इन व्यवसायों को सबसे निचले स्तर पर माना गया है (ब्राह्मण जाति के पेशे के अतिरिक्त) ।

2- बिना श्रम-सम्बन्धी व्यवसाय

व्यापार, वाणिज्य और खेती करवाना इस श्रेणी के अन्तर्गत रखे गये हैं। व्यावसायिक गतिशीलता और सामाजिक प्रतिष्ठा के दृष्टिकोण से यह श्रेणी श्रम सम्बन्धी व्यवसाय से उच्च तथा सफेद-पोश कार्यो से निम्न स्थान को प्राप्त हैं। यद्यपि आज भी गाँवों में जिन लोगों के पास कृषि योग्य भूमि अधिक है, उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा भी उच्च है, लेकिन यह स्थिति जमीन्दारी प्रथा की देन है, लेकिन बदलते मूल्यों और सामाजिक प्रतिष्ठा के बदलते परिवेश के आधार पर हमने खेती करने वालों को इस श्रेणी में रखा है।

3- सफेद पोश कार्य (नौकरी इत्यादि)

इस श्रेणी के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की सरकारी, अर्ध-सरकारी या व्यक्तिगत क्षेत्र की नौकरियों जैसे-- क्लर्क, अध्यापक, इन्जीनियर, डाक्टर, वकील, पुलिस या सेना की नौकरी इत्यादि को रखा गया है।

परम्परागत व्यवसाय

उपर्युक्त व्यावसायिक स्तरीकरण और वर्गीकरण के आधार पर हम अगले पृष्ठों में व्यावसायिक गतिशीलता का विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे।

भारतीय समाज की परम्परागत आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था में पारिवारिक पेशे निर्धारित थे, जिसका हस्तान्तरण परिवार की अगली पीढ़ी के सदस्यों को हो जाता था। परन्तु आधुनिक युग में विज्ञान के विकास के फलस्वरूप पूरे समाज का औद्योगीकरण और औद्योगीकरण के फलस्वरूप नगरीकरण की प्रक्रिया तीव्र हुई। औद्योगीकरण ने समाज में नये-नये व्यवसायों की उत्पत्ति कर डाली। नये व्यवसायों की उत्पत्ति ने प्रत्येक व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित किया, और व्यक्ति द्वारा व्यवसायों के चयन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। अत: उत्तरदाताओं के पारिवारिक परम्परागत पेशे को जान लेना इस अध्ययन में आवश्यक प्रतीत होता है। सारिणी 9 के परिणामों को निम्न तरीके से प्रस्तुत कर सकते हैं --

सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 21·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा जातिगत है, जिसमें 24·0 प्रतिशत ब्राह्मणों का परम्परागत पारिवारिक पेशा पुरोहित कार्य है। लेकिन साथ ही साथ ये लोग कृषि कार्य भी करवाते हैं। इसी प्रकार 15·0 प्रतिशत क्षत्रियों का परम्परागत पारिवारिक पेशा रक्षा कर्म है, लेकिन यह उस रूप में नहीं है, जिस रूप में क्षत्रिय वर्ण का कर्म परम्परागत व्यवस्था में निर्धारित था, बल्कि ये पुलिस और फौज की नौकरी करने वाले लोग हैं, जिनके परिवार का परम्परागत पेशा कृषि कर्म भी है। यद्यपि इस अध्ययन में इस जाति के लोगों के कार्यों को भी जातिगत पेशे के आधार पर श्रम-सम्बन्धी पेशों के वर्ग में ही रखा गया है, परन्तु वास्तव में इन जातियों के लोग श्रम-सम्बन्धी कोई कार्य नहीं करते हैं। पिछड़ी जातियों में 40·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में 26·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं का परिवार ऐसा है, जिसके परिवार का परम्परागत पेशा श्रम-सम्बन्धी है, भूमिहार जाति के लिए किसी जातिगत पेशें का निर्धारण सामाजिक व्यवस्था में नहीं था, इसलिए

भूमिहार जाति के लिए कोई जातिगत पेशा उत्पन्न नहीं हो सका। वास्तव में वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत भूमिहार जाति भी ब्राह्मण जाति की समकक्ष मानी जाती है। इस जाति के अधिकांश लोग कृषि कर्म में ही संलग्न पाये जाते हैं। ब्राह्मण, भूमिहार और क्षत्रिय जाति का कोई भी उत्तरदाता कृषि मजदूर नहीं है। कृषि मजदूरों की संख्या पिछड़ी जातियों में 24·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में 69·0 प्रतिशत है। इस प्रकार उपर्युक्त विवरण के आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि ग्रामीण समाज में आज भी जाति प्रथा अपनी सुदृढ़ स्थिति में है, और अधिकांश निम्न जातियों के लोग अपने जातिगत पेशे से जुड़े हुए हैं। उत्तर भारत में खासतौर से पूर्वी उत्तर प्रदेश में ब्राह्मण, भूमिहार और क्षत्रिय प्रमुख रूप से खेतिहर हैं।

2- 58·40 प्रतिशत उत्तरदाताओं का परम्परागत व्यवसाय बिना श्रम सम्बन्धी कार्य है जिसमें से 55·60 प्रतिशत उत्तरदाताओं का परम्परागत पेशा कृषि कर्म है, तथा केवल 2·80 प्रतिशत उत्तरदाता वाणिज्य और व्यापारिक पेशे से सम्बन्धित हैं। यहाँ पर कृषि कार्य करने वा को बिना-श्रम सम्बन्धी पेशों की श्रेणी में रखा गया है। सामान्य अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि कृषि कार्य करवाने वाले ये लोग उच्च एवं उच्च-मध्य वर्ग के लोग हैं। इसी प्रकार व्यापार और वाणिज्य का कर्म करने वाले लोगों को भी इसी श्रेणी में रखा गया है, लेकिन एक अच्छे खेतीहर की सामाजिक प्रतिष्ठा छोटे-मोटे व्यवसाय (व्यापार) करने वालों की अपेक्षा अधिक है।

3- केवल 2·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के के परिवार का परम्परागत पेशा सफेद-पोश कार्य है। जिनमें डाक्टर, वकील, इन्जीनियर, अध्यापक

क्लर्क और अन्य नौकरियों को करने वाले लोग हैं। यह स्पष्ट है कि कुल विभिन्न प्रकार के नये व्यवसायों की उत्पत्ति हुई है और अधिकांश मामलों में व्यावसायिक गतिशीलता की गति ऊपर की ओर ही है। उत्तरदाताओं से एक दूसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आपके परिवार का कोई सदस्य आज भी परम्परागत पेशे में लगा हुआ है" ? तो इस प्रश्न का सकारात्मक उत्तर देने वालों में 82·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 98·0 प्रतिशत भूमिहार, 91·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 89·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियों के तथा 90·0 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के उत्तरदाता थे, अर्थात् कुल उत्तरदाताओं में से 83·34 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का कोई न कोई सदस्य आज भी अपने परम्परागत पेशे में लगा हुआ है। यहाँ पर यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि क्षत्रिय और ब्राह्मण का परम्परागत पेशा कृषि नहीं है, फिर भी इन जातियों के पूर्वजों द्वारा मुख्य रूप से कृषि पेशा अपना लेने के कारण वे कृषि को ही अपना परम्परागत पेशा मानते हैं। केवल 16·66 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का कोई भी सदस्य अपने परम्परागत व्यवसाय से संलग्न नहीं है। ये आँकड़े स्पष्ट रूप से यह इंगित करते हैं कि औद्योगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा, सामाजिक गतिशीलता और क्षेत्रीय प्रवास ने परम्परागत व्यवस्था में भरपूर परिवर्तन किया है, फिर भी अधिकांश उत्तरदाताओं के परिवार पूर्णतया न तो अपने परम्परागत व्यवसायों से अलग हुए हैं, और न तो जड़ से उखड़ ही सके हैं, बल्कि आज भी लगभग 84·0 प्रतिशत ग्रामीण उत्तरदाताओं के परिवार अपने परम्परागत व्यवसायों में ही संलग्न है और लगभग 16·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार ही अपने परम्परागत व्यवसायों से अलग हो सके हैं।

सारिणी संख्या 9 : उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत् पेशा

क्रमसंख्या	जाति (उत्तरदाताओं की संख्या सहित)	श्रम (हाथ) सम्बन्धी कार्य (मैनुअल)		बिना श्रम सम्बन्धी कार्य (नान-मैनुअल)		सफेद पोश कार्य जैसे नौकरी (ह्वाइट कालर)	क्या आपके परिवार का कोई सदस्य आज भी परम्परागत पेशे में लगा हुआ है ?	
		जातिगत पेशा	कृषि मजदूर	खेती करवाना	दुकानदारी और व्यापार		हाँ	नहीं
1- ब्राह्मण	100	24 (पुरोहित) (साथ-साथ कृषिकार्य)	-	74	-	2	82	18
2- भूमिहार	100	-	-	98	-	2	98	2
3- क्षत्रिय	100	15 (फौज और पुलिस)	-	76	4	5	91	9
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	40 पशुपालन, लोहारी, कोहारी, भड़भुजई, पानी भरना आदि	24	25	10	1	89	11
5- अनुसूचित जाति	100	26	69	5	-	-	90	10

सारिणी संख्या 9 के आधार पर जब हम उत्तरदाताओं के परिवारों के परम्परागत पेशों पर विचार करते हैं, तो पता चलता है कि ब्राह्मण जाति के केवल 24·0 प्रतिशत उत्तरदाता पुरोहिती कर्म करने वाले परिवारों से सम्बद्ध हैं, जबकि ब्राह्मण जाति का मुख्य पेशा पुरोहित कर्म ही है। 74·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाता शुद्ध रूप से कृषक परिवारों के हैं। ये परिवार पुरोहित कर्म बिल्कुल नहीं करते हैं। इनमें केवल 2·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा सफेद पोश कार्य है, जिन 24·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा पुरोहित कर्म है, वे भी केवल पुरोहित कर्म ही नहीं करते,अपितु साथ ही साथ वे कृषि कार्य भी करते हैं। पशु-पालन भी ये लोग करते हैं।

"भूमिहार" जाति जिसे "भूमिहार ब्राह्मण" भी कहा जाता है, का मुख्य परम्परागत पेशा कृषि है। पौराणिक गाथाओं के रूप में यह प्रचलित तथ्य है कि भगवान् परशुराम ने क्षत्रिय राजाओं का विनाश कर उनकी भूमि जिन ब्राह्मणों को दान स्वरूप प्रदान कर डाली, वे ब्राह्मण ही भूमिहार कहलाये। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि भूमिहार जाति का परम्परागत पेशा कृषि रही है। इस अध्ययन में भी सारिणी संख्या 9 से यह स्पष्ट है कि 98·0 प्रतिशत भूमिहार उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा कृषि है। केवल 2·0 प्रतिशत भूमिहार उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा सफेद पोश कार्य है। क्षत्रिय जाति के लोग वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत समाज की रक्षा का कार्य करते थे। इस जाति के लोग ही राजा और प्रशासक हुआ करते थे। इस आधार पर यदि हम देखें तो केवल 15·0 प्रतिशत क्षत्रिय उत्तरदाताओं के परिवार पुलिस और

फौज जैसी सुरक्षा के जिम्मेदार संगठनों के सदस्य हैं, जबकि 76·0 प्रतिशत क्षत्रिय उत्तरदाताओं का परिवार कृषि कार्य में संलग्न है। 15·0 प्रतिशत क्षत्रियों में लगभग सभी उत्तरदाताओं का परिवार कुछ न कुछ कृषि कार्य भी करता हुआ पाया गया है। 4·0 प्रतिशत क्षत्रिय उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा वाणिज्य, व्यापार या दुकानदारी रही है। 5·0 प्रतिशत उत्तरदाता सफेद पोश कार्य करने वाले परिवारों से सम्बद्ध हैं। पिछड़ी जातियों, जिनमें कई जातियों का समावेश है, जैसे-- यदव, कुर्मी, कोहार, लोहार, कमकर, राजभर, भड़भूजा इत्यादि, इनमें 40·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवारों का परम्परागत पेशा जातिगत है। 24·0 प्रतिशत कृषि मजदूर हैं, और 25·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार छोटे-मोटे सीमान्त कृष हैं, लेकिन व्यवसाय के रूप में ये कृषि के साथ-साथ पशुपालन भी करते हैं। ये जातियाँ कृषि भूमि से करीब-करीब वंचित हैं, शिक्षा का अभाव है, अत: इनमें से अधिकांश उत्तर-दाताओं के परिवार अपने जातिगत पेशों में ही लगे हुए हैं। पिछड़ी जातियों से ही बनिया जाति भी सम्बद्ध है, अत: 10·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियों के उत्तरदाताओं के परिवारों का परम्परागत पेशा दुकानादी और व्यापार है। पिछड़ी जाति का केवल 9·0 प्रतिशत उत्तरदाता के परिवार का परम्परागत पेशा सफेद पोश कार्य है। अनुसूचित जाति का परम्परागत पेशा चर्म कार्य रहा है, लेकिन इस सारिणी से स्पष्ट है कि केवल 26·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार ही कभी-कभार इस कार्य में संलग्न पाये जाते हैं। गाँवों में जब किसी के जानवर मर जाते हैं तो उन जानवरों की खाल छुड़ाने का कार्य कार्य ये लोग करते हैं। 69·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा मजदूरी है। ये या तो कृषि मजदूर हैं, या दैनिक वेतन पर मिट्टी-गारा इत्यादि का

NORTH-EASTERN HILL UNIVERSITY LIBRARY
103542
Date 7-7-05

काम करने वाले मजदूर हैं। इस जाति के केवल 5.0 प्रतिशत उत्तर-दाताओं के परिवार का परम्परागत पेशा कृषि है, लेकिन इनकी जीविका का साधन कृषि ही नहीं है, अपितु ये कृषि मजदूर भी हैं। इस जाति का कोई सदस्य व्यापार या सफेद पोश कार्यों से संलग्न नहीं है।

इस सारिणी से यह स्पष्ट है कि ग्रामीण समुदाय की अधिकांश बड़ी जातियों के लोग कृषि कार्य में और छोटी जातियों के अधिकांश लोग या तो अपने जातिगत पेशों में संलग्न रहे हैं या कृषि मजदूर रहे हैं।

अन्तर-पीढ़ीगत व्यावसायिक गतिशीलता

अन्तर-पीढ़ीगत व्यावसायिक परिवर्तन का अध्ययन, सामाजिक परिवर्तन और उसकी गतिशीलता की दिशा को परम्परागत समाज में समझने में सहायता प्रदान करेगा। दुर्भाग्यवश भारतवर्ष में इस क्षेत्र में बहुत कम कार्य हुए हैं। सारिणी 10 से यह स्पष्ट है कि बाबा, पिता और स्वयं उत्तर-दाताओं की इन तीन पीढ़ियों के बीच व्यावसायिक परिवर्तन पर्याप्त मात्रा में हुआ है। पश्चिमी जगत् के अधिकांश अध्ययनों में दो पीढ़ियों(पिता-पुत्र) के बीच ही व्यावसायिक परिवर्तन को जानने का प्रयास किया गया है। हमने अपने वर्तमान अध्ययन में तीन पीढ़ियों बाबा, पिता और पुत्र को सम्मिलित किया है।

उत्तरदाताओं के बाबा और पिता की पीढ़ियों के बीच तुलनात्मक अध्ययन -

<u>ब्राह्मण जाति</u> : 24.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के बाबा अपने जातगत पेशे, पुरोहित कर्म में संलग्न थे। यद्यपि पुरोहित कर्म को मैंने इस सारिणी

में श्रम-सम्बन्धी कार्यों में ही सम्मिलित किया है, क्योंकि पुरोहित कर्म भी ब्राह्मण जाति का जातिगत पेशा है, यद्यपि इस पेशे में शारीरिक श्रम की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती है। पुरोहित कर्म में संलग्न उत्तरदाताओं के ये बाबा केवल पुरोहित कर्म से ही अपनी जीविका नहीं चलाते, अपितु ये लोग साथ ही साथ कृषि कार्य भी करते थे। इस जाति में कृषि मजदूर कोई नहीं था। शुद्ध रूप से कृषि करवाने वाले लोग 74·0 प्रतिशत थे, और केवल 2·0 प्रतिशत लोग ही नौकरी इत्यादि में संलग्न थे। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में 16·0 प्रतिशत लोग ही पुरोहित कर्म में संलग्न थे, कृषि कार्य में 60·0 प्रतिशत तथा सफेद पोश कार्य जैसे-- नौकरी इत्यादि में 24·0 प्रतिशत लोग संलग्न हो गये थे। सारिणी संख्या 11 से स्पष्ट है कि केवल 6·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही कृषि के साथ पुरोहित कर्म करते हैं, 20·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य करवाते हैं, 6·0 प्रतिशत लोग दुकानदारी, 38·0 प्रतिशत लोग नौकरी तथा 30·0 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षा में संलग्न पाये गये हैं। इस सारिणी से यह स्पष्ट होता है कि बाबा से उत्तरदाताओं की पीढ़ियों तक लगातार जातिगत पेशे अर्थात् पुरोहित कर्म करने वालों का प्रतिशत कम होता गया है। इसी प्रकार कृषि कार्य करने वालों का प्रतिशत भी लगातार कम होता गया है, लेकिन सफेद पोश कार्य करने वालों का प्रतिशत लगातार बढ़ता गया है। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 6·0 प्रतिशत लोग सर्वथा भिन्न पेशा, दुकानदारी की ओर भी उन्मुख हुए हैं।

पुराने परम्परागत सामन्तवादी भारतीय समाज में भूपतियों (सामन्तों) और बड़े-बड़े किसानों की सामाजिक प्रतिष्ठा बहुत ऊँची थी, लेकिन पूँजीवादी आर्थिक संरचना के निर्माण के फलस्वरूप जैसे-जैसे शिक्षा

एवं टेक्नालाजी का विकास हुआ, वैसे ही वैसे अनेकों लोग सरकारी, अर्ध-सरकारी नौकरियों और व्यवसायों (दुकानदारी-व्यापार) की ओर आकर्षित होते चले गये। जातिगत व्यवसाय धीरे-धीरे टूटने लगे। सामन्तवादी समाज में ब्राह्मण जाति को उच्च स्थान प्राप्त था, परन्तु वह प्रतिष्ठा भी पूँजीवाद के विकास के साथ ही साथ कम होने लगी, और लोगों ने पुरोहित कर्म से धीरे-धीरे अपने को बाहर कर लिया और नौकरी तथा अन्य रोजगारों को अपना लिया।

पश्चिमी दुनिया के अनेकों देशों में सरकारी उच्च-नौकरियों में रहने वाले लोगों की पृष्ठभूमि का अध्ययन किया गया है। विभिन्न देशों के इन नौकरशाहों का अध्ययन व्यावसायिक गतिशीलता के तुलनात्मक विश्लेषण में सहायक सिद्ध हुआ है।[43] ये अध्ययन यह प्रदर्शित करते हैं कि फ्रांस, जर्मनी, ब्रिटेन, स्वीडेन के नौकरशाह, अमेरिकी नौकरशाहों की अपेक्षा अधिक उच्च-प्रतिष्ठा प्राप्त परिवारों से आये हैं। योरोप के अधिकांश देशों में नौकरशाह कुलीन परिवारों से सम्बद्ध हैं, जबकि अमेरिका में यह केवल राजनयिक सेवाओं के लिए ही सत्य है।[44]

<u>भूमिहार जाति</u> : भूमिहार जाति का कोई परम्परागत जातिगत पेशा जातिव्यवस्था द्वारा निर्धारित नहीं है, क्योंकि भूमिहार जाति भी ब्राह्मण जाति की ही एक शाखा है, जिनका कार्य कृषि करवाना ही रहा है। इस प्रकार इस जाति के उत्तरदाताओं को कोई भी बाबा न तो जातिगत पेशे में थे और न तो कोई कृषि मजदूर रहा है। यह जाति कृषि प्रधान जाति रही है। जैसाकि सारिणी संख्या 10 से स्पष्ट है कि 95.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के बाबा कृषि करवाते थे। केवल 1.0 प्रतिशत बाबा ही ऐसे थे, जिनके पास जमीन नहीं थी, फलत: उन्होंने दुकानदारी

सारिणी संख्या - 10 : अन्तर-पीढ़ीगत व्यावसायिक गतिशीलता

क्रमसंख्या	जाति (संख्या सहित)		पीढ़ी	श्रम सम्बन्धी कार्य		बिना श्रम सम्बन्धी कार्य		सफेद-पेश कार्य जैसे- नौकरी
				जातिगत पेशा	कृषि मजदूर	खेती करवाना	दुकानदारी और व्यापार	
			बाबा	24 पुरोहित कार्य साथ-साथ कृषि	-	74	-	2
1-	ब्राह्मण	100	पिता	16 पुरोहित कर्म, कृषि	-	60	-	24
			बाबा	-	-	95	1	4
2-	भूमिहार	100	पिता	-	-	84	2	14
			बाबा	16 (पुलिस या फौज)	-	76	-	8
3-	क्षत्रिय	100	पिता	14 (पुलिस फौज)	-	58	2	26

क्रमशः ...

4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	बाबा	36	24	22	12	6
		पिता	26	24	29	6	14
5- अनुसूचित जाति	100	बाबा	39 कृषि कार्य सहित	56	5	-	-
		पिता	25	69	6	-	-

द्वारा अपनी जीविका का निर्वाह किया। 4·0 प्रतिशत लोग सफेद-पोश कार्यों में संलग्न पाये गये। उत्तरदाताओं की पिता की पीढ़ी में 84·0 प्रतिशत लोग कृषक, 2·0 प्रतिशत दुकानदार तथा 14·0 प्रतिशत लोग नौकरियों में थे। इस सारिणी से यह स्पष्ट होता है कि इस कृषि प्रधान जाति में भी इन दो पीढ़ियों में कृषि करवाने वाले लोगों की संख्या कम हुई है, तथा दुकानदारी और नौकरी करने वालों का प्रतिशत बढ़ा है। दुकानादी और नौकरी करने वाले अधिकांश लोग गांव की सीमा से बाहर ही कार्यरत हैं। इस प्रकार गावों में क्षेत्रीय प्रवास की दर भी बढ़ती गई है।

क्षत्रिय जाति : भारतीय हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में जो चार वर्ण निर्धारित किये गये हैं, उनके कार्य भी निर्धारित हैं। क्षत्रिय वर्ण का कार्य समाज या देश की रक्षा है, और इसे क्षत्रिय जाति का जातिगत पेशा भी माना गया है, लेकिन बदलते सामाजिक व्यवस्था में पुलिस या फौज की नौकरी या अन्य प्रशासनिक नौकरियों का आधार जातिगत न होने के कारण, यह किसी विशिष्ट जाति का पेशा नहीं है, फिर भी हमने परम्परागत कारणों से पुलिस या फौज की नौकरी को क्षत्रिय जाति के जातिगत पेशे में ही समाहित किया है। परम्परानुसार इस जाति का पेशा कृषि कार्य नहीं रहा है। लेकिन सामन्तवादी समाज में इस जाति के लोग भी सामन्त और बड़े कृषक रहे हैं, अतः कृषि भी इस जाति का परम्परागत पेशा माना गया है। सारिणी संख्या 10 से यह स्पष्ट है कि 16·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के बाबा जातिगत पेशा अर्थात् पुलिस या फौज की नौकरियों में था। 76·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य करवाते थे और 8·0 प्रतिशत लोग पुलिस या फौज के अतिरिक्त

अन्य विभागों की नौकरियों में कार्यरत थे। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में 14·0 प्रतिशत लोग पुलिस या फौज में थे। 58·0 प्रतिशत कृषक, 2·0 प्रतिशत दुकानदार और 26·0 प्रतिशत पुलिस के अतिरिक्त अन्य नौकरियों में संलग्न थे। इस जाति की कोई पीढ़ी कृषि मजदूर नहीं है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस जाति में भी जातिगत पेशे का ह्रास हुआ है। कृषि करवाने वाले लोगों की संख्या कम हुई है तथा व्यापार और नौकरी करने वालों का प्रतिशत बढ़ता गया है।

हाईस्कूल कक्षाओं के 800 विद्यार्थियों की व्यावसायिक और शैक्षणिक आकांक्षाओं को जानने के लिए एक अध्ययन सम्पन्न हुआ था, जिसमें यह पाया गया है कि निम्न वर्ग के स्तर पर बच्चों पर उनके पिता की अपेक्षा उनकी माताओं की शिक्षा और व्यवसाय का प्रभाव पड़ता है।[45] लेकिन भारतीय समाज में यह कथन गलत होगा, क्योंकि भारतीय समाज में पिता, परिवार पर प्रभावी भूमिका निभाता है और वही अपने बच्चों की भविष्य की शिक्षा और व्यवसाय को निर्धारित करता है, क्योंकि भारतीय स्त्रियों की शिक्षा अत्यल्प है और ग्रामीण जीवन में अधिकांश महिलाएं निरक्षर हैं, अत: बच्चों की भविष्य की योजनाओं पर उनका कोई खास प्रभाव नहीं पड़ता है।

<u>पिछड़ी जातियां</u> : पिछड़ी जातियों में कई जातियों का समावेश है, जैसे -- यादव, कुर्मी, नाऊ, कमकर, कोइरी, लोहार, कोहार, गोंड़, राजभर, बनिया आदि। इन सभी जातियों का अपना परम्परागत जातिगत पेशा वर्ण व्यवस्था में निर्धारित है। इन जातियों के उत्तरदाताओं के 36·0 प्रतिशत बाता अपने जातिगत पेशों में ही लगे हुए थे और 24·0 प्रतिशत कृषि मजदूर थे। इस प्रकार इस जाति में 60·0 प्रतिशत

लोग श्रम-सम्बन्धी कार्यों में संलग्न थे। 22·0 प्रतिशत लोग कृषि करते थे। 12·0 प्रतिशत दुकानदारी तथा 6·0 प्रतिशत लोग नौकरी में संलग्न थे। इस जाति में दुकानदारों का प्रतिशत अधिक होने के कारण इसमें बनिया जाति का सम्मिलित होना है, जिनका मुख्य जातिगत पेशा दुकानदारी और व्यापार है। पिछड़ी जातियों के उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी का सर्वेक्षण करने से पता चलता है कि 26·0 प्रतिशत पिता जातिगत पेशों में हैं, और 24·0 प्रतिशत कृषि मजदूर हैं। कृषि करने वालों की संख्या बाबा से बढ़कर 29·0 प्रतिशत हो गई तथा नौकरी करने वालों का प्रतिशत भी 15 है। उपर्युक्त तथ्यों को देखने से पता चलता है कि पिछड़ी जातियों में भी व्यापार और नौकरी की तरफ लोगों का झुकाव बढ़ा है, जबकि जातिगत पेशों से लोग अलग हो हटे हैं। पिछड़ी जातियों में पता चलता है कि कृषि कार्य की ओर इनका झुकाव बढ़ा है। कृषि कार्य भी पिछड़ी जातियों का जातिगत पेशा नहीं रहा है। कृषि मजदूरों की संख्या दोनों पीढ़ियों में स्थिर रही है।

<u>अनुसूचित जाति</u> : अनुसूचित जातियों का जातिगत पेशा चर्म कार्य है, लेकिन साथ ही साथ ये कृषि मजदूर भी हैं। इनके तुलनात्मक अध्ययन से पता चलता है कि 39·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के बाबा चर्म कार्य करते थे। 56·0 प्रतिशत कृषि मजदूर थे। 5·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य करते हैं। भूमि सुधार लागू होने के पश्चात् गांव समाज की जमीनों का वितरण इस जाति के लोगों में किया गया था। जो थोड़ी-बहुत जमीन मिली उसमें ये अपना गुजर-बसर करने लगे। दुकानदारी और नौकरी में इस जाति का कोई सदस्य नहीं था। अनुसूचित जाति के लोग ग्रामीण समुदाय में अत्यन्त निर्धन और निरक्षर हैं, इसलिए ये न तो दुकानदारी

करने में सक्षम हो सके और न तो नौकरी-पेशा की ओर ही उन्मुख हो सके। उत्तरदाताओं की पिता की पीढ़ी में 25·0 प्रतिशत लोग जातिगत पेशा (चर्म कार्य) में लगे थे। 69·0 प्रतिशत लोग कृषि मजदूर और 6·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य करते थे। इस जाति में कृषि मजदूरों की संख्या बढ़ी है। दुकानदारी और नौकरी में इस जाति का कोई व्यक्ति नहीं है।

परम्परागत भारतीय हिन्दू समाज का स्तरीकरण जाति पर आधारित था, और कृषि मुख्य आर्थिक आधार थी। परम्परागत रूप से कृषि योग्य भूमि के स्वामी बड़ी जातियों के लोग थे, और समाज में बड़ी जाति के लोगों का वर्चस्व भी था। भूमि केवल जीविका और आय का ही मुख्य स्रोत नहीं थी वरन यह सामाजिक प्रतिष्ठा और बड़प्पन की प्रतीक भी थी। परम्पराओं के बन्धन में जकड़े भारतीय समाज में कृषि योग्य भूमि न केवल धर्म और रीति-रिवाजों से सम्बद्ध थी, वरन् यह लोगों के व्यक्तित्व निर्माण से भीसम्बन्धित थी। परन्तु औद्योगीकरण और शिक्षा के प्रसार के परिणामस्वरूप कृषि एवं उससे सम्बन्धित सहायक व्यवसायों का मूल्य गिरने लगा और अधिकाधिक लोग उद्योगों द्वारा स्थापित नये-नये व्यवसायों और नौकरियों की ओर आकर्षित होने लगे। जमीन्दारी प्रथा के उन्मूलन और बड़े-बड़े राजघरानों को भारतीय गणराज्य में शामिल कर लिये जाने के कारण परम्परागत उच्चवर्ग की प्रतिष्ठा समाप्त हो गई।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि लगभग सभी जातियों के लोग कृषि और उससे सम्बन्धित व्यवसायों को छोड़कर उद्योगों द्वारा स्थापित

नये-नये व्यवसायों एवं नौकरियों की ओर उन्मुख होने लगे। अपने आँकड़ों के आधार पर हम निम्न निष्कर्ष प्रस्तुत कर सकते हैं --

1- बड़ी जातियों के लोग अपने परम्परागत व्यवसाय एवं कृषि से अलग हटकर दुकानदारी, व्यापार और नौकरियों की ओर उन्मुख हुए हैं, जबकि छोटी जातियों के लोग अपने जातिगत पेशों से हटकर कृषि एवं नौकरियों की ओर आकर्षित हुए हैं।

2- अनुसूचित जाति के अतिरिक्त अन्य सभी जातियों के लोगों की संख्या नौकरियों एवं व्यापार में बढ़ती गई है।

उत्तरदाताओं और उनके पिता की पीढ़ियों के बीच तुलना

सारिणी संख्या 11 से इन दोनों पीढ़ियों की व्यावसायिक गतिशीलता पर प्रकाश पड़ता है। ब्राह्मण जाति के उत्तरदाताओं के 16·0 प्रतिशत पिता अपने जातिगत व्यवसाय पुरोहित कर्म में संलग्न हैं, 60·0 प्रतिशत कृषक तथा 24·0 प्रतिशत नौकरियों में है, लेकिन केवल 6·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही पुरोहित कर्म करते हैं। केवल 20·0 प्रतिशत कृषक हैं। 6·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने जातिगत पेशे से अलग हटकर दुकानदारी करते हैं और 38·0 प्रतिशत नौकरियाँ करते हैं। 30·0 प्रतिशत उत्तरदाता अभी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। भूमिहार जाति की कोई पीढ़ी श्रम सम्बन्धी कार्यों में संलग्न नहीं है। भूमिहार जाति के 84·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पिता कृषक हैं, जो उनका परम्परागत व्यवसाय भी हैं। लेकिन 2·0 प्रतिशत पिता दुकानदारी और 14·0 प्रतिशत नौकरी करने वाले हैं। उत्तरदाताओं में केवल 27·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही कृषक हैं। 3·0 प्रतिशत दुकानदार और 34·0 प्रतिशत नौकरी में संलग्न हैं। शेष

सारिणी संख्या - 11 : उत्तरदाताओं (पुत्र) और उनके पिता की पीढ़ियों के बीच व्यावसायिक गतिशीलता

क्रमसंख्या	जाति (संख्यासहित)		पिता और पुत्र का व्यवसाय					
			श्रम सम्बन्धी कार्य		बिना श्रम सम्बन्धी कार्य		सफेद पोश कार्य	
			जातिगत पेशा	कृषि मजदूर	खेती करनवाना	दुकानदारी व्यापार	नौकरी इत्यादि	शिक्षा
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1- ब्राह्मण	100	पिता	16	-	60	-	24	-
		पुत्र	6 पुरोहित कृषि सहित	-	20	6	38	30
2- भूमिहार	100	पिता	-	-	84	2	14	-
		पुत्र	-	-	27	3	34	36
3- क्षत्रिय	100	तपिता	14	-	58	2	26	-
		पुत्र	23	-	24	2	36	15

क्रमशः....

1	2	3	4	5	6	7	8	9
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	पिता	26	24	29	6	15	-
		पुत्र	15	12	16	9	33	15
5- अनुसूचित जाति	100	पिता	25	69	6	-	-	-
		पुत्र	6	52	6	-	7	29

36·0 प्रतिशत उत्तरदाता अभी विद्यार्थी है, जो आगे चलकर नौकरी को ही अपना व्यवसाय बनायेंगे। क्षत्रिय जाति के उत्तरदाताओं के 14·0 प्रतिशत पिता ही अपने जातिगत पेशे पुलिस या फौज की नौकरी में हैं। 58·0 प्रतिशत कृषक हैं, 2·0 प्रतिशत दुकानदार तथा 26·0 प्रतिशत लोग नौकरी करने वाले हैं। क्षत्रिय जाति के 23·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने जातिगत पेशा पुलिस में हैं, लेकिन इसे जातिगत पेशा न मानकर बल्कि नौकरी मानकर इस पेशे में है। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 24·0 प्रतिशत कृषक हैं, 2·0 प्रतिशत दुकानदार तथा 36·0 प्रतिशत नौकरी करने वाले लोग हैं। 15·0 प्रतिशत उत्तरदाता विद्यार्थी हैं। पिछड़ी जाति के उत्तरदाताओं के 26·0 प्रतिशत पिता अपने श्रम सम्बन्धी जातिगत पेशे में लगे हुए थे और 24·0 प्रतिशत कृषि मजदूर थे। 29·0 प्रतिशत पिता कृषक थे और अपनी खेती वे स्वयं ही किया करते थे। इस प्रकार ये लोग भी श्रम-सम्बन्धी कार्यों में ही संलग्न थे। 6·0 प्रतिशत पिता व्यापार और दुकानदारी तथा 15·0 प्रतिशत नौकरियों में संलग्न थे। इसके विपरीत उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 15·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही अपने जातिगत पेशों में संलग्न थे और 12·0 प्रतिशत कृषि मजदूर थे। 16·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही कृषक हैं, जबकि 9·0 प्रतिशत दुकानदारी और व्यापार तथा 33·0 प्रतिशत लोग नौकरियाँ करते हैं। 15·0 प्रतिशत उत्तरदाता विद्यार्थी हैं। अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं के 25·0 प्रतिशत पिता अपने जातिगत व्यवसाय में संलग्न थे और 69·0 प्रतिशत कृषि मजदूर थे। बहुत छोटी संख्या 6·0 प्रतिशत लोग ही केवल आंशिक रूप से खेती करते हैं, नौकरी और दुकानदारी करने वाला कोई नहीं है। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 6·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही केवल अपने जातिगत पेशे में हैं और 52·0 प्रतिशत कृषि मजदूर हैं। 6·0 प्रतिशत

कृषक तथा 7·0 प्रतिशत नौकरी करने वाले लोग हैं। अनुसूचित जातियों में शिक्षार्थियों की संख्या 29·0 प्रतिशत है।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि भारतीय ग्रामीण समुदाय बहुत तेजी से अपने परम्परागत जातिगत व्यवसायों को छोड़कर अन्य व्यवसायों जैसे-- नौकरी पेशा, व्यापार-वाणिज्य और शिक्षा की ओर उन्मुख हो रहा है। इसके पीछे कई कारण प्रतीत होते हैं। भारतीय ग्रामीण समुदाय में शिक्षा का प्रसार तेजी से हुआ है, लोगों का दृष्टिकोण वैज्ञानिक हुआ है और रीति-रिवाजों का मूल्य गिरता गया है। परम्परागत पेशों में अपनी जीविका चला पाना लोगों को कठिन लगने लगा, फलत: लोगों ने अपने परम्परागत व्यवसायों को छोड़कर शिक्षा के माध्यम से नौकरियों की ओर उन्मुख होने लगे। भारतीय समाज में प्रजातान्त्रिक मूल्यों की स्थापना हो रही है, और सामन्तवादी अवशेष लगभग टूट चुके हैं, परम्पराओं के सारे बन्धन ढीले पड़ चुके हैं। पेशा विशेष के प्रति धार्मिक अन्धविश्वासों का लोप हो चुका है। इन्हीं कारणों वश लोगों ने अपने परम्परागत व्यवसायों का परित्याग करना शुरू कर दिया है।

उपर्युक्त सारिणी ।। से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि ग्रामीण समुदाय की कृषि प्रधान उच्च जातियों के लोगों ने अपने परम्परागत व्यवसायों को छोड़कर व्यापार, नौकरी और उच्च शिक्षा की ओर अग्रसर हुए हैं। छोटी जातियाँ जिनकी जीविका का साधन उनका जातिगत पेशो ही था, उसमें भी लोगों की संख्या बहुत तेजी से घटी है। लोगों ने अपने परम्परागत व्यवसायों को छोड़कर अन्य व्यवसायों को अपना लिया है। छोटी जातियों के लोगों के पास कृषि योग्य

भूमि नहीं थी, लेकिन अब ये धीरे-धीरे गाँवों में कृषक होते जा रहे हैं, परन्तु यह भी सच है कि इन पिछड़ी जातियों में कृषिक मजदूरों की संख्या बढ़ी है। इन छोटी जातियों में भी अधिकांश लोग अब शिक्षा, नौकरी और व्यापार की ओर उन्मुख हो चुके हैं। अब हरिजन जाति के लिए विद्यालयों में पढ़ना, सामाजिक अपराध नहीं माना जाता है।

पिता की शिक्षा और उसका व्यवसाय उसके पुत्रों की शिक्षा और व्यवसाय पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। उन पुत्रों के पिता जिन्होंने व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा प्राप्त की है, उनके पुत्र भी उन्हीं प्रकार के व्यवसायों और शिक्षा की ओर उन्मुख होते हैं।[46] लड़कों की शैक्षणिक उपलब्धियों में अन्तर का कारण यह है कि गरीब और निम्न प्रस्थिति के परिवारों के लड़कों को विद्यालयों में रुकने का उतना अवसर उपलब्ध नहीं हो पाता, जितना धनी और उच्च सामाजिक प्रस्थिति वाले परिवार के लड़कों का अवसर उपलब्ध हो पाता है। एक व्यक्ति जो विशेषकर श्रमिक वर्ग के परिवारों से आया है, वह सामान्यत: विद्यालयों में बहुत कम शिक्षा ग्रहण कर पाता है। विद्यालय में प्रवेश के समय उसकी भविष्य की कोई योजना नहीं होती है, अत: जब वह विद्यालय छोड़ देता है तो सबसे पहले उसे जो व्यवसाय मिल जाता है, वह उसी में लग जाता है।[47]

सारिणी संख्या 11 से हम निम्न निष्कर्ष निकाल सकते हैं --

1- ग्रामीण समुदाय की सभी हिन्दू जातियों में अपने परम्परागत व्यवसायों को छोड़ने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

2- शिक्षा और तकनीकी के प्रसार का प्रभाव ग्रामीण समुदाय पर भी पड़ा है, और सभी जातियों के अधिकांश लोग शिक्षा, नौकरी और व्यवसाय की ओर उन्मुख हुए हैं।

3- निम्न जातियों की अपेक्षा बड़ी जातियों के लोग अधिक शिक्षित हैं और उनमें व्यावसायिक परिवर्तन (जातिगत पेशा और कृषि) की आकांक्षा अधिक पाई जाती है।

उत्तरदाताओं द्वारा अपने पुत्रों के लिए पसन्द व्यवसाय

भारतीय ग्रामीण हिन्दू समुदाय में संयुक्त परिवार प्रथा का प्रचलन है। संयुक्त परिवार में परिवार के मुखिया की अहम् भूमिका होती है। लेकिन धीरे-धीरे संयुक्त परिवारों पर भी पाश्चात्य व्यक्ति वादी मूल्यों का प्रभाव पड़ा है, और अब परिवार में बच्चों के पिता की ही योजनाओं का कार्यान्वयन बच्चों की शिक्षा और उनके व्यवसाय के लिए होता है। अनेक अध्ययनों द्वारा यह पुष्टि हुई है कि माता-पिता की प्राथमिकताओं के अनुरूप ही बच्चों के व्यवसाय का चुनाव होता है।[48] व्यावसायिक गतिशीलता पर सम्पन्न अनेकों अध्ययनों से इस बात की पुष्टि हुई है कि अन्य किसी एक व्यवसाय में प्रवेश करने की अपेक्षा लड़के अपने पिता के व्यवसाय में ही प्रवेश करना ज्यादा पसन्द करते हैं। अपने पिता के व्यवसाय में प्रवेश करने के निम्न दो कारण हैं --

1- जब पुत्र अपने पिता के व्यवसाय को लाभदायक मानता है तो वह उस व्यवसाय में प्रवेश करता है, अन्यथा वह किसी दूसरे व्यवसाय की तलाश करता है।

2- व्यवसाय में परिवर्तन, व्यावसायिक आकांक्षा पर निर्भर करता है, लड़के में जब व्यावसायिक आकांक्षा अधिक पाई जाती है तो वह अपने पिता के व्यवसाय को बदलने की आकांक्षा करता है, अन्यथा वह अपने पिता के व्यवसाय को ही पसन्द करता है।[49]

हमारे अध्ययन से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। सारिणी संख्या 11 से स्पष्ट है कि अनेक लड़कों ने अपने पिता के परम्परागत व्यवसायों को अलाभकर होने के कारण एवं शिक्षा की प्रगति के फलस्वरूप उत्पन्न व्यावसायिक आकांक्षाओं के कारण छोड़ दिया है। उपर्युक्त सारिणी संख्या 11 से स्पष्ट है कि अपने पिता के व्यवसाय में जाने वाले उनके पुत्रों की संख्या अधिक है। कृषकों और श्रमिकों के अनेक पुत्रों ने अपने पिता के व्यवसाय को अलाभकर जानकर छोड़ दिया है, लेकिन नौकरियों और व्यापारों में रहने वालों के पुत्रों ने अपने पिता के व्यवसायों में रहना ही पसन्द किया है। हमारे शोध अध्ययन में उत्तरदाताओं से एक प्रश्न किया गया है कि "आप अपने पुत्रों के लिए कौन सा व्यवसाय पसन्द करेंगे ?" इस प्रश्न के पूछने के पीछे तीन उद्देश्य थे --

1- उत्तरदाताओं के दृष्टिकोण में विभिन्न व्यवसायों की उनसे सम्बन्धित प्रतिष्ठा और प्रस्थिति का अनुमान लगाने में सहायता मिलेगी।

2- इससे यह भी पता चलेगा कि उत्तरदाता अपने व्यवसाय को पसन्द करते हैं या नापसन्द ।

3- परम्परागत भारतीय समाज पितृ सत्तात्मक है तथा पिता की ही योजनाएं बच्चे के भविष्य का निर्धारण करती हैं। इस प्रकार चौथी पीढ़ी के व्यवसाय के सम्बन्ध में कुछ अनुमान लगाया जा सके।

सारिणी संख्या - 12 : उत्तरदाताओं द्वारा अपने पुत्रों के लिए पसन्द व्यवसाय

क्रमसंख्या	जाति		व्यवसाय	
		कृषि	नौकरी	व्यापार
1- ब्राह्मण	100	2	78	20
2- भूमिहार	100	2	76	22
3- क्षत्रिय	100	4	75	21
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	7	73	20
5- अनुसूचित जातियां	100	2	85	15

सारिणी संख्या 12 से पिता द्वारा अपने पुत्रों के लिए पसन्द व्यवसाय की प्राथमिकताओं का विश्लेषण हो जाता है। उत्तरदाताओं से केवल तीन विकल्पों के सम्बन्ध में ही प्रश्न पूछा गया है। ब्राह्मण जाति के उत्तरदाताओं में केवल 2·0 प्रतिशत कृषि, 20·0 प्रतिशत व्यापार या दुकानदारी और 78·0 प्रतिशत लोगों ने अपने पुत्रों के लिए नौकरी को पसन्द किया है। इसी प्रकार भूमिहार जाति के उत्तरदाताओं में 2·0 प्रतिशत कृषि को, 22·0 प्रतिशत दुकानदारी और 76·0 प्रतिशत लोगों ने नौकरी को अपने पुत्रों के भविष्य का व्यवसाय चुनने की इच्छा व्यक्त की। क्षत्रिय जाति में 4·0 प्रतिशत कृषि, 21·0 प्रतिशत दुकानदारी व्यापार और 75·0 प्रतिशत लोगों ने नौकरी को पसन्द किया। पिछड़ी जातियाँ यद्यपि कम पढ़ी-लिखी और निर्धन है लेकिन इस जाति में भी 7·0 प्रतिशत लोगों ने कृषि, 20·0 प्रतिशत व्यापार तथा 73·0 प्रतिशत लोगों ने अपने बच्चों के लिए नौकरी को पसन्द किया है। अनुसूचित जातियों में अधिकांश लोग कृषि-मजदूर हैं, लेकिन इन्हें भी प्राप्त शैक्षणिक सुविधाओं के चलते इनमें से भी केवल 2·0 प्रतिशत लोगों ने कृषि, 14·0 प्रतिशत व्यापार तथा 84·0 प्रतिशत लोगों ने अपने पुत्रों के लिए नौकरी पसन्द किया है।

उपर्युक्त तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि --

1- सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 77·2 प्रतिशत लोगों ने नौकरी, 19·4 प्रतिशत लोगों ने व्यवसाय तथा केवल 3·4 प्रतिशत लोगों ने कृषि को पसन्द किया है। इससे यह स्पष्ट है कि लोग अब व्यवसाय के रूप में नौकरी और व्यापार को ही पसन्द करते हैं। कृषि उससे सम्बद्ध व्यवसाय लोग पसन्द नहीं करते हैं।

2- यह भी निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आने वाली पीढ़ियों में बढ़ती शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण के चलते लोग कृषि और उससे सम्बद्ध व्यवसायों को करना पसन्द नहीं करते हैं।

3- कृषि और उससे सम्बद्ध जातिगत पेशों में आय कम और लागत अधिक होने के कारण लोग इसे पसन्द नहीं करते हैं।

आन्त:पीढ़ी (इन्ट्रा-जनरेशनल) गतिशीलता

आन्त:पीढ़ी गतिशीलता समाजशास्त्र में एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। आन्त:पीढ़ी गतिशीलता का तात्पर्य किसी व्यक्ति के जीवन के विभिन्न व्यवसायों का एक दूसरे से तुलना।[50] समाजशास्त्र में अब तक अनेक शोध कार्य अन्त:पीढ़ी गतिशीलता (इन्टर जनरेशनल मोबिलिटी) के सन्दर्भ में ही सम्पन्न किये गये हैं, लेकिन कुछ थोड़े से शोध कार्य आन्त:पीढ़ी गतिशीलता के सन्दर्भ में भी हुए हैं। इस सन्दर्भ में इंग्लैण्ड[51], जापान[52], और संयुक्त राज्य अमेरिका[53] में शोध किये गये हैं। इन अध्ययनों में मुख्य रूप से एक व्यक्ति के जीवन के विभिन्न व्यवसायों के परिवर्तन पर जोर दिया गया है। विशेषरूप से उस व्यक्ति के सन्दर्भ में जो हाथ सम्बन्धी कार्यों को छोड़कर सफेद पोश कार्यों की ओर आकृष्ट हुए हों। अपने अध्ययन में भी हमने अपना ध्यान इसी तथ्य की ओर लगाया है कि एक व्यक्ति ने अपने जीवन काल में कितनी बार व्यवसाय में परिवर्तन किया है। इस तथ्य पर ध्यान देते समय हमने गाजीपुर जनपद के आर्थिक पिछड़ेपन और शिक्षा के अभाव को भी ध्यान में रखा है। औद्योगीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न नये-नये व्यवसायों ने समस्त ग्रामीण जीवन को भी प्रभावित किया है। परन्तु यह जनपद औद्योगिक इकाइयों के अभाव के फलस्वरूप अधिक संक्रमणशील नहीं हो सका है।

उत्तरदाताओं द्वारा किये गये व्यवसाय

सारिणी संख्या 13 में उत्तरदाताओं के पहले का व्यवसाय तथा उस व्यवसाय में उत्तरदाताओं के रहने की अवधि का विवरण है। ब्राह्मण जाति के कुल 100 उत्तरदाताओं में से केवल 4.0 प्रतिशत ब्राह्मण

ही ऐसे थे, जिन्होंने अपना व्यवसाय बदला है। इसी प्रकार भूमिहार जाति में 3·0 प्रतिशत, क्षत्रिय जाति में 2·0 प्रतिशत, पिछड़ी जातियों में 2·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में 3·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपने व्यवसाय में परिवर्तन किया है। अनुसूचित जातियों के सभी उत्तरदाता पहले सुअर-पालन और बांसफोड़ का कार्य करते थे, लेकिन वर्तमान में उन्होंने अपने इस व्यवसाय को छोड़कर नौकरी-पेशा अपना लिया है। इसी प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय और भूमिहार जाति के जो थोड़े से उत्तरदाताओं ने अपना व्यावसायिक परिवर्तन किया है वे पहले छोटी-मोटी नौकरियां किया करते थे, या नौकरी से सेवा निवृत्त हो चुके हैं।

जहाँ तक पहले वाले व्यवसाय में रहने की अवधि का प्रश्न है, ब्राह्मण जाति के 1·0 प्रतिशत लोग 1 से 3 वर्ष, 1·0 प्रतिशत लोग 4 से 6 वर्ष तक तथा 2·0 प्रतिशत लोग 10 से 12 वर्ष की अवधि तक नौकरी किये हैं। इसी प्रकार भूमिहार जाति में 1·0 प्रतिशत लोग 1 से 3 वर्ष तक तथा 2·0 प्रतिशत लोग 10 से 12 वर्ष तक नौकरी में रहे हैं। क्षत्रिय जाति में 1·0 प्रतिशत लोग 1 से 3 वर्ष तक तथा 1·0 प्रतिशत लोग 7 से 9 वर्ष तक नौकरी में रहे हैं। पिछड़ी जातियों में 2·0 प्रतिशत लोग 1 से 3 वर्ष तक नौकरी तथा अनुसूचित जातियों में 1·0 प्रतिशत लोग 4 से 6 वर्ष तक तथा 2·0 प्रतिशत लोग 10 से 12 वर्ष तक सुअर-पालन और बांस-फोड़ का कार्य कर चुके हैं। ग्रामीण परिवेश आर्थिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा होने के कारण एक व्यक्ति के जीवन में व्यावसायिक गतिशीलता का अभाव है।

सारिणी संख्या- 13 : आन्त:पीढ़ी (इन्ट्रा जनरेशनल) गतिशीलता

क्रमसंख्या	जाति (संख्या सहित)		उत्तरदाताओं का पहले का व्यवसाय				पहले वाले व्यवसाय में रहने की अवधि (वर्षों में)			
			व्यवसाय		संख्या	प्रतिशत	1-3	4-6	7-9	10-12
			क्रम	प्रकार						
1-	ब्राह्मण	100		नौकरी	4	4	1	1	-	2
2-	भूमिहार	100		नौकरी	3	3	1	-	-	2
3-	क्षत्रिय	100		नौकरी	2	2	1	-	1	-
4-	पिछड़ी जातियाँ या मध्यवर्गीय जातियां	100		नौकरी	2	2	2	-	-	-
5-	अनुसूचित जाति	100		सुअर पालन एवं बाँसफोड़	3	3	-	1	-	2
योग		500			14	14	5	2	1	6

वर्तमान व्यवसाय करने के स्थान से पिछले वाले व्यवसाय के स्थान की दूरी

सारिणी संख्या 14 में पिछले व्यवसाय के स्थान से वर्तमान व्यवसाय करने के स्थान की दूरी, पिछले व्यवसाय में प्रतिमाह आय तथा पिछले व्यवसाय को छोड़ने का कारण प्रदर्शित किया गया है। कुल 500 उत्तरदाताओं में से केवल 9 उत्तरदाता अपने वर्तमान स्थान से 200 कि0मी0 की दूरी के अन्दर कार्य करते थे, केवल 1 उत्तरदाता 200 कि0मी0 से अधिक लेकिन 400 कि0मी0 के अन्दर की दूरी पर कार्यरत था और 4 उत्तरदाता 400 कि0मी0 से अधिक की दूरी पर कार्यरत था।

वर्तमान व्यवसाय अपनाने से पहले कुल 500 उत्तरदाताओं में से केवल 5 उत्तरदाता 100 रू0 से अधिक परन्तु 300 से कम वेतन प्राप्त करके नौकरी करते थे, लेकिन 9 उत्तरदाता 301 रू0 से अधिक वेतन प्राप्त करते थे।

उत्तरदाताओं द्वारा अपना पिछला व्यवसाय छोड़ने के पीछे कई कारण थे। 9 उत्तरदाताओं ने अपना व्यवसाय असन्तोष के कारण छोड़ दिया। यह असन्तोष कम वेतन और रहन-सहन की अच्छी सुविधा का अभाव था। केवल 1 उत्तरदाता ने अपना पिछला व्यवसाय नौकरी में पदोन्नति के कारण छोड़ दिया। 4 उत्तरदाताओं ने भविष्य में अच्छी साधन-सुविधा एवं धन-सम्पत्ति कमा लेने की आशा में अपना व्यवसाय छोड़ दिया।

सारिणी संख्या- 14 : उत्तरदाताओं के पहले वाले व्यवसाय के सन्दर्भ में कुछ तथ्य

जाति (संख्या सहित)	पिछले व्यवसाय की इस स्थान से दूरी (किलो मीटर में)			पिछले व्यवाय की प्रतिमाह आय (रूपयों में)			पिछले व्यवसाय को छोड़ने का कारण				
	1-200	201-400	401 से अधिक	100 से कम	101 से 300	301 से अधिक	असन्तोष	स्थानान्तरण	पदोन्नति	पिछले व्यवसाय को छोड़ दिया	भविष्य की अच्छी प्रत्याशा
1-ब्राह्मण 100	2	-	2	-	-	4	2	-	-	-	2
2-भूमिहार 100	1	1	1	-	-	3	2	-	1	-	-
3-क्षत्रिय 100	2	-	-	-	1	1	1	-	-	-	1
4-पिछड़ी या मध्य0 जातियाँ 100	1	-	1	-	1	1	1	-	-	-	1
5-अनुसूचित 100	3	-	-	-	3	-	3	-	-	-	-
योग 500	9	1	4	-	5	9	9	-	1	-	4

विभिन्न जातियों का व्यावसायिक विश्लेषण

ब्राह्मण

ब्राह्मण जाति के 2·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं का पिछला व्यवसाय करने के स्थान की वर्तमान स्थान से दूरी 200 कि०मी० तक थी और 2·0 प्रतिशत उत्तरदाता 400 कि०मी० से अधिक की दूरी पर कार्यरत थे। इन ब्राह्मणों में 4·0 प्रतिशत उत्तरदाता 300 से रुपये से अधिक प्रतिमाह वेतन भी प्राप्त करते थे। 2·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपनी नौकरी असन्तोष के कारण छोड़ दिया और 2·0 प्रतिशत उत्तर-दाताओं ने अपना भविष्य और अधिक अच्छा बना लेने की आशा में छोड़ दिया।

भूमिहार

कुल एक सौ भूमिहार उत्तरदाताओं में से एक-एक प्रतिशत उत्तरदाता ही क्रमशः 200 कि०मी० से कम, 400 कि०मी० से कम तथा 401 कि०मी० से अधिक की दूरी पर कार्यरत थे। 3·0 प्रतिशत ही भूमिहार उत्तरदाता 301 रुपये से अधिक वेतन प्राप्त करते थे। अपने पिछले व्यवसाय को 2·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने नौकरी में वेतन की कमी और स्थान की दूरी से असन्तुष्ट होकर छोड़ दिया, परन्तु 1·0 प्रतिशत उत्तरदाता पदोन्नति पा लेने के कारण पिछला व्यवसाय छोड़ दिया।

क्षत्रिय

क्षत्रिय उत्तरदाताओं में से 2·0 प्रतिशत उत्तरदाता पहले 200 कि0मी0 के अन्दर अपना व्यवसाय करते थे। इन सौ उत्तरदाताओं में 1·0 प्रतिशत उत्तरदाता 101 से 300 रुपये तक प्रतिमाह आय प्राप्त करते थे और 1·0 प्रतिशत उत्तरदाता 301 रुपये से अधिक आय प्राप्त करते थे। 1·0 प्रतिशत क्षत्रिय उत्तरदाता असन्तोष के कारण अपनी नौकरी छोड़ दिये तथा 1·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाने की आशा में अपने व्यवसाय को छोड़ दिया।

पिछड़ी जातियाँ

पिछड़ी जाति में 1·0 प्रतिशत उत्तरदाता 200 कि0मी0 तक की दूरी तथा 1·0 प्रतिशत उत्तरदाता 401 से कि0मी0 से अधिक की दूरी पर कार्यरत थे। पिछड़ी जाति के अधिकांश लोग जो अपने घर से रहकर अपना व्यवसाय करते थे उनमें से अधि कांश मजदूर वर्ग के लोग थे जिनमें से 1·0 प्रतिशत 101 से 300 रु0 तक तथा 1·0 प्रतिशत लोग 301 रु0 से अधिक वेतन या मजदूरी पाने वाले थे। इन पिछड़ी जातियों में 1·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने असन्तोष के कारण तथा 1·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भविष्य की अच्छी आशाओं के कारण अपनी नौकरी को छोड़ दिया।

अनुसूचित जाति

अनुसूचित जाति के अधिकांश लगभग सभी उत्तरदाता मजदूर वर्ग के हैं। इनमें से 3·0 प्रतिशत उत्तरदाता 200 कि0मी0 से कम दूरी पर पहले अपना व्यवसाय करते थे और उनमें से 3·0 प्रतिशत लोग 101 से 300

रुपये तक प्रतिमाह आय अर्जित करते थे। इनमें से 3·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने असन्तोष के कारण अपने व्यवसाय का परित्याग कर दिया।

वर्तमान व्यवसाय के प्रति अभिरुचि (सारिणी संख्या- 15)

सभी जातियों के उत्तरदाताओं से उनके व्यवसाय के सन्दर्भ में उनकी अभिरुचि करने पर पता चला कि 46·6 प्रतिशत उत्तरदाता अपने वर्तमान व्यवसाय को पसन्द करते हैं। (अधिकांश उत्तरदाताओं ने ग्रामीण परिवेश में व्यवसाय के विकल्प के अभाव में मजबूरी में ही अपने व्यवसाय को पसन्द किया है) केवल 29·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही अपने वर्तमान व्यवसाय को पसन्द नहीं करते हैं। उत्तरदाताओं का एक बड़ा समूह 24·4 प्रतिशत लोगों ने कोई स्पष्ट उत्तर न देकर अपने को तटस्थ ही रखा, हालांकि उनके कहने के रुख से यह स्पष्ट हो रहा था कि वे भी अपने व्यवसाय को पसन्द नहीं करते हैं। उत्तरदाताओं से कुछ प्रश्न उनके व्यवसाय की आय, कार्य के घण्टे और उनके द्वारा किये जाने वाले कार्य की सामान्य दशाओं के सम्बन्ध में भी पूछे गये थे, जिसका विवरण जातिगत आधार पर निम्नवत् है --

ब्राह्मण

इस जाति के अधिकांश लोग गांवों में पुरोहित कर्म करते हैं और साथ ही साथ अच्छे खेतिहर भी हैं। जब इन लोगों से प्रश्न किया गया कि आपके व्यवसाय का पारिश्रमिक, कार्य के घण्टे और उस व्यवसाय की सामान्य दशाएँ क्या हैं, तो तीन प्रकार के उत्तर प्राप्त हुए। मजदूरी, कार्य के घण्टे और व्यवसाय की सामान्य दशाओं को अच्छा कहने वालों का प्रतिशत क्रमश: 28, 36 और 18 था। मजदूरी, कार्य के घण्टे और

व्यवसाय के सामान्य दशाओं को खराब मानने वाले लोगों का प्रतिशत क्रमशः 18, 14 और 28 था। उत्तरदाताओं का एक बड़ा समूह जो अपने को इस प्रश्न पर तटस्थ रखा उनका प्रतिशत क्रमशः 54, 50 और 54 था।

इन लोगों से जब दूसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आप अपने व्यवसाय को पसन्द करते हैं ?" इस प्रश्न के उत्तर में 58·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इसे पसन्द किया, 30·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने नापसन्द किया तथा 12·0 प्रतिशत उत्तरदाता तटस्थ रहे। लेकिन जब उनसे यह पूछा गया कि "क्या आप अपने व्यवसाय को बदलने का विचार रखते हैं ? तो 48·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि हाँ ! 34·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने नकारात्मक उत्तर दिया और 18·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कुछ भी स्पष्ट रूप से नहीं कहा बल्कि वे अनिश्चय की स्थिति में थे।

भूमिहार

गाजीपुर जनपद में भूमिहार जाति का मुख्य पेशा कृषि है। आज के भारत का आम कृषक बदहाल है लेकिन कृषि योग्य भूमि से भूमिहार की प्रतिष्ठा जुड़ी होने के कारण कृषि कार्य को इस जाति में अच्छा कहने वालों का प्रतिशत भी अच्छा ही है। कृषि से आय, इसमें लगने वाला समय और कृषि की सामान्य दशाओं के सन्दर्भ में प्रश्न पूछने पर उसे अच्छा कहने वालों का प्रतिशत क्रमशः 31,33 और 21 था। खराब कहने वालों का प्रतिशत क्रमशः 25, 214 और 26 था तथा क्रमशः 44, 46 और 53 प्रतिशत लोगों ने इसको न अच्छा कहा न खराब बल्कि उसे

वे सामान्य श्रेणी में मानते हैं।

बढ़ते हुए औद्योगीकरण और शिक्षा के प्रकसार के फलस्वरूप उत्पन्न नये-नये पेशों के सामने कृषि असहाय पेशा बनकर रह गया है, लेकिन फिर भी जब लोगों से प्रश्न किया गया कि आप अपने पेशे को पसन्द करते हैं या नापसन्द ? तो लोगों का एक बड़ा समूह 42•0 प्रतिशत ने इसे पसन्द किया 23•0 प्रतिशत ने नापसन्द और 35•0 प्रतिशत लोग इस प्रश्न पर कोई स्पष्ट सहमति नहीं दे सके वे तटस्थ रह गये। लेकिन जब पुन: उनसे उनके पेशे में परिवर्तन के विचार पर प्रश्न किया गया तो 39•0 प्रतिशत लोगों ने इसे बदलने का विचार व्यक्त किया जबकि 41•0 प्रतिशत लोगों ने दूसरे व्यवसाय के विकल्प के अभाव में नकारात्मक उत्तर दिया और 20•0 प्रतिशत उत्तरदाता तटस्थ रह गये।

क्षत्रिय

वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत क्षत्रिय जाति का कार्य समाज की सुरक्षा करना था। लेकिन आधुनिक युग में यह मान्यता बदल गई है। गाजीपुर जनपद में क्षत्रिय जाति भी भूमिहार जाति के समान ही कृषि प्रधान जाति है और क्षत्रिय जाति के लोगों की प्रतिष्ठा भी कृषि योग्य भूमि से जुड़ी हुई है। इस जाति के लोगों से भी जब उनके पेशे से प्राप्त होने वाली आय, कार्य के घण्टे और पेशे से सम्बन्धित दशाओं के सम्बन्ध में प्रश्न पूछे गये तो क्रमश: 26, 27 और 28•0 प्रतिशत लोगों ने उसे अच्छा कहा। 22, 19 और 24•0 प्रतिशत लोगों ने खराब तथा 52, 54 और 48•0 प्रतिशत लोगों ने अपने को इस प्रश्न पर तटस्थ रखा।

सारिणी संख्या - 15 : वर्तमान व्यवसाय का विवरण

जाति (संख्या सहित)	विषय-वस्तु	दृष्टिकोण			सम्पूर्ण रूप से आप इसे पसन्द करते हैं या नापसन्द			वर्तमान व्यवसाय को बदलने का विचार		
		अच्छा	खराब	सामान्य	पसन्द	नापसन्द	तटस्थ	हाँ	नहीं	अनिश्चित
1-ब्राह्मण	मजदूरी	28	18	54	58	30	12	48	34	18
100	कार्य के घंटे	36	14	50						
	सामान्य दशाएँ	18	28	54						
2-भूमिहार	मजदूरी	31	25	44	42	23	35	39	41	20
100	कार्य के घंटे	33	21	46						
	सामान्य दशाएँ	21	26	53						
3-क्षत्रिय	मजदूरी	26	22	52	52	31	17	45	35	20
100	कार्य के घंटे	27	19	54						
	सामान्य दशाएँ	28	24	48						

क्रमशः ....

4-पिछड़ी या 100 मध्यवर्गीय जातियां	मजदूरी	29	23	48	48	25	27	54	38	8
	कार्य के घंटे	22	25	53						
	सामान्य दशाएं	23	24	53						
5-अनुसूचित जाति 100	मजदूरी	15	43	42	33	36	31	64	14	22
	कार्य के घंटे	10	46	44						
	सामान्य दशाएं	9	55	36						
योग					233	145	122	250	162	88
					46·6%	29%	24·4%	50%	32·4%	17·6%

क्षत्रिय जाति के लोग अधिक शिक्षित हैं तथा उनमें व्यावसायिक परिवर्तन की आकांक्षा भी अधिक देखने को मिली। जब उनसे यह प्रश्न किया गया कि आप अपने पेशे को पसन्द करते हैं या नापसन्द ? तो अधिकांश लोगों ने लगभग 55·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उसे पसन्द किया। 31·0 प्रतिशत लोगों ने अपने व्यवसाय को खराब कहा तथा 17·0 प्रतिशत लोग इस प्रश्न पर तटस्थ रह गये। क्षत्रिय उत्तर-दाताओं से जब उनसे व्यवसाय बदलने के सम्बन्ध में प्रश्न किया गया तो 45·0 प्रतिशत उत्तदाताओं ने व्यावसायिक परिवर्तन के पक्ष में अपनी राय जाहिर की। 35·0 प्रतिशत लोग या तो बढ़ती उम्र के कारण या आर्थिक अभाव के कारण अपने व्यवसाय को न बदलने का विचार व्यक्त किया और 20·0 प्रतिशत उत्तरदाता अनिश्चय की स्थिति में पड़े रहे।

पिछड़ी जातियां

भारतीय ग्रामीण परिवेश में खासतौर से पूर्वी उत्तरप्रदेश के ग्रामीण अंचलों में पिछड़ी जातियों का मुख्य पेशा दुकानदारी, पशुपालन व मजदूरी है। पिछड़ी जातियों के अधिकांश सदस्य आज भी गरीब की जिन्दगी जीने के लिए विवश है। इनमें बनिया जाति के लोग ही थोड़ा अच्छा जीवन-यापन कर पाते हैं। पिछड़ी जाति के लोगों से उनके व्यवसाय के सम्बन्ध में उनके दृष्टिकोण जानने का प्रयास किया गया तो मजदूरी, कार्य के घण्टे और कार्य की सामान्य दशाओं को क्रमश: 29·0 प्रतिशत, 22·0 प्रतिशत और 23·0 प्रतिशत लोगों ने अच्छा कहा । 23·0 प्रतिशत, 25·0 प्रतिशत और 24·0 प्रतिशत लोगों ने खराब बताया। उत्तरदाताओं का एक बड़ा वर्ग 48·0 प्रतिशत, 53·0 प्रतिशत और 53·0 प्रतिशत लोगों ने उसे सामान्य बताया।

पिछड़ी जाति के उत्तरदाताओं से जब उनके व्यवसाय के पसन्द, नापसन्द के सम्बन्ध में पूछा गया तो 48·0 प्रतिशत उत्तर-दाताओं ने उसे पसन्द किया, 25·0 प्रतिशत लोगों ने नापसन्द तथा 27·0 प्रतिशत लोग तटस्थ रह गये। लेकिन जब व्यवसाय में परिवर्तन के सम्बन्ध में प्रश्न पूछा गया तो अधिकांश सदस्यों ने व्यावसायिक परिवर्तन की ही इच्छा व्यक्त की। 54·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं में व्यावसायिक परिवर्तन की आकांक्षा पाई गई, 8·0 प्रतिशत अनिश्चय की स्थिति में रहे। 38·0 प्रतिशत लोगों ने अपना व्यवसाय न बदलने का विचार व्यक्त किया।

अनुसूचित जाति

अनुसूचित जाति के लोग ग्रामीण अंचलों में मजदूरी का कार्य करते हैं। पहले इनका मुख्य कार्य चमड़े का कारोबार था, लेकिन अब इस कार्य को छोड़कर इस जाति के अधिकांश सदस्य मजदूरी करते हैं। मजदूरी, कार्य के घण्टे और कार्य की सामान्य दशाओं के सम्बन्ध में इनका दृष्टि-कोण कुछ भिन्न देखने को मिला। इन्होंने क्रमश: 15·0 प्रतिशत, 10·0 प्रतिशत और 9·0 प्रतिशत अच्छा कहा जबकि 43·0 प्रतिशत, 46·0 प्रतिशत और 55·0 प्रतिशत लोगों ने खराब बताया, 42·0 प्रतिशत, 44·0 प्रतिशत और 36·0 प्रतिशत लोगों ने कोई स्पष्ट विचार व्यक्त नहीं किया। समस्त उत्तरदाताओं में से केवल 33·0 प्रतिशत लोगों ने अपने व्यवसाय को पसन्द किया, बाकी 36·0 प्रतिशत लोगों ने खराब तथा 31·0 प्रतिशत लोग तटस्थ रह गये। इस जाति के लोगों में सबसे अधिक व्यावसायिक परिवर्तन की आकांक्षा देखने को मिली। 64·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपने व्यवसाय को बदलने का विचार व्यक्त

किया। केवल 14·0 प्रतिशत लोग ही परिवर्तन के इच्छुक नहीं थे। 22·0 प्रतिशत लोग अनिश्चय की ही स्थिति में रह गये।

उपर्युक्त तथ्यों को देखने से यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण अंचलों के व्यक्ति जो पेशा करते हैं, उसमें वे अपना सम्मान महसूस करते हैं और उस पेशा को भी सम्मानजनक मानकर उसे करते भी हैं, लेकिन साथ ही साथ उस पेशे में अल्प आय के कारण उसे बदलने का विचार भी रखते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि यदि लोगों के जीवन में उचित अवसर उपलब्ध होगा तो उनमें व्यसावसायिक परिवर्तन की गति बढ़ जाएगी।

<u>व्यवसाय के स्रोत (सारिणी- 16)</u>

उत्तरदाताओं से जब यह प्रश्न किया गया कि "आपने अपना वर्तमान व्यवसाय कैसे प्राप्त किया ?" तो इस प्रश्न का उत्तर उत्तरदाताओं ने भिन्न-भिन्न दिया। कुल ब्राह्मण उत्तरदाताओं में से 4 उत्तरदाताओं ने बताया कि वे अपना वर्तमान व्यवसाय रोजगार दफ्तर से प्राप्त किये हैं, 20 उत्तरदाता प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं से, 12 उत्तरदाता मित्रों द्वारा तथा 64 उत्तरदाताओं के व्यवसाय का स्रोत परम्परागत है अर्थात् उनका व्यवसाय पैत्रिक है। इसी प्रश्न को अन्य जाति के उत्तरदाताओं से भी पूछा गया तो भूमिहार उत्तरदाताओं में 1 उत्तरदाता रोजगार दफ्तर से अपना व्यवसाय प्राप्त किया, 20 उत्तरदाता प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं से, 9 मित्रों द्वारा 70 उत्तरदाताओं का व्यावसायिक स्रोत पैत्रिक था, क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 3 रोजगार दफ्तर, 17 प्रतियोगिता परीक्षा, 13 मित्रों द्वारा तथा 67 परम्परागत व्यवसाय में लगे हुए थे। क्षत्रिय जाति के लोग भी अपना परम्परागत

पेशा कृषि को ही मानते हैं। पिछड़ी जातियों में 7 उत्तरदाताओं का व्यावसायिक स्रोत रोजगार दफ्तर, 11 लोगों का प्रतियोगितात्मक परीक्षा, 15 मित्रों द्वारा तथा 67 लोगों का व्यवसाय पैत्रिक व्यवसाय जैसे पशु-पालन और मजदूरी है। इसी प्रकार अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं में 2 लोग प्रतियोगिता परीक्षा, 1 व्यक्ति मित्र द्वारा तथा 97 लोगों की पैत्रिक व्यवसाय मजदूरी है।

इन उत्तरदाताओं से एक दूसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आपका वर्तमान व्यवसाय आपके पहले पेशे से भिन्न है ? इस प्रश्न के उत्तर में 4•0 प्रतिशत ब्राह्मण, 2•0 प्रतिशत भूमिहार, 3•0 प्रतिशत क्षत्रिय, 1•0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 3•0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं ने सकारात्मक उत्तर दिया जबकि 1•0 प्रतिशत उत भूमिहार, 1•0 प्रतिशत पिछड़ी जाति के लोगों ने नकारात्मक उत्तर दिया। पुन: जब उनसे पूछा गया कि "आपका पेशा किस सन्दर्भ में भिन्न है ? तो कई प्रकार के उत्तर प्राप्त हुए। 4•0 प्रतिशत ब्राह्मणों ने अच्छा वेतन कहा। 2•0 प्रतिशत भूमिहार अच्छा वेतन और 1•0 प्रतिशत ने नौकरी की अच्छी दशाएँ कहा। 3•0 प्रतिशत क्षत्रिय अच्छा वेतन, 2•0 प्रतिशत पिछड़ी जाति के लोग भी अच्छा वेतन बतलाये, परन्तु 2•0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोगों ने अच्छा वेतन और 1•0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उच्च पद बतलाया।

सारिणी संख्या- 16 : उत्तरदाताओं के वर्तमान पेशे के सन्दर्भ में कुछ तथ्य

जाति (संख्या सहित)		आपने अपना वर्तमान पेशा कैसे प्राप्त किया ?				क्या यह आपके पहले पेशे से भिन्न है ?		किस सन्दर्भ में भिन्न है ?		
		रोजगार दफ्तर	प्रतियोगितात्मक	मित्रों द्वारा	अन्य स्रोत (परम्परागत)	हाँ	नहीं	अच्छा वेतन या आय	उच्चपद	नौकरी की अच्छी दशाएँ
1- ब्राह्मण	100	4	20	12	64	4	-	4	-	-
2- भूमिहार	100	1	20	9	70	2	+	2	-	1
3- क्षत्रिय	100	3	17	13	67	3	-	3	-	-
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	7	11	15	67	1	1	2	-	-
5- अनुसूचित जाति	100	-	2	1	97	3	-	2	1	-

सारिणी संख्या 16 के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश लोग आज भी अपने परम्परागत व्यवसायों में ही लगे हुए हैं। इसका कारण ग्रामीण लोगों की अशिक्षा और ग्रामीण उद्योगों का अभाव है।

2- ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत कम लोग व्यापार या नौकरी करने वाले हैं, क्योंकि शिक्षा की कमी परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तन की बाधक सिद्ध हो रही है।

प्रस्थिति गतिशीलता

कोई व्यक्ति आर्थिक और व्यावसायिक रूप से अपनी वर्तमान स्थिति से ऊपर उठ सकता है, लेकिन व्यक्ति की आर्थिक और व्यावसायिक उन्नति के साथ ही साथ उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा में शीघ्र ही कोई परिवर्तन नहीं हो पाता है। कोई व्यक्ति उच्च आर्थिक स्थिति में पहुँच जाय तो यह नहीं कहा जा सकता कि उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा भी उच्च हो जाय। उच्च सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए उसे कुछ दिनों तक इन्तजार करना पड़ता है। अनेकों अध्ययनों में इस समस्या का विश्लेषण उत्तरदाता का उसके पत्नी के पिता के व्यवसाय के साथ किया गया है। प्राय: ऐसा देखा गया है कि जिस आर्थिक स्थिति का पति होता है, लगभग उसी आर्थिक स्थिति की उसकी पत्नी भी होती है।

इस प्रकार का विश्लेषण दो तथ्यों पर प्रकाश डालता है-- प्रथम यह कि उत्तरदाता की पत्नी की प्रतिष्ठा के उद्गम और शादी के बाद पत्नी के जीवन में गतिशीलता की प्रकृति का पता चलता है। दूसरा यह

कि इससे पति की सामाजिक प्रतिष्ठा का भी पता चलता है कि क्या वह उसी व्यावसायिक प्रस्थिति का है या उससे उच्च है या निम्न है।

सारिणी संख्या 17 से स्पष्ट है कि ब्राह्मण उत्तरदाताओं की पत्नी के 6·0 प्रतिशत पिता पुरोहित कर्म, 36·0 प्रतिशत कृषि व पशु-पालन, 1·0 प्रतिशत व्यापार व 10·0 प्रतिशत लोग नौकरी करने वाले हैं। इस जाति में कोई भी मजदूर नहीं हैं।

भूमिहार जाति के उत्तरदाताओं की पत्नी के 68·0 प्रतिशत पिता कृषि कार्य करने वाले तथा 5·0 प्रतिशत नौकरी करने वालें हैं। किसी भी उत्तरदाता की पत्नी का पिता मजदूर नहीं है।

क्षत्रिय जाति के 51·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं की पत्नी के पिता कृषक तथा 1·0 प्रतिशत व्यापार और 4·0 प्रतिशत नौकरी करने वाले हैं। इस जाति में भी किसी की भी पत्नी का पिता मजदूर नहीं है।

पिछड़ी जातियों के उत्तरदाताओं की पत्नी के 34·0 प्रतिशत पिता कृषि,पशु-पालन करने वाले हैं। नौकरी और व्यापार करने वाला कोई नहीं है। 40·0 प्रतिशत पिता मजदूर वर्ग के हैं।

इसी प्रकार अनुसूचित जातियों के कुल विवाहित उत्तरदाताओं की पत्नी के 4·0 प्रतिशत पिता कृषि व पशुपालन करने वाले तथा 70·0 प्रतिशत लोग मजदूर वर्ग से सम्बन्धित हैं ।

सारिणी संख्या - 17 : उत्तरदाताओं की पत्नी के पिता का व्यवसाय (यदि विवाहित स्त्री है तो उसके पति का व्यवसाय)

जाति के अनुसार विवाहित उत्तरदाताओं की संख्या		व्यवसाय				
		जातिगत पेशा	कृषि व पशुपालन	व्यापार	नौकरी	मजदूरी
1- ब्राह्मण	53	6 पुरोहित कृषि सहित	36	1	10	-
2- भूमिहार	73	-	68	-	5	-
3- क्षत्रिय	56	-	51	1	4	-
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	74	8	34	-	-	40
5- अनुसूचित जाति	74	2	4	-	-	70
योग	500	3·2%	38·6%	·4%	3·8%	22%

सारिणी संख्या 17 के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- ग्रामीण समुदाय में जातिगत पेशों का आधार टूट रहा है। कुल उत्तरदाताओं की पत्नी के केवल 3·2 प्रतिशत पिता ही अपने जातिगत पेशों में लगे हुए हैं।

2- ग्रामीण समुदाय का मुख्य पेशा कृषि व पशुपालन है। समस्त उत्तरदाताओं की पत्नियों के 38·6 प्रतिशत पिता इसी पेशे से सम्बन्धित हैं।

3- ग्रामीण सुमुदाय में भूमिहीन कृषि मजदूरों की संख्या अधिक है। उत्तरदाताओं की पत्नियों के 22·0 प्रतिशत पिता मजदूर हैं।

4- व्यापार और नौकरी का ग्रामीण समुदाय में अभाव है। के 4·0 प्रतिशत व्यारी और 3·8 प्रतिशत पिता नौकरी करने वाले हैं।

<u>व्यवसायिक आकांक्षा (सारिणी संख्या 18)</u>

भारतवर्ष मिश्रित अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत संचालित है। इस मिश्रित अर्थव्यवस्था का भारतीय नियोजन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। इस अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत निजी क्षेत्र के उद्योग धन्धों को पर्याप्त लाभ हुआ है, और सार्वजनिक उद्यम धीरे-धीरे पतनशीलता की ओर अग्रसर होते चले गये हैं। मिश्रित अर्थव्यवस्था ने धीरे-धीरे पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था का रूप ले लिया है। ऐसी परिस्थिति में देश का पूंजीपति

और व्यापारी वर्ग दिन-प्रतिदिन सम्पन्न होता चला जा रहा है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के कारण नगरीकरण की प्रक्रिया भी उतनी ही तीव्र हो गई है। नगरों का विकास बहुत तेजी के साथ होता चला जा रहा है और गांव धीरे-धीरे कंगाल होते जा रहे हैं। बड़े-बड़े उद्योगों के विकास ने भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ माने जाने वाले लघु और कुटीर तथा ग्रामीण उद्योगों को बर्बाद कर दिया है। रोजी-रोटी की विकराल समस्या गाँवों में उत्पन्न हो रही है। भारतीय कृषि पर सरकार का ध्यान न होने के कारण कृषक और कृषि मजदूर दयनीय आर्थिक स्थिति में पहुँच चुके हैं। ग्रामीण उत्तरदाताओं से जब प्रश्न किया गया कि "आप जिस व्यवसाय में हैं, क्या उससे आप सन्तुष्ट हैं ?" तो बहुत थोड़ें से लोगों ने सकारात्मक उत्तर दिया। ब्राह्मण जाति में 22·0 प्रतिशत, भूमिहार 28·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 21·0 प्रतिशत, पिछड़ी जातियाँ 27·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जातियों में 19·0 प्रतिशत लोगों ने ही सकारात्मक उत्तर दिया। इन सकारात्मक उत्तर देने वालों में भी केवल वे ही लोग थे जिनकी उम्र 50 वर्ष से ऊपर थी। लेकिन युवा वर्ग के अधिकांश लोगों ने इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर दिया। ब्राह्मण 48·0 प्रतिशत, भूमिहार 32·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 51·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति 49·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति के 57·0 प्रतिशत लोगों ने कहा कि वे अपने व्यवसाय से असन्तुष्ट हैं। उत्तरदाताओं का एक बड़ा वर्ग इस प्रश्न पर अपने को तटस्थ रखा। इनमें अधिकांश वे ही लोग थे जो या तो अशिक्षित थे या अल्पशिक्षित थे। तटस्थ रहने वालों में ब्राह्मण 30·0 प्रतिशत, भूमिहार 40·0 प्रतिशत क्षत्रिय 28·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति 24·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति के 24·0 प्रतिशत ।

इन उत्तरदाताओं से जब दूसरा प्रश्न किया गया कि "आप किस प्रकार के व्यवसाय की आकांक्षा रखते हैं ?" तो भिन्न-भिन्न जातियों के लोगों ने भिन्न-भिन्न प्रकार के उत्तर दिये। ब्राह्मणों ने अपने जातिगत पेशों का कोई उल्लेख नहीं किया। 24·0 प्रतिशत ब्राह्मणों ने कृषि व पशुपालन, 18·0 प्रतिशत व्यापार और 58·0 प्रतिशत नौकरी की इच्छा व्यक्त की। भूमिहार जाति का कोई जातिगत पेशा नहीं है, फिर भी कृषि इस जाति का ही जातिगत पेशा माना जाता है। इसे भी केवल 20·0 प्रतिशत भूमिहारों ने पसन्द किया। 19·0 प्रतिशत व्यापार तथा 61·0 प्रतिशत लोगों ने नौकरी को पसन्द किया। क्षत्रिय जाति में 21·0 प्रतिशत कृषि व पशुपालन, 23·0 प्रतिशत व्यापार व 56·0 प्रतिशत लोगों का पसन्द व्यवसाय नौकरी ही है। पिछड़ी जातियों में केवल 3·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने जिनमें प्रमुख रूप से यादव व कुर्मी जाति के लोग थे, उन्होंने ही कृषि व पशुपालन को अपने जातिगत पेशे के रूप में पसन्द किया। अन्य 16·0 प्रतिशत लोग जिन्होंने कृषि व पशुपालन को अपने व्यवसाय के रूप में पसन्द किया, वे आमतौर पर मजदूर वर्ग के लोग थे। पिछड़ी जातियों में 26·0 प्रतिशत लोगों ने व्यापार को पसन्द किया। जिनमें खासतौर से बनिया वर्ग के लोग थे। अन्य 55·0 प्रतिशत लोगों ने नौकरी को अपने व्यवसाय के रूप में पसन्द किया। अनुसूचित जातियों में केवल 2·0 प्रतिशत लोगों ने अपने जातिगत पेशे (चर्म कार्य) को पसन्द किया। 40·0 प्रतिशत लोगों ने कृषि व पशुपालन, 21·0 प्रतिशत व्यापार तथा 32·0 प्रतिशत लोगों ने नौकरी को पसन्द किया। इस जाति में मजदूरी को पसन्द करने वाले 5·0 प्रतिशत लोग हैं और ये लोग ढलती उम्र के प्रतिनिधि हैं।

सारिणी संख्या- 18 : वर्तमान व्यवसाय के प्रति दृष्टिकोण

जाति (संख्या सहित)		आप जिस व्यवसाय में हैं क्या उससे आप सन्तुष्ट हैं ?			आप किस प्रकार के व्यवसाय की आकांक्षा रखते हैं ?					आप अपने वर्तमान व्यवसाय से क्यों असन्तुष्ट हैं ?				क्या आपकी पत्नी रोजगारशुदा है?	
		हाँ	नहीं	तटस्थ	मजदूरी	जातिगत पेशा	कृषि व पशुपालन	व्यापार	नौकरी	अपर्याप्त आय	स्थान की नापसन्दगी	समायोजन का अभाव	अन्य कारण	हाँ	नहीं
1- ब्राह्मण	100	22	48	30	-	-	24	18	58	24	10	18	48	2	98
2- भूमिहार	100	28	32	40	-	-	20	19	61	21	13	12	54	1	99
3- क्षत्रिय	100	21	51	28	-	-	21	23	56	23	11	14	52	3	97
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	27	49	24	-	3	16	26	55	27	10	17	46	2	98
5- अनुसूचित जाति	100	19	57	24	5	2	40	21	32	47	15	10	28	-	100
योग	500	23·4%	47·4%	29·2%	1%	1%	24·2%	20·14%	52·4					1·4%	98·6%

ब्राह्मण जाति में 24·0 प्रतिशत अपर्याप्त आय, 10·0 प्रतिशत स्थान की नापसन्दगी, 18·0 प्रतिशत समायोजन का अभाव और 48·0 प्रतिशत ने असन्तोष का अन्य कारण बताया। भूमिहार 21·0 प्रतिशत अपर्याप्त आय, 13·0 प्रतिशत कार्य के स्थान की नापसन्दगी, 12·0 प्रतिशत समायोजन का अभाव और 54·0 प्रतिशत ने अन्य कारण बताया। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 23·0 प्रतिशत अपर्याप्त आय, 11·0 प्रतिशत स्थान की नापसन्दगी, 14·0 प्रतिशत समायेजन का अभाव और 52·0 प्रतिशत लोगों ने अन्य कारण बताया पिछड़ी जातियों के 27·0 प्रतिशत उत्तर-दाताओं ने अपर्याप्त आय, 10·0 प्रतिशत ने स्थान की नापसन्दगी, 17·0 प्रतिशत समायोजन का अभाव तथा 46·0 प्रतिशत लोगों ने अन्य कारण बताया। इसी प्रकार अनुसूचित जाति के 46·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपर्याप्त आय, 15·0 प्रतिशत कार्य के स्थान की नापसन्दगी, 10·0 प्रतिशत समायोजन का अभाव 3था 28·0 प्रतिशत लोगों ने असन्तोष का अन्य कारण बताया।

सारिणी संख्या 18 के विश्लेषण से निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- ग्रामीण समुदाय के लोग अपने ग्रामीण व्यवसायों से सन्तुष्ट नहीं हैं। 47·4 प्रतिशत लोग तो बिल्कुल ही सन्तुष्ट नहीं हैं और 29·2 प्रतिशत लोग जो तटस्थ हैं वे यह सोचकर चुप हैं कि आगे अब कौन सा व्यवसाय अपनाया जाय, समझ नहीं पा रहे हैं।

2- ग्रामीण समुदाय अब अधिकाधिक संख्या में नौकरी की ओर उन्मुख हो रहा है। शिक्षा के प्रसार का प्रभाव गांवों पर भी पड़ा है जिसके कारण नौकरी की आकांक्षा लोगों में उत्पन्न हुई है।

3- कृषि व पशुपालन तथा अन्य ग्रामीण रोजगारों से लोग उदासीन होते जा रहे हैं। सारिणी संख्या 18 से ही स्पष्ट है कि केवल 24·2 प्रतिशत लोग ही कृषि की ओर उन्मुख हैं।

4- गांव के लोग भी व्यापार की ओर अग्रसर होते जा रहे हैं।

5- जातिगत पेशों का आधार गांवों से टूट चुका है। कृषि मजदूर अब औद्योगिक मजदूर होना चाह रहा है। जातिगत पेशे का चुनाव केवल 1·0 प्रतिशत लोगों ने ही किया है।

उत्तरदाताओं की पत्नियों के रोजगार

आमतौर से ग्रामीण समाज में शिक्षा का अभाव होने के कारण लोग व्यापार और नौकरी से दूर हैं। फिर भी गांवों में शिक्षा व्यापक प्रसार हुआ है और लोग अपनी पत्नियों को भी पर्दे से बाहर नौकरी के क्षेत्र में भेजने पर उन्मुख हुए हैं। ब्राह्मणों की 2·0 प्रतिशत, भूमिहार की 1·0 प्रतिशत, क्षत्रिय की 3·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति की 2·0 प्रतिशत पत्नियां नौकरी करने वाली हैं। क्षत्रिय की एक पत्नी तथा पिछड़ी जाति की एक पत्नी मिडवाइफ है। जबकि अन्य पत्नियां प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापिकाएं हैं। इस सारिणी संख्या 18 से यह स्पष्ट हो रहा है कि गांवों में धीरे-धीरे पर्दा-प्रथा उठ रहा है और औरतें भी जो कभी घरों के अन्दर ही कैद रहकर परावलम्बी जीवन व्यतीत कर रही थी, अब वे भी स्वावलम्बन की ओर बढ़ रही हैं। 1·4 प्रतिशत पत्नियां नौकरी करने वाली हैं।

SOCIOLOGY LIBRARY
Sl No ....
NEHU : SHILLONG

गतिशीलता और मानव प्रवृत्ति

गतिशीलता मनुष्य के जीवन में दो प्रकार के परिवर्तन उत्पन्न करती हैं। यह या तो लम्बवत् होती है या क्षैतिज होती है। यह गतिशीलता सामाजिक, आर्थिक या व्यावसायिक हो सकती है। इस गतिशीलता की प्रक्रिया के साथ ही साथ मानव के व्यवहारों, उसकी अभिरुचि, उसकी क्रियायों एवं प्रवृत्तियों में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न हो जाता है। गतिशीलता की अवधारणा मुख्यरूप से स्वतन्त्र प्रतियोगिता एवं अवसर की समानता पर निर्भर करती है। जिस समाज में ऊँचा उठने के लिए क्षेत्र विशेष में जितनी ही स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष प्रतियोगिता तथा समान अवसर उपलब्ध होंगे उस समाज में उतनी ही अधिक गतिशीलता दिखाई पड़ेगी। परम्परागत भारतीय सामाजिक व्यवस्था का स्तरीकरण आमतौर पर स्थिर था। ऐसी सामाजिक व्यवस्था में मनुष्य की प्रतिष्ठा जन्मजात होती है। आधुनिक भारतीय समाज पर नगरीकरण, औद्योगीकरण एवं आधुनिक शिक्षा का प्रभाव पड़ा है। भारतीय समाज पर पाश्चात्य शिक्षा एवं संस्कृति का भी गहरा प्रभाव पड़ा है, जिसके परिणामस्वरूप व्यावसायिक संरचना में आमूल परिवर्तन उत्पन्न हुए हैं और व्यावसायिक व सामाजिक गतिशीलता का मार्ग प्रशस्त हुआ है। यदि किसी मनुष्य का व्यवसाय स्थिर हो और उसकी सामाजिक स्थिति या प्रतिष्ठा में कोई परिवर्तन न हो तो उसका व्यवहार कठोर हो जाता है और व्यवहार का लचीलापन समाप्त हो जाता है जैसाकि भारतीय जातिव्यवस्था के अन्तर्गत किसी व्यक्ति के व्यवहार को देखा जा सकता है। परन्तु हमारे भारतीय समाज में शिक्षा के प्रभाव, व्यावसायिक स्वतन्त्रता तथा समाज में उत्पन्न नये मूल्य बोध ने हमारे समाज में व्यक्ति के व्यावहारिक क्रिया-कलापों को नये साँचे में ढाल

दिया है। एक परिवर्तनशील समाज में किसी व्यक्ति को अपने व्यावसायिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों के साथ ही साथ अपने प्रवृत्तियों एवं व्यवहारों में भी परिवर्तन लाना पड़ता है ताकि वह अपने को बदलते हुए मूल्यों व नये सृजित वातावरण के साथ अपना सामंजस्य स्थापित कर सके।

परम्परागत् भारतीय समाज में स्थापित व्यवहार एवं प्रवृत्तियाँ आधुनिक भारतीय समाज में बदलती हुई दिखलाई पड़ रही हैं। समाज में ऐसा देखा जा रहा है कि सामाजिक समस्याओं और सामाजिक प्रतिष्ठा के सन्दर्भ में स्थापित मूल्यों में परिवर्तन हो रहा है।

व्यावसायिक गतिशीलता और अर्जित प्रस्थिति

भारतीय परम्परागत सामाजिक व्यवस्था इस विश्वास पर टिकी हुई थी कि एक व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा जन्मजात होती है। किसी विशेष जाति के परिवार में जन्म लेते ही बच्चा उस जाति और प्रतिष्ठा का अधिकारी हो जाता था। परन्तु अनुसन्धानकर्ता ने अपने अध्ययन में इस तथ्य को प्रदर्शित करने का प्रयास किया है कि व्यक्ति की जन्मजात सामाजिक प्रतिष्ठा, अर्जित सामाजिक प्रतिष्ठा के द्वारा पदच्युत हो जाती है। अनेकों उत्तरदाता जो निम्नजाति के थे, उन्होंने अपने को उच्चवर्ग का महसूस किया था। अनेकों उत्तरदाताओं ने बताया कि उनका सामाजिक प्रतिष्ठा किसी जाति और परिवार विशेष में जन्म लेने के कारण नहीं, बल्कि उनकी शिक्षा और व्यवसाय के कारण अर्जित प्रतिष्ठा है। आधुनिक भारतीय समाज में समाज का

जातिगत स्तरीकरण धीरे-धीरे टूट रहा है, और जाति का स्थान अब "वर्ग" लेता जा रहा है, जैसे-- मजदूर वर्ग, अध्यापक वर्ग, किसान वर्ग, चिकित्सक वर्ग, रिक्सावाला वर्ग, उच्च वर्ग, निम्न वर्ग इत्यादि। इस प्रकार अब जाति के आधार पर वर्गीकृत समाज वर्ग के आधार पर वर्गीकृत होता जा रहा है। जाति के स्थान पर वर्ग की उत्पत्ति औद्योगीकरण, नगरीकरण और सम्पूर्ण समाज का तकनीकी व्यावसायीकरण का प्रतिफल है। नगरीय सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव भारतीय ग्रामीण जीवन पर भी पड़ा है और गाँवों के लोग भी नगरीय मनोवृत्तियों के पोषक होते जा रहे हैं। निम्नलिखित सारणी संख्या 19 से उत्तरदाताओं की वर्गीय सम्बद्धता का पता चलता है।

सारिणी संख्या 18 को विश्लेषित करने से पता चलता है कि सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से केवल 21·6 प्रतिशत लोगों ने अपने को उच्च वर्ग का बताया, जबकि 28·6 प्रतिशत उच्च -मध्य, 31·0 प्रतिशत मध्य निम्न और 18·8 प्रतिशत निम्न वर्ग का सदस्य अपने को माना।

जातिगत आधार पर यदि सम्पूर्ण सारिणी विश्लेषण किया जाय तो पता चलेगा कि परम्परागत भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत जिन जातियों को निम्न और निम्न मध्य वर्ग का माना जाता था, उसके अधिकांश सदस्य अपने को उच्च मध्य वर्ग का मानते हैं और जिस जाति का सामाजिक व्यवस्था में सबसे ऊँचा स्थान था वह अपने को मध्य निम्न और निम्न वर्ग तक महसूस करते हैं। इसके पीछे तथ्य यह है कि छोटी जातियों के जो सदस्य पढ़-लिखकर नौकरी करते हैं वे अपने को मध्यवर्ग का सदस्य मानते है और उच्च जातियों के जो सदस्य अनपढ़ और गरीब हैं, वे अपने को निम्न वर्ग का सदस्य मानते हैं। इन

सारिणी संख्या- 19 : उत्तरदाताओं की वर्गीय सम्बद्धता

क्रमसंख्या	जाति		वर्ग			
			उच्चवर्ग	उच्च-मध्यवर्ग	मध्य-निम्नवर्ग	निम्नवर्ग
1-	ब्राह्मण	100	34	48	18	-
2-	भूमिहार	100	34	29	31	6
3-	क्षत्रिय	100	36	32	28	4
4-	पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	4	31	49	16
5-	अनुसूचित जातियां	100	-	3	29	68
योग		500	108	143	155	94
			21·6%	28·6%	31·0%	18·8%

लोगों की धारणा आर्थिक आधार पर उच्च और निम्न मानने की थी।

ब्राह्मण जाति जिसकी, प्रतिष्ठा समाज में सर्वोपरि थी उसके केवल 34·0 प्रतिशत सदस्य अपने को उच्च वर्ग का मानते हैं, अन्य 48·0 प्रतिशत उच्च-मध्य तथा 18·0 प्रतिशत सदस्य मध्य-निम्न वर्ग का महसूस करते हैं। भूमिहार जाति जो अपने को ब्राह्मण जाति का समकक्ष मानता है, उसके 34·0 प्रतिशतसदस्य अपने को उच्च वर्ग का सदस्य मानते हैं, जबकि 29·0 प्रतिशत उच्च-मध्य, 31·0 प्रतिशत मध्य-निम्न तथा 6·0 प्रतिशत सदस्य निम्न वर्ग का महसूस करते हैं। मध्य-निम्न और निम्न वर्ग का सदस्य महसूस करने वाले लोग अनपढ़ और गरीब थे।

क्षत्रिय जाति जिसकी परम्परागत सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत उच्चवर्गीय स्थिति थी, उसके 36·0 प्रतिशत सदस्य उच्च वर्ग, 32·0 प्रतिशत उच्च-मध्य, 28·0 प्रतिशत मध्य-निम्न और 4·0 प्रतिशत लोग निम्न वर्ग का सदस्य महसूस करते हैं। पिछड़ी जातियाँ जिसके सदस्य निम्न वर्ग की सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त थे, इनमें से 4·0 प्रतिशत सदस्य उच्चवर्ग, 31·0 प्रतिशत उच्च मध्य, 49·0 प्रतिशत मध्य-निम्न और 16·0 प्रतिशत निम्न वर्ग का सदस्य महसूस करते हैं। इनमें जो अपने को उच्च वर्ग और उच्च- मध्य वर्ग का सदस्य महसूस करते हैं, वे पढ़े-लिखे नौकरी करने वाले आर्थिक रूप से सम्पन्न लोग हैं। अनुसूचित जाति का कोई सदस्य अपने को उच्च वर्ग का नहीं बताया, परन्तु 3·0 प्रतिशत लोग उच्च-मध्य वर्ग, 29·0 प्रतिशत मध्य-निम्न तथा 68·0 प्रतिशत सदस्य अपने को निम्नवर्ग का सदस्य महसूस करते हैं। अनुसूचित जाति परम्परागत भारतीय समाज में अछूत और उपेक्षित

माने जाते थे, परन्तु परिवर्तित परिस्थितियों में जो लोग शिक्षित और नौकरीशुदा हैं, वे लोग अपने को उच्च-मध्य और मध्य-निम्न वर्ग का सदस्य मानते हैं।

हमारा परम्परागत रूढ़िग्रस्त भारतीय समाज किस सीमा तक एक खुले समाज का लक्षण ग्रहण कर चुका है, कई प्रश्नों के द्वारा इस तथ्य की जांच करने का हमने प्रयास किया है। उत्तरदाताओं से प्रश्न किया गया कि "कौन सा तत्व आपकी सामाजिक स्थिति का निर्धारण करता है ? इस प्रश्न के कई उत्तर विकल्प के रूप में प्रस्तुत किये गये। जिनमें से किसी एक उत्तर का चुनाव करना था। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से कुल 24·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सामाजिक स्थिति का निर्धारक तत्व जन्म को बताया। 15·4 प्रतिशत सम्पत्ति, 16·0 प्रतिशत व्यवसाय तथा 44·6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा को सामाजिक स्थिति का निर्धारक तत्व माना। उत्तरदाताओं से एक दूसरा प्रश्न किया कि "क्या आपका व्यवसाय आपकी सामाजिक प्रतिष्ठा को ऊँचा उठाने में सहायक हुआ है ? 79·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सकारात्मक उत्तर दिया, जबकि 21·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने "नहीं" कहा। उत्तरदाताओं से एक तीसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आपको अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अच्छा बनाने पर्याप्त अवसर उपलब्ध है ? इस प्रश्न का तीन प्रकार से उत्तरदाताओं ने उत्तर दिया। 31·2 प्रतिशत लोगों ने हाँ कहा, 55·6 प्रतिशत लोगों ने "नहीं" कहा तथा 13·2 प्रतिशत लोगों ने कहा कि कुछ-कुछ सीमा तक अवसर उपलब्ध है।

सारिणी संख्या- 20 : सामाजिक स्थिति का निर्धारक तत्व

क्रम संख्या	जाति		कौन सा तत्व आपकी प्रतिष्ठा का निर्धारण करता है ?				क्या आपका व्यवसाय आपकी प्रतिष्ठा को ऊँचा उठाने में सहायक हुआ है।		क्या आपको सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अच्छा बनाने का अवसर उपलब्ध है ?		
			जन्म	सम्पत्ति	व्यवसाय	शिक्षा	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	कुछ-कुछ
1-	ब्राह्मण	100	32	15	13	40	88	12	32	58	10
2-	भूमिहार	100	21	19	17	43	81	19	37	49	14
3-	क्षत्रिय	100	19	12	15	54	85	15	34	54	12
4-	पिछड़ी जातियां	100	23	11	18	48	78	22	28	56	16
5-	अनुसूचित जातियां	100	25	20	17	38	63	37	25	61	14
योग		500	120 24·0%	77 15·4%	80 16·0%	223 46·6%	395 79·0%	105 21·0%	156 31·2%	278 55·6%	66 13·2%

सारिणी संख्या 20 के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- जन्म पर आधारित सामाजिक प्रतिष्ठा का महत्व धीरे-धीरे कम होता जा रहा है।

2- सम्पत्ति, व्यवाय और शिक्षा को भी सामाजिक स्थिति का निर्धारक तत्व माना जाने लगा है। शिक्षा का भारतीय समाज पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है।

3- लोग ऐसा महसूस कर रहे हैं कि उनको अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अच्छा बनाने का पर्याप्त अवसर उपलब्ध है।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट हो रहा है कि सामाजिक संरचना के सन्दर्भ में लोगों की प्रवृत्तियों एवं विचारों में पर्याप्त परिवर्तन हुआ है। जैसाकि पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि भारतीय समाज धीरे-धीरे बन्द समाज से खुले समाज की ओर बढ़ रहा है।

आर्थिक प्रस्थिति

वर्ग एक अनिश्चित शब्द हैं। उत्तरदाताओं के वर्ग का निश्चय किसी एक आधार पर नहीं किया जा सकता। जैसाकि "लुण्ड वर्ग"[54] ने कहा है कि "विभिन्न शब्दों के उपयोग के सन्दर्भ में सामाजिक विज्ञानों में समानता का अभाव है। वर्ग की अवधारणा के सन्दर्भ में यह विशेष रूप से सत्य है।" "कोल"[55] ने कहा है कि हमने प्रस्थिति को निश्चित करने के लिए दोनों वैषयिक पद्धतियों का उपयोग किया है। शिक्षा, व्यवसाय,

जीवन स्तर, घरों का प्रकार, वंशानुक्रम और कुछ अन्य प्रस्थिति के निर्धारक तत्वों का उल्लेख कई शोधकर्ताओं ने किया है।

उत्तरदाताओं की आर्थिक प्रस्थिति को निश्चित करने के लिए दो प्रकार के प्रश्न पूछे गये, जो उनके द्वारा उपयोग की जाने वाली सवारी तथा घर से सम्बन्धित थे।

सारिणी संख्या 21 के तथ्यों को देखने से पता चलता है कि सम्पूर्ण ग्रामीण उत्तरदाताओं में से 95·4 प्रतिशत लोगों के पास अपनी मकान है जबकि 4·6 प्रतिशत लोगों के पास अपनी कोई मकान नहीं है। जातिगत आधार पर यदि हम विश्लेषण करें तो 97·0 प्रतिशत ब्राह्मणों के पास अपनी मकान है और 3·0 प्रतिशत के पास कोई मकान नहीं है। जिनके पास मकान नहीं है, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वे खानाबदोश की जिन्दगी व्यतीत करते हैं, बल्कि उनके पास केवल घास-फूस से निर्मित झोपड़े मात्र ही हैं। जिनके पास मकान हैं, उनमें से केवल चार या पाँच प्रतिशत लोगों के पास पक्की मकान है अन्य सभी मिट्टी के बने मकानों में निवास करते हैं। लगभग यही स्थिति प्रत्येक जाति के लोगों के पास है। भूमिहार जाति के उत्तरदाताओं में 99·0 प्रतिशत के पास अपनी मकान है, केवल 1·0 प्रतिशत लोगों के पास झोपड़ियाँ हैं। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में सबके पास मकान है। पिछड़ी जातियों के 98·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास मकान है। इन मकानों में अधिकांश कच्चे और टूटे-फूटे मकान हैं। अनुसूचित जाति के 17·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास मकान के नाम पर कुछ नहीं है। ये लोग भी झोपड़ियों में ही अपना गुजर-बसर करते हैं।

सारिणी संख्या- 21 : घर और सवारी

क्रमसंख्या जाति		क्या आपका निजी मकान है ?			आप किस सवारी का उपयोग करते हैं ?			
		हाँ	नहीं		साइकिल	रिक्शा	स्वचालित सवारी	कुछ नहीं
1- ब्राह्मण	100	97	3	-	36	-	4	60
2- भूमिहार	100	99	1	-	35	1	3	61
3- क्षत्रिय	100	-	-	-	40	2	5	53
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	98	2	-	30	-	1	69
5- अनुसूचित जातियां	100	83	17	-	25	-	-	75
योग	500	477 95·4%	23 4·6%	-	166 33·2%	3 ·6%	13 2·6%	318 60·36%

धीरे-धीरे गांवों में भी सड़कों का निर्माण होने लगा है। गांव अब शहरों से जुड़ते जा रहे हैं। गांव का आर्थिक रूप से समृद्ध व्यक्ति विभिन्न प्रकार की सवारियों का उपयोग आवागमन के लिए कर रहा है। व्यक्ति की आर्थिक स्थिति की जांच के लिए उनसे पूछा गया कि "आप किस सवारी का उपयोग करते हैं ?" तो कुल उत्तरदाताओं में से 33•2 प्रतिशत साइकिल, •6 प्रतिशत रिक्सा, 2•6 प्रतिशत स्वचालित सवारियों का उपयोग करते हुए पाये गये। 60•36 प्रतिशत ऐसे लोग थे जो किसी भी सवारी का उपयोग नहीं करते हैं।

जातिगत आधार पर यदि हम सारिणी संख्या 21 के आंकड़ों का विश्लेषण करें तो ब्राह्मणों में 36•0 प्रतिशत साइकिल, 4•0 प्रतिशत स्वचालित सवारी जैसे स्कूटर, जीप-कार या बस का उपयोग करने वाले हैं। 60•0 प्रतिशत लोग किसी सवारी का उपयोग नहीं करते हैं। भूमिहार में 35•0 प्रतिशत साइकिल 1•0 प्रतिशत रिक्सा, 3•0 प्रतिशत स्वचालित सवारी का उपयोग करते हैं। 61•0 प्रतिशत लोग किसी सवारी का उपयोग नहीं करते। क्षत्रियों में 40•0 प्रतिशत साइकिल, 2•0 प्रतिशत रिक्सा, 5•0 प्रतिशत स्वचालित सवारी का उपयोग करते है और 53•0 प्रतिशत किसी सवारी का उपयोग नहीं करते। पिछड़ी जातियों में 30•0 प्रतिशत साइकिल तथा 1•0 प्रतिशत स्वचालित सवारी का उपयोग करते हैं। 69•0 प्रतिशत लोग किसी सवारी का उपयोग नहीं करते हैं। अनुसूचित जाति के 25•0प्रतिशत उत्तरदाता साइकिल का उपयोग करते हैं तथा 75•0 प्रतिशत किसी सवारी का उपयोग नहीं करते हैं।

सारिणी संख्या 21 के तथ्यों के विश्लेषण से निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- गांवों के निवासियों की अधिकांश आवास मिट्टी के बने हैं, जो उनकी निम्न आर्थिक स्थिति का परिचय कराती हैं।

2- गांव के निवासियों की मुख्य सवारी साइकिल है।

3- पिछड़ी जाति और अनुसूचित जाति के लोग सवर्णों की अपेक्षा अधिक गरीब हैं। निम्न आर्थिक स्थिति के कारण ही इनकी मुख्य सवारी साइकिल है।

संगठनों की सदस्यता और वैचारिक परिवर्तन

संगठनों, क्लबों, राजनैतिक दलों की सदस्यता से व्यक्ति की सामाजिक कार्यों में रुचि एवं जागरूकता का पता चलता है। जो समाज जितना ही अधिक शिक्षित होता है, उसकी सामाजिक भूमिकाएं उतनी ही ज्यादा होती हैं। इन संगठनों के सदस्यों का एक लक्ष्य होता है, जिसकी पूर्ति के लिए सभी लोग सामूहिक रूप से प्रयास करते हैं। संगठनों के अधिकांश सदस्य एक दूसरे से अपरिचित होते हुए भी एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं। एक समुदाय में जिसकी विशेषता गुमनाम सम्बन्ध है[56], ऐसे संगठनों की सदस्यता व्यक्ति को अपनी आर्थिक और व्यावसायिक हितों की सुरक्षा के लिए संघर्षशील होने का अवसर प्रदान करती है। बड़ी-बड़ी नगरीय आबादी में व्यावसायिक संघों की सदस्यता किसी सामाजिक संरचना में व्यक्ति की आर्थिक हितों के साथ उसकी अलग पहचान का प्रदर्शन करती है।[57]

संगठनों की सदस्यता तथा उनमें भाग लेने की क्रिया के सम्बन्ध में अनेक अन्य शोधकर्ताओं ने कार्य किया है। उदाहरण के लिए पिटर ब्लाउ ने कहा है कि "एक प्रस्थिति से ऊपर या नीचे गति करने की प्रक्रिया में उस प्रस्थिति विशेष के सारे सम्बन्ध टूट जाते हैं और नई प्रस्थिति में प्रवेश करने पर व्यक्ति के अन्त:वैयक्तिक सम्बन्धों में उसी के अनुकूल नई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।[58]

कर्टिस[59] ने लिखा है कि "गतिशीलता व्यक्ति की पूर्ण सदस्यता और संगठन की भागीदारी को कमजोर बनाती है। संगठन में आस्था की कमी उत्पन्न करती है वनिस्पत उन लोगों के जिनकी संगठन में पूर्ण आस्था है। अपने स्तर के अन्य अगतिशील सदस्यों के बीच गतिशील सदस्य अपनी आत्म स्वीकृति में कठिनाई का अनुभव करते हैं।

सारिणी संख्या 22 से उत्तरदाताओं की संगठनों, क्लबों एवं राजनैतिक दलों की सदस्यता का प्रदर्शन होता है। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में कोई भी किसी क्लब का सदस्य नहीं है, इसका कारण यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में क्लबों का अभाव है। 12·8 प्रतिशत उत्तरदाता अपने व्यावसायिक संघों के सदस्य तथा 8·2 प्रतिशत लोग राजनैतिक दलों के सदस्य हैं।

जातिगत आधार पर विश्लेषण किया जाय तो ब्राह्मण जाति का कोई उत्तरदाता किसी क्लब का सदस्य नहीं है, 12·0 प्रतिशत लोग संगठन तथा 8·0 प्रतिशत लोग राजनैतिक दलों के सदस्य हैं। भूमिहार जाति के 21·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने व्यावसायिक संगठन तथा 12·0 प्रतिशत राजनैतिक दलों के सदस्य हैं। क्षत्रिय जाति के कुल 17·0 प्रतिशत उत्तरदाता संगठन तथा 9·0 प्रतिशत राजनैतिक दलों के सदस्य हैं। पिछड़ी जातियों में 14·0 प्रतिशत संगठन तथा 6·0 प्रतिशत राजनैतिक दल तथा

सारिणी संख्या- 22 : संगठनों के सदस्य और वैचारिक परिवर्तन के सन्दर्भ में दृष्टिकोण

क्रमसंख्या जाति		आप निम्न में से किसके सदस्य हैं			यदि आपको अच्छी सुविधाएं प्रदान की जायँ तो क्या आप बदलना चाहेंगे			
		क्लब	संगठन	राजनैतिक दल	राजनैतिक दृष्टिकोण	परम्पराएं	व्यवसाय	धर्म
1- ब्राह्मण	100	-	12	8	90	4	95	-
2- भूमिहार	100	-	21	12	92	3	82	-
3- क्षत्रिय	100	-	17	9	93	2	88	-
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	-	14	6	95	6	96	-
5- अनुसूचित जातियां	100	-	-	6	96	31	98	17
योग	500	-	64 12·8%	41 8·2%	466 93·2%	46 9·2%	459 91·8%	17 3·4%

अनुसूचित जाति के केवल 6·0 प्रतिशत लोग केवल राजनैतिक दलों के सदस्य हैं। उत्तरदाताओं में जो लोग संगठनों के सदस्य हैं, उनमें अधिकांश प्राथमिक तथा हाई स्कूलों के अध्यापक हैं।

उत्तरदाताओं से उनकी परिवर्तनशील अभिरुचि का पता लगाने के लिए तथा उनकी राजनैतिक, व्यावसायिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक प्रतिबद्धता जानने के लिए उनसे एक प्रश्न किया गया कि "यदि आपको अच्छी सुविधाएँ प्रदान की जांय तो क्या आप अपना राजनैतिक सम्बन्ध, व्यवसाय, परम्परा या धर्म को छोड़ना पसन्द करेंगे ?" सारिणी संख्या 22 के विश्लेषण से ज्ञात हो रहा है कि राजनैतिक विचारधारा तथा व्यवसाय ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें बहुत अधिक मात्रा में परिवर्तन सम्भव है। परम्परा में परिवर्तन की बात 9·2 प्रतिशत लोगों ने स्वीकार किया। धार्मिक परिवर्तन के लिए कोई तैयार दिखाई नहीं पड़ता। केवल कुछ शिक्षित और बेरोजगार हरिजनों ने अपनी धार्मिक आस्था में असहमति व्यक्त की।

जातिगत आधार विश्लेष्ण करने से ज्ञात होता है कि 90·0 प्रतिशत ब्राह्मण अपने राजनैतिक सम्बन्ध छोड़ने को तैयार हैं। 4·0 प्रतिशत परम्परा एवं 95·0 प्रतिशत लोग व्यवसाय छोड़ सकते हैं। धर्म परिवर्तन के लिए कोई तैयार नहीं हुआ। भूमिहारों में 92·0 प्रतिशत राजनैतिक सम्बन्ध, 3·0 प्रतिशत परम्पराएँ एवं 82·0 प्रतिशत व्यवसाय छोड़ने को तैयार हैं। क्षत्रियों में 93·0 प्रतिशत राजनैतिक विचारधारा, 2·0 प्रतिशत परम्परा तथा 88·0 प्रतिशत व्यावसायिक परिवर्तन के इच्छुक हैं। पिछड़ी जातियों में 95·0 प्रतिशत राजनैतिक सम्बन्ध, 6·0 प्रतिशत परम्परा तथा 96·0 प्रतिशत व्यवसाय छोड़ सकते हैं। धार्मिक परिवर्तन के लिए कोई तैयार नहीं है। अनुसूचित जातियों में 96·0 प्रतिशत राजनैतिक

सम्बन्ध, 31·0 प्रतिशत परम्परा, 98·0 प्रतिशत व्यवसाय तथा 17·0 प्रतिशत लोग धार्मिक परिवर्तन कर सकते हैं। अनुसूचित जातियों में धार्मिक परिवर्तन की भावना का मैंने कुछ प्रश्नों द्वारा पता लगाने की कोशिश की तो पता चला कि ये लोग हिन्दू समाज में अपने को उपेक्षित एवं हीन मानते हैं, गरीबी से पीड़ित हैं। अत: इन्हीं कठिनाइयों के चलते उन्होंने धर्म परिवर्तन की बात स्वीकार की यदि ये कठिनाइयाँ दूर कर दी जायँ तो वे अपना धर्म नहीं छोड़ सकते। परम्पराओं का भी शिक्षित हिन्दू समाज में धीरे-धीरे महत्त्व कम हो रहा है। परम्पराओं को छोड़ने के लिए केवल शिक्षित, नौजवान लोग ही तैयार हैं अन्यथा अन्य सारे लोग उसमें परिवर्तन की बात स्वीकार नहीं करते हैं।

राजनैतिक व्यवहार एवं मतदान का आदर्श

जैसे-जैसे समाज में वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षा का प्रसार हो रहा है, वैसे-वैसे ही समाज के लोगों का दृष्टिकोण वैज्ञानिक होता जा रहा है। औद्योगीकरण एवं नगरीकरण का प्रभाव भारतीय ग्रामीण जीवन पर पड़ता जा रहा है। "फिलिप एम० हाउजर[60] ने अपने एक शोध-निबन्ध में नगरीकरण का राजनैतिक प्रभाव के सम्बन्ध में तथ्य प्रस्तुत किया है। उन्होंने यह प्रदर्शित किया है कि "प्रतिनिधि सरकार" की संरचना एवं विचारधारा पर नगरीकरण महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालता है।" अत: व्यावसायिक गतिशीलता के सन्दर्भ में लोगों का राजनैतिक व्यवहार और जनतान्त्रिक क्रिया-कलापों की जानकारी आवश्यक प्रतीत होती है।

सारिणी संख्या- 23 : उत्तरदाताओं का मतदान के सम्बन्ध में आदर्श

क्रमसंख्या जाति	यदि आप मतदाता हैं तो क्या आप हमेशा -				आप किस विचार से किसी खास उम्मीदवार को वोट देते हैं				
	एक ही दल को वोट देते हैं	दूसरे चुनाव में दूसरे को वोट देते हैं	तीसरी बार फिर किसी दूसरे दल को वोट देते हैं	अपनी जाति के उम्मीदवार को वोट देते हैं	वैचारिकता	व्यक्तिगत योग्यता	जाति या धर्म	किसी दूसरे के प्रभाव से	कभी वोट नहीं देते
1- ब्राह्मण	20	16	44	-	16	42	2	20	20
2- भूमिहार	23	19	31	3	14	38	4	10	24
3- क्षत्रिय	15	22	34	2	13	44	2	16	25
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	31	15	26	8	18	33	12	17	20
5- अनुसूचित जाति	38	14	10	3	27	23	3	12	35

उत्तरदाताओं से प्रश्न किया गया है कि "यदि आप मतदाता हैं तो आपके मतदान की पद्धति क्या है ?" 20·0 प्रतिशत ब्राह्मण मतदाता हमेशा एक ही दल को वोट देते हैं। 16·0 प्रतिशत दूसरे चुनाव में दूसरे को और 44·0 प्रतिशत मतदाता तीसरे चुनाव में तीसरे प्रत्याशी को वोट देते हैं। भूमिहार उत्तरदाताओं में 23·0 प्रतिशत एक ही दल को हमेशा, 19·0 प्रतिशत दूसरे चुनाव में दूसरे को तथा 31·0 प्रतिशत तीसरे चुनाव में तीसरे प्रत्याशी को वोट देते हैं, क्षत्रिय 15·0 प्रतिशत हमेशा एक ही दल को, 22·0 प्रतिशत दूसरे चुनाव में दूसरे दल को तथा 34·0 प्रतिशत हर चुनाव में दूसरे उम्मीदवार को वोट देते हैं। 3·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपनी जाति के उम्मीदवार को वोट देते हैं। पिछड़ी जाति के 31·0 प्रतिशत मतदाता हमेशा एक ही दल को वोट देते हैं। 15·0 प्रतिशत दूसरे चुनाव में दूसरे को तथा 26·0 प्रतिशत तीसरे चुनाव में तीसरे को वोट देते हैं। 8·0 प्रतिशत मतदाता हमेशा अपनी जाति के उम्मीदवार को वोट देते हैं। अनुसूचित जाति के 38·0 प्रतिशत मतदाता हमेशा एक ही दल को, 14·0 प्रतिशत दूसरे चुनाव में दूसरे दल को तथा 10·0 प्रतिशत तीसरे चुनाव में तीसरे दल को वोट देते हैं। 3·0 प्रतिशत मतदाता अपनी जाति के उम्मीदवार को वोट देते हैं। उत्तरदाताओं से एक दूसरा प्रश्न किया गया कि "आप किस विचार से किसी खास उम्मीदवार को वोट देते हैं ? तो इस प्रश्न का उत्तर भिन्न-भिन्न प्राप्त हुआ। ब्राह्मण मतदाता 16·0 प्रतिशत वैचारिकता, 42·0 प्रतिशत व्यक्तिगत योग्यता, 2·0 प्रतिशत जाति और 20·0 प्रतिशत दूसरे के प्रभाव से तथा 20·0 प्रतिशत कभी वोट देते ही नहीं। भूमिहारों में 14·0 प्रतिशत वैचारिकता के आधार पर, 38·0 प्रतिशत व्यक्तिगत योग्यता, 4·0 प्रतिशत जाति के आधार पर तथा 10·0 प्रतिशत दूसरे लोगों के प्रभाव में आकर वोट देते हैं, 24·0 प्रतिशत लोग कभी वोट नहीं दिये हैं। क्षत्रिय

उत्तरदाताओं में 13·0 प्रतिशत वैचारिकता, 44·0 प्रतिशत व्यक्तिगत योग्यता, 2·0 प्रतिशत जाति के आधार पर तथा 16·0 प्रतिशत दूसरे के प्रभाव से वोट देते हैं। 25·0 प्रतिशत कभी वोट नहीं दिये। पिछड़ी जातियों में 18·0 प्रतिशत वैचारिकता, 33·0 प्रतिशत व्यक्तिगत योग्यता, 12·0 प्रतिशत जाति के आधार पर, 17·0 प्रतिशत दूसरे के प्रभाव से तथा 20·0 प्रतिशत कभी वोट नहीं दिये। अनुसूचित जातियों में 27·0 प्रतिशत वैचारिकता, 23·0 प्रतिशत व्यक्तिगत योग्यता, 3·0 प्रतिशत जाति के आधार पर तथा 12·0 प्रतिशत दूसरे लोगों के प्रभाव में आकर वोट देते हैं। 35·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कभी वोट नहीं दिया।

सारिणी संख्या 23 का अध्ययन करने पर पता चलता है कि उत्तरदाताओं का वोट देने के सन्दर्भ में कोई एक निश्चित आदर्श नहीं है और न तो वे किसी विचारधारा विशेष से प्रभावित ही दिखाई पड़ते हैं। "पेटर्सन" इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि "उध्र्व गतिशील राजनैतिक नेता अपने मतदान के व्यवहार में उन राजनीतिज्ञों की अपेक्षा अधिक रूढ़िवादी होते हैं, जिनकी व्यावसायिक प्रस्थिति अपने पिताओं से वास्तविक तौर पर भिन्न नहीं होती।[6]

भाग्य और धर्म के प्रति दृष्टिकोण

अधिकांश लोग भाग्यवादी होते हैं और वे अपनी सफलता और असफलता को भाग्य का परिणाम मानते हैं। इसी के फलस्वरूप भारतीयों का दृष्टिकोण वैज्ञानिक नहीं हो पाया। खासतौर से ग्रामीण क्षेत्रों के लोग नगरीय क्षेत्र के लोगों की अपेक्षा अधिक धर्मभीरु और भाग्यवादी होते हैं। भारतीय समाज में धर्म सामाजिक नियन्त्रण का मुख्य तत्व है। विज्ञान और टेक्नालाजी के प्रसार ने धीरे-धीरे लोगों के विचारों में परिवर्तन किया है।

व्यावसायिक परिवर्तन का प्रभाव लोगों के भाग्य और धर्म सम्बन्धी विचारों पर कितना पड़ा है, इसका अध्ययन हमने कुछ प्रश्नों के द्वारा करने का प्रयास किया है। सारिणी संख्या 24 में उत्तरदाताओं के भाग्य और धर्म के प्रति दृष्टिकोण का प्रदर्शन किया गया है।

उत्तरदाताओं से प्रश्न किया गया कि "क्या आपने अपने जीवन में जो कुछ भी उपलब्ध किया है, वह आपके भाग्य का परिणाम है ?" समस्त उत्तरदाताओं में से 65·6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि "हाँ, और 34·0 प्रतिशत लोगों ने कहा कि "नहीं" । उत्तरदाताओं से एक दूसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आप कठिन परिश्रम से अपने भाग्य को बदल सकते हैं ?" 94·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं का उत्तर सकारात्मक तथा केवल 5·2 प्रतिशत उत्तरदाताओं का उत्तर नकारात्मक था। एक दूसरा प्रश्न उत्तरदाताओं से किया गया कि "क्या आप अपने वर्तमान भाग्य से सन्तुष्ट हैं, या इसे अच्छा बनाने का प्रयास करते हैं ?" 93·2 प्रतिशत उत्तरदाता अपने भाग्य को अच्छा बनाने के प्रयास में लगे हुए मालूम पड़े और 6·8 प्रतिशत उत्तरदाता सन्तुष्ट मालूम पड़े। "हर्बर्टएच0 सैगुलर" ने लिखा है कि व्यक्ति का राजनैतिक व्यवहार उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा, धर्म, शिक्षा उसकी आय से प्रभावित होता है।[62]

जातिगत आधार पर सारिणी संख्या 24 का विश्लेषण किया जाय तो पता चलता है कि 60·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाता अपने जीवन की उपलब्धियों को अपने भाग्य का परिणाम मानते हैं और 40·0 प्रतिशत अपनी उपलब्धियों को भाग्य का परिणाम नहीं मानते हैं। 96·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाताओं का ऐसा मत है कि वे कठिन परिश्रम से अपने भाग्य को बदल सकते हैं, परन्तु केवल 4·0 प्रतिशत उत्तरदाता इस मत से सहमत नहीं हैं।

सारिणी संख्या- 24 : भाग्य और धर्म के प्रति दृष्टिकोण

जाति (संख्या सहित)	क्या आपकी उपलब्धियाँ आपके भाग्य का परिणाम है।		क्या कठिन श्रम से अपने भाग्य को बदल सकते हैं ?		आप अपने वर्तमान भाग्य से		क्या आप पूजा स्थल पर जाते हैं ?		यदि हाँ तो क्या		
	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	सन्तुष्ट हैं	अच्छा बनाने का प्रयास करते हैं	हाँ	नहीं	नियमित	अधिकांश	कभी-कभी
1-ब्राह्मण 100	60	40	96	4	4	96	94	6	10	19	65
2-भूमिहार 100	64	36	95	5	11	89	82	18	5	16	59
3-क्षत्रिय 100	67	33	97	3	6	94	81	19	2	18	61
4-पिछड़ी या मध्य0 जातियाँ 100	59	41	93	7	8	92	86	14	5	13	68
5-अनुसूचित जाति 100	78	22	93	7	5	95	14	86	2	7	5
योग 500	328 65·6%	172 34·4%	474 94·8%	26 5·2%	34 6·8%	466 93·2%	357 71·4%	143 28·6%	24 4·8%	73 14·6%	258 50·16%

ब्राह्मण उत्तरदाताओं में केवल 4·0 प्रतिशत अपने वर्तमान भाग्य से सन्तुष्ट हैं, बाकी 96·0 प्रतिशत लोग अपने भाग्य को अच्छा बनाने का प्रयास करने में लगे हुए हैं।

भूमिहार उत्तरदाताओं में 64·0 प्रतिशत लोग अपनी उपलब्धियों को भाग्य का परिणाम मानते हैं, 36·0प्रतिशत लोग भाग्य का परिणाम नहीं मानते हैं। 95·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं का ऐसा विश्वास है कि वे कठिन परिश्रम से अपने भाग्य को बदल सकते हैं, लेकिन 5·0 प्रतिशत लोगों का ऐसा विश्वास नहीं है। 11·0 प्रतिशत भूमिहार उत्तरदाता अपने भाग्य से सन्तुष्ट हैं और 89·0 प्रतिशत लोग अपने भाग्य को सुधारने के प्रयास में लगे हुए हैं।

क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 67·0 प्रतिशत लोग अपनी उपलब्धियों को अपने भाग्य का परिणाम मानते हैं और 33·0 प्रतिशत लोग अन्य कारणों का प्रभाव मानते हैं। 97·0 प्रतिशत क्षत्रिय उत्तरदाताओं का ऐसा मत है कि वे अपने भाग्य को कठिन परिश्रम से बदल सकते हैं और 3·0 प्रतिशत उत्तरदाता इस बात से सहमत नहीं हैं। अपने भाग्य से केवल 6·0 प्रतिशत क्षत्रिय उत्तरदाता ही सन्तुष्ट हैं, अन्य 94·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने भाग्य को अच्छा बनाने का प्रयास करते हैं।

पिछड़ी जातियों के 59·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपनी उपलब्धियों को भाग्य का परिणाम मानते हैं और 41·0 प्रतिशत लोग अपनी उपलब्धियों को भाग्य का परिणाम नहीं मानते हैं। 93·0 प्रतिशत उत्तर-दाताओं का ऐसा अभिमत है कि वे कठिन परिश्रम से अपने भाग्य को बदल सकते हैं, केवल 7·0 प्रतिशत लोग इस अभिमत से सहमत नहीं थे। अपने वर्तमान भाग्य से केवल 8·0 प्रतिशत लोग ही सन्तुष्ट हैं अन्य 92·0

प्रतिशत लोग अपने भाग्य को अच्छा बनाने का प्रयास कर रहे हैं।

अनुसूचित जातियों में सर्वाधिक 78·0 प्रतिशत लोग अपने जीवन की उपलब्धियों को अपने भाग्य का परिणाम मानते हैं, केवल 22·0 प्रतिशत लोग अपनी उपलब्धियों को भाग्य का परिणाम नहीं मानते हैं। 93·0 प्रतिशत हरिजन उत्तरदाताओं का ऐसा विश्वास है कि वे कठिन परिश्रम से अपने भाग्य को बदल सकते हैं, केवल 7·0 प्रतिशत उत्तरदाता इस तथ्य से सहमत नहीं हैं। 5·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने वर्तमान भाग्य से सन्तुष्ट हैं और 95·0 प्रतिशत लोग अपने भाग्य को अच्छा बनाने का प्रयास करते रहते हैं।

सारिणी संख्या 24 के विश्लेषण के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- उत्तरदाताओं की मनोवृत्तियों में भाग्यवाद और व्यावहारिकता का समन्वय दिखाई पड़ता है। 65·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपनी उपलब्धियों को अपने भाग्य का परिणाम माना जबकि 94·8 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसा मानते हैं कि कठिन परिश्रम उनके भाग्य को बदल देगा।

2- उत्तरदाताओं का कएक बड़ा समूह अपनी उपलब्धियों को अपने भाग्य का परिणाम मानता है, लेकिन वह यह भी मानता है कि भाग्य को पुरुषार्थ से बदला जा सकता है और उसे बदलने के प्रयास में लगा भी हुआ है।

3- उत्तरदाताओं के विचारों में उत्पन्न विरोधाभास उसके "सीमान्तता" का प्रदर्शन करता है। ऐसा लगता है कि वे वैज्ञानिक एवं तकनीकी

शिक्षा के प्रभाव से प्रभावित भी हैं, लेकिन जीवन में भाग्य की भूमिका जैसे पुराने मत से उन्मुक्त भी नहीं हो सके हैं।

सारिणी संख्या 24 का दूसरा भाग उत्तरदाताओं की धार्मिक अभिरुचि का प्रदर्शन करता है। उत्तरदाताओं की धार्मिक अभिरुचि के सन्दर्भ में उनसे प्रश्न किया गया कि "क्या आप पूजा स्थल पर जाते हैं ?" इसका उत्तर हाँ या नहीं में देना था। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 71·4 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सकारात्मक उत्तर दिया और 28·6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने नकारात्मक उत्तर दिया। उत्तरदाताओं से पुन: स्पष्टीकरण के लिए पूछा गया कि यदि पूजा स्थल पर जाते हैं तो "क्या नियमित, अधिकांश या कभी-कभी जाते है ?" तो पता चला कि केवल 4·8 प्रतिशत उत्तरदाता नियमित, 14·6 प्रतिशत अधिकांश तथा 50·16 प्रतिशत उत्तरदाता कभी-कभी ही पूजा स्थल पर जाते हैं।

ब्राह्मण जाति के 94·0 प्रतिशत उत्तरदाता पूजा स्थल पर जाते हैं और 6·0 प्रतिशत नहीं जाते। 10·0 प्रतिशत उत्तरदाता नियमित, 19·0 प्रतिशत अधिकांश तथा 65·0 प्रतिशत कभी-कभी पूजा स्थल जाते हैं। भूमिहार जाति के 82·0 प्रतिशत उत्तरदाता पूजास्थल पर जाते हैं, जिनमें 5·0 प्रतिशत नियमित, 16·0 प्रतिशत अधिकांश तथा 59·0 प्रतिशत कभी-कभी जाते हैं। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 81·0 प्रतिशत पूजा स्थल पर जाते हैं और 19·0 प्रतिशत नहीं जाते हैं। पूजास्थल पर जाने वाले क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 2·0 प्रतिशत नियमित, 18·0 प्रतिशत अधिकांश तथा 61·0 प्रतिशत कभी-कभी ही जाते हैं। पिछड़ी जाति के 86·0 प्रतिशत उत्तरदाता पूजास्थल पर जाते हैं, जिनमें 5·0 प्रतिशत नियमित, 13·0 प्रतिशत अधिकांश तथा 68·0 प्रतिशत कभी-कभी। अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं में केवल

14·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही पूजास्थल पर जाते हैं, शेष 86·0 प्रतिशत कभी पूजा स्थल पर नहीं जाते। पूजास्थल पर जाने वाले हरिजनों में 2·0 प्रतिशत नियमित, 7·0 प्रतिशत अधिकांश तथा 5·0 प्रतिशत कभी-कभी जाते हैं।

सारिणी संख्या 24 के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- भारतीय ग्रामीण समाज पर आधुनिक शिक्षा एवं पाश्चात्य विचारधाराओं का प्रभाव होने के बावजूद भी अधिकांश ग्रामीण लोगों का धर्म में भरपूर विश्वास है।

2- ग्रामीण लोगों के धार्मिक विश्वास के बावजूद भी बहुत थोड़े से लोग पूजास्थल पर नियमित जाते हैं। केवल 4·8 प्रतिशत उत्तरदाता ही नियमित रूप से पूजास्थल पर जाते हैं।

3- सारिणी संख्या 24 में अनुसूचित जाति के आँकड़ों को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि आज भी हरिजन अपने को पूजा-स्थलों से दूर ही रखे हुए हैं।86·0 प्रतिशत हरिजन उत्तरदाता कभी पूजास्थल पर नहीं जाते हैं।

विवाह के प्रति दृष्टिकोण

भारतीय मान्यताओं के अनुसार विवाह एक धार्मिक संस्कार है, जिसे वैदिक रीति से सम्पन्न किया जाना चाहिए। सामान्यतया भारत के लोगों की शादियाँ उनके माता-पिता द्वारा अपनी ही जाति में सम्पन्न किया जाता है। क्या व्यावसायिक गतिशीलता का प्रभाव विवाह

के तौर-तरीकों पर भी पड़ा है ? इस तथ्य की पुष्टि करने हेतु उत्तर-दाताओं से प्रश्न पूछा गया कि "क्या आप सोचते हैं कि विवाह माता-पिता द्वारा निश्चित किया जाना चाहिए या स्वयं विवाहित जोड़े द्वारा ? सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 73·6 प्रतिशत लोग विवाह का निर्धारण माता-पिता द्वारा तथा 18·0 प्रतिशत लोग स्वयं विवाहित जोड़े द्वारा और 8·4 प्रतिशत उत्तरदाता माता-पिता तथा विवाहित जोड़े, दोनों की सहमति से निर्धारित करने के पक्षधर हैं।

इस सन्दर्भ में एक दूसरा प्रश्न किया गया कि "क्या आप अन्तर्जातीय विवाहों के पक्षधर हैं ?" सारिणी संख्या 25 के आंकड़ों से स्पष्ट है कि 23·2 प्रतिशत उत्तरदाता अन्तर्जातीय विवाहों के पक्षधर हैं और 76·8 प्रतिशत उत्तरदाता अपनी ही जाति मेंविवाहों के समर्थक हैं ? उत्तरदाताओं से फिर पूछा गया कि "यदि आप अन्तर्जातीय विवाहों के समर्थक हैं तो क्या आप अपने से निम्न या उच्च जाति में अपने पुत्रों-पुत्रियों की शादी कर सकते हैं ? 7·4 प्रतिशत उत्तरदाता अपने से उच्च जाति में तथा केवल 2·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने से निम्न जाति में शादी करने के समर्थक हैं। यद्यपि बड़ी जातियों यथा -- ब्राह्मण, भूमिहार और क्षत्रिय क्रमश: 22·0 प्रतिशत, 17·0 प्रतिशत और 19·0 प्रतिशत उत्तरदाता अन्तर्जातीय विवाहों के समर्थक हैं, परन्तु अपने पुत्रों एवं पुत्रियों की शादी अन्य जातियों में करने के प्रश्न पर कोई स्पष्ट और सन्तोषजनक उत्तर न दे सके।

जातिगत आधार पर सारिणी संख्या 25 का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि 66·0 प्रतिशत ब्राह्मण विवाह का निर्धारण माता-पिता द्वारा, 24·0 प्रतिशत विवाहित जोड़े द्वारा तथा 10·0 प्रतिशत माता-पिता

सारिणी संख्या- 25 : विवाह के प्रति दृष्टिकोण

जाति (संख्या सहित)		विवाह का निर्धारण			क्या आप पक्षधर		यदि अन्तर्जातीय विवाहों के पक्षधर हैं तो क्या विवाह कर सकते हैं		
		माता-पिता द्वारा	विवाहित जोड़े द्वारा	दोनों के द्वारा	अन्तर्जातीय विवाहों के	जातिगत विवाहों के	अपने से ऊँची जातियों	अपने से निम्न जाति में	सभी जातियों में
1-ब्राह्मण	100	66	24	10	22	78	– किसी से इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट उत्तर नहीं मिला	–	1
2-भूमिहार	100	70	16	14	17	83	–	–	3
3- क्षत्रिय	100	72	15	13	19	81	–	–	6
4- पिछड़ी जातियां या मध्यवर्गीय जातियां	100	75	20	5	13	87	2	–	11
5- अनुसूचित जाति	100	85	15	–	45	55	35	10	18
योग	500	368	90	42	116	384	37	10	48
		73·6%	18·0%	8·4%	23·2%	76·8%	7·4%	2·0%	9·6%

SOCIOLOGY
LIBRARY
Sl No.........

एवं विवाहित जोड़े, दोनों के द्वारा सम्पन्न किये जाने के समर्थक हैं। 22·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाता अन्तर्जातीय विवाहों एवं 78·0 प्रतिशत जातिगत विवाहों के समर्थक हैं, 1·0 प्रतिशत उत्तरदाता सभी जातियों में विवाह के समर्थक हैं। परन्तु अपने पुत्रों एवं पुत्रियों की शादी अपने से अन्य जाति में करने के प्रश्न पर कोई स्पष्ट उत्तर नहीं देते हैं।

70·0 प्रतिशत भूमिहार उत्तरदाता विवाह का निर्धारण माता-पिता द्वारा 16·0 प्रतिशत विवाहित जोड़े द्वारा 14·0 प्रतिशत उत्तरदाता माता-पिता एवं विवाहित जोड़े, दोनों के द्वारा निश्चित किये जाने के पक्षधर हैं। 17·0 प्रतिशत भूमिहार उत्तरदाता अन्तर्जातीय विवाहों के एवं 83·0 प्रतिशत जातिगत विवाहों के समर्थक हैं। अन्तर्जातीय विवाहों के समर्थक होते हुए कोई भी उत्तरदाता अपने पुत्रों एवं पुत्रियों की शादी अन्य जाति में करना नहीं चाहता जबकि सिद्धान्त रूप से 3·0 प्रतिशत उत्तरदाता सभी जातियों में विवाह करने के समर्थक हैं।

क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 72·0 प्रतिशत माता-पिता, 15·0 प्रतिशत विवाहित जोड़े तथा 13·0 प्रतिशत दोनों के द्वारा निश्चित किये जाने के समर्थक हैं। 19·0 प्रतिशत उत्तरदाता अन्तर्जातीय विवाहों एवं 81·0 प्रतिशत जातिगत विवाहों के समर्थक हैं। अन्तर्जातीय विवाहों के समर्थक होते हुए भी अपने पुत्रों एवं पुत्रियों की शादी अन्य जाति में करने के प्रश्न पर स्पष्ट उत्तर नहीं दे पाये, जबकि 6·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने किसी भी जाति में शादी की बात व्यवहार में नहीं, परन्तु सिद्धान्त रूप से स्वीकार करते हैं।

पिछड़ी जाति के 75·0 प्रतिशत उत्तरदाता विवाह का निर्धारण माता-पिता द्वारा तथा 10·0 प्रतिशत विवाहित जोड़े द्वारा होने के समर्थक हैं। 13·0 प्रतिशत उत्तरदाता अन्तर्जातीय विवाहों के समर्थक हैं और 87·0 प्रतिशत जातिगत विवाहों के समर्थक हैं। 2·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने पुत्रों एवं पुत्रियों की शादी अपने से उच्च जाति में कर सकते हैं परन्तु निम्न जाति में शादी करने के लिए कोई तैयार नहीं हुआ, 11·0 प्रतिशत लोग सैद्धान्तिक रूप से सभी जातियों में विवाह की स्वीकृति प्रदान करते हैं।

अनुसूचित जातियों के 85·0 प्रतिशत उत्तरदाता विवाह का निर्धारण माता-पिता द्वारा तथा 15·0 प्रतिशत विवाहित जोड़े द्वारा चाहते हैं। 45·0 प्रतिशत उत्तरदाता अन्तर्जातीय विवाहों के समर्थक तथा 55·0 प्रतिशत जातिगत विवाहों के समर्थक हैं। 35·0 प्रतिशत लोग अपने से उच्च जातियों में तथा 10·0 प्रतिशत अपने से निम्न जातियों में भी शादी की बात स्वीकार करते हैं। 18·0 प्रतिशत उत्तरदाता किसी भी जाति में शादी करने के लिए तैयार हैं।

सारिणी संख्या 25 के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- ग्रामीण समाज के अधिकांश लोग विवाह का निर्धारण माता-पिता द्वारा ही पसन्द करते हैं। लेकिन ऐसे लोगों की भी पर्याप्त संख्या है जो ऐसा मानते हैं कि विवाह का निर्धारण स्वयं विवाहित जोड़े द्वारा होना चाहिए। सन्तोषजनक संख्या सीमान्त स्थिति, के लोगों की भी है जो ऐसा मानते हैं कि विवाह के निर्धारण में माता-पिता एवं विवाहित जोड़े की

परस्पर सहमति होनी चाहिए। इस प्रकार का वैवाहिक दृष्टिकोण निश्चित ही लोगों की व्यावसायिक गतिशीलता प का परिणाम है।

2- भारत में विवाहों का आधार परम्परागत रूप से जातिगत रहा है और जातिगत विवाह बहुत ही प्रभावशाली ढंग से सम्पन्न भी किये जाते हैं, इसी कारण अधिकांश लोग जातिगत विवाहों को ही मान्यता प्रदान करते हैं, लेकिन हमारे आँकड़ों से स्पष्ट है कि उत्तरदाताओं का एक बड़ा वर्ग (23·2 प्रतिशत) अन्त-र्जातीय विवाहों का समर्थक है। इससे स्पष्ट है कि लोगों का झुकाव अन्तर्जातीय विवाहों की ओर हो रहा है।

3- अन्तर्जातीय विवाहों के समर्थक अपने पुत्रों एवं पुत्रियों की शादी अपने से उच्च या निम्न जाति में कर सकते हैं। परन्तु व्यवहार में ऐसा देखने को नहीं मिला है।

मानव व्यवहार पर गतिशीलता का प्रभाव

ऐसा समझा जाता है कि जब कोई मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन काल में एक ही व्यावसायिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक प्रस्थितियों (स्टेटसेज) में रह जाता है, तो उसका व्यवहार बहुत ही कठोर और अनम्य हो जाता है।"[63] किसी निश्चित सामाजिक और आर्थिक स्थिति में स्थाई रूप से कार्य करते रहने से सम्पूर्ण शरीर, मस्तिष्क तथा व्यवहार एक निश्चित आयाम प्राप्त कर लेता है। इस आधार पर एक निश्चित प्रस्थिति में मानव का व्यवहार अपनी एक स्थिरता प्राप्त कर लेता है और दूसरी प्रस्थिति में रहने वाले व्यक्ति के व्यवहार से काफी भिन्नता प्राप्तकर लेता है। गतिशील समाज के लोगों का व्यवहार एक दूसरी ही तस्वीर पेश करती है। गतिशील समाज के लोग एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय, एक आर्थिक एवं सामाजिक प्रस्थिति से दूसरे आर्थिक और सामाजिक प्रस्थिति से गुजरते रहते हैं। उनके व्यवहार में किसी स्थाई आदत का निर्माण नहीं हो पाता है, क्योंकि जो आदत या व्यवहार किसी एक निश्चित प्रस्थिति के लिए आवश्यक व उपयुक्त है वह दूसरी प्रस्थिति के क लिए अनावश्यक व अनुपयुक्त हो जाती है। किसी प्रस्थिति में परिवर्तन, शरीर, मस्तिष्क तथा प्रतिक्रियाओं में तदनुकूल परिवर्तन एवं सामन्जस्य को आवश्यक बना देता है। गतिशील समाज के लोगों का व्यवहार अधिक लचीला तथा परिवर्तनशील होता है तथा व्यक्ति को बहुत अधिक विभिन्नताओं के साथ सामन्जस्य स्थापित करने के योग्य बना देती है। इसी प्रकार एक व्यक्ति जब किसी एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय में जाता है (उदाहरणार्थ-- कृषि मजदूर से अध्यापक या क्लर्क) और अपनी क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं को नई परिस्थितियों के अनुरूप नहीं बना पाता है तो वह उस नई परिस्थिति से परित्यक्त कर दिया जाता है। इस प्रकार मानव व्यवहार का लचीलापन और नमनीयता

गतिशील समाज की अनिवार्य परिणति है। इस आधार पर एक अति-विकसित-गतिशील अमेरिकी समाज के किसी अमेरिकन और तुलनात्मक रूप से अविकसित एवं अगतिशील भारतीय समाज के किसी हिन्दू के व्यवहारों की अच्छे ढंग से तुलना की जा सकती है।

गतिशीलता नैतिकता के विघटन को बढ़ावा देती है

एक स्थान से दूसरे स्थान पर तीव्र गतिशीलता (उध्र्व या क्षैतिज दिशाओं) कठोर आदतों और स्थाई नैतिक मान्यताओं को ओझल कर देती है। एक अगतिशील समाज में जहाँ प्रत्येक सामाजिक या आर्थिक प्रस्थिति की अपनी एक निश्चित आदतें और नैतिक मान्यताएँ हैं, और व्यक्ति की प्रस्थिति भी स्थाई है, वहाँ उपरोक्त कथन सत्य नहीं है। एक गतिशील समाज में प्रत्येक सदस्य अस्थाई रूप से ही कुछ दिनों के लिए एक सामाजिक प्रस्थिति में रहता है और स्थाई रूप से एक प्रस्थिति से दूसरी प्रस्थिति में अपनी भिन्न-भिन्न नैतिक मान्यताओं और आदतों के साथ गति करता रहता है और इस प्रकार उसकी आदतें कठोर नहीं हो पाती हैं, और नैतिक मान्यताओं में स्थायित्व नहीं आ पाता है, फलतः गतिशील समाज में नैतिक परिवर्तन दिखाई पड़ता है। अपराधों में वृद्धि होती है। अनेक समाजशास्त्रियों जैसे-- दुर्खिम, जानडेवी, सी0एच0 कूले, थामस और ज्नानिकी, सदरलैण्ड और बोगार्डस[64] ने क्षैतिज गतिशीलता में वृद्धि और अपराधों की वृद्धि में सह-सम्बन्ध स्थापित किया है।

एक गतिशील समाज में एक व्यक्ति बहुत सी विरोधाभाषी शिक्षा की योजनाओं से प्रभावित रहता है, अतः आदतें भी एक दूसरी की

विरोधाभाषी ही होती हैं, व्यक्तित्व विखण्डित हो जाता है, आचारण संहिता भी गड़बड़ और विघटित हो जाती है।[65] अपेक्षाकृत कम गतिशील भारतीय समाज में भी लोगों के व्यवहारों में लचीलापन एवं खुलापन आया है, नैतिक मान्यताएँ टूटी हैं, आदतों में परिवर्तन हुआ है, आचरण संहिता भी विघटित हुई है, लेकिन भारतीय ग्रामीण समाज में आध्यात्म के वातावरण का वर्चस्व बना हुआ है। देवी-देवताओं ईश्वर में आस्था बनी हुई है।

"हिन्दुत्व का स्वभाव है कि वह जितना ही परिवर्तित होता है, उतना ही वह अपने मूल स्वरूप के अधिक समीप पहुँच जाता है।"[66] वैदिक आर्य उषा, इन्द्र, सूर्य और अग्नि को देवता मानते थे, किन्तु आज भी ऐसे नैष्ठिक हिन्दू विद्यमान हैं, जिनके हृदय में इन देवताओं के लिए श्रद्धा और भक्ति है। वैदिक आर्यों का विश्वास था कि स्वर्ग में भी आत्मा इसी जीवन के समान सुख और आनन्द भोगती है, और आज भी ऐसे हिन्दुओं की कमी नहीं जो स्वर्ग में सुख पाने के लिए धरती पर दान देते हैं। आज से तीन हजार वर्ष पूर्व भारतीय संस्कृति का जो रूप था, आज भी मूलतः वह वैसा ही है, किन्तु एक बात है, जिसमें काफी अन्तर पड़ा है और वह यह बात है कि नास्तिकों एवं भौतिकवादियों को छोड़कर आज ऐसे हिन्दू कम हैं जो परलोक का भय नहीं मानते हों। यह वैदिक काल की भावना से भिन्न भावना है। वैदिक ऋषि नास्तिक या भौतिकवादी तो नहीं थे, किन्तु मृत्यु से डरने की बात उन्हें नहीं सूझी थी, न उनमें यही भाव जगा था कि स्वर्ग के साथ-साथ कहीं कोई नरक भी हो सकता है, जहाँ आत्मा को यातनाएं झेलनी पड़ सकती हैं। वस्तुतः आत्मा, पुनर्जन्म और कर्मफलवाद के विषय

में वैदिक ऋषियों ने अधिक नहीं सोचा था। "आत्मा शरीर से भिन्न वस्तु है, जो मरणोपरान्त परलोक को जाती है", इस सिद्धान्त का आभास वैदिक ऋचाओं में मिलता है, किन्तु आत्मा का आवागमन क्यों होता है, इसकी खोज वेदों में नहीं मिलती। वेदों का वातावरण आनन्द और उल्लास का वातावरण है, उसमें भय अथवा शोक की छाया नहीं है॥

भारतीय संस्कृति में बहुदेववाद

अधिकारी विद्वानों के अनुसार वैदिक कालीन मनुष्य का विश्वास था कि प्रकृति की प्रत्येक शक्ति एक देवता के अधीन काम करती है, और उस देवता की पूजा करने से मनुष्य का कल्याण होता है। अपने सुख-समृद्धि की कामना ही नहीं, बल्कि स्वर्ग की कामना भी वे इसी भाव से करते हैं कि स्वर्ग में उन्हें उत्तम सुख मिले।

विद्वानों के अनुसार प्रकृति के एक-एक रूप में एक-एक देवता की कल्पना करते रहने के कारण वैदिक आर्य बहुदेववादी हो गये थे, यह बात वैदिक साहित्य से प्रमाणित होती है। ऋग्वेद 33 देवताओं का अस्तित्व मानता है। शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ में भी 8 बसु, 11 रुद्र, 12 आदित्य तथा आकाश और पृथ्वी इन 33 देवताओं का उल्लेख मिलता है। ऐतरेय ब्राह्मण ग्रन्थ में भी 11 प्रयाजदेव, 11 उपयाजदेव और 11 अनुयाजदेव, ये 33 देवता हैं। ऋग्वेद के दो मन्त्रों में 3339 देवताओं के होने का उल्लेख मिलता है। किन्तु सायणाचार्य ने लिखा है कि देवता तो 33 ही है, केवल उनकी महिमा दिखाने के लिए 3339 देवताओं का उल्लेख कर दिया गया है। इन देवताओं की

परिकल्पनाओं का प्रभाव समस्त हिन्दू संस्कृति पर गहरे रूप से छाया हुआ है, किन्तु बावजूद इसके कुछ भौतिकवादी हिन्दू नास्तिक भी हैं। भारतीय परम्परा में नास्तिक उस व्यक्ति को कहा गया है, जो वेदों की निन्दा करता है। ईश्वर की सत्ता न मानने वालों को नास्तिक कहने की प्रथा बहुत बाद में चली। महर्षि पाणिनि के काल तक भी नास्तिक उसे कहते थे, जो परलोक के अस्तित्व में विश्वास नहीं करता था। पाणिनि का एक सूत्र है--"अस्ति-नास्ति दिष्टं मतिः, अर्थात् परलोक की सत्ता को मानने वाला व्यक्ति आस्तिक और न मानने वाला व्यक्ति नास्तिक कहलाता है।[67] बुद्ध ने भी अपने संवादों में नास्तिकवाद को मिथ्या दृष्टि कहकर गर्हित किया है।[68]

हिन्दू-संस्कृति में लोगों,द्वारा देवी-देवताओं की खोज

हिन्दू देवी-देवताओं के सन्दर्भ में भारतीय इतिहास के विभिन्न युगों में विभिन्नता रही है। प्रत्येक युग की कला और साहित्य ने भारतीय जनसामान्य की धारणाओं को इस प्रकार प्रदर्शित किया है कि देवियों और देवताओं की नई व्यवस्थाओं ने मानव जीवन की नई समस्याओं के समाधान में सहयोग किया है।

ऋग्वेद के देवी-देवता

जब वैदिक आर्य आपस में एकत्रित होकर देवताओं के लिए यज्ञ की क्रिया सम्पन्न करते थे तो उन देवताओं की सूची में वरुण, इन्द्र, अग्नि, रुद्र, वायु, मित्र, पुसा, भग,आदित्य और अदिति, सिनिवाली, महती और सीता इत्यादि के नाम थे। आर्य विजेताओं की भाँति मुकुट

सहित अन्य आभूषणों से युक्त, कौशलपूर्वक तीन-धनुष चलाते हुए तथा अपने हाथ से दावा बनाते हुए दिखाए गये हैं। उलूका का विवरण यम के दूत के रूप में किया गया है। लक्ष्मी और अलक्ष्मी का विवरण भी मिलता है।

उपनिषदों के देवी-देवता

काली, कराली, मनोजवा, सुलिक्ता, सुधुम्नवर्ना, स्फुलिंगिनी और देवी-विश्वरूपिणी इन सभी का विवरण मुण्डक उपनिषद् में अग्नि की लौ तथा उसके विभिन्न रूपों में व्यक्त की गई है। दुर्गा भी केवल अग्नि के एक रूप का नाम था। "केन उपनिषद्" में हम उमा का नाम पाते हैं, लेकिन रुद्र की पत्नी के रूप में नहीं। वह वहाँ ब्रह्मा का परिचय इन्द्र से कराती है। जब देवता अग्नि तथा ब्राह्मण के अन्य स्वरूपों की पहचान करने में अयोग्य थे तो यह उमा ही थीं जिन्होंने उनका गुणगान किया था।

उत्तर-वैदिक देवता

वैदिक युग के बाद देवताओं के स्वरूप और उनके योगदान में काफी अन्तर आया। इन्द्र, अग्नि, रुद्र, वायु और अदिति, सरस्वती, सीता, काली, कराली, दुर्गा, उमा इत्यादि का एक निश्चित स्वरूप तथा उनका एक निश्चित योगदान लोगों के मनोरंजन तथा अन्य सांसारिक सुख-दु:ख से सम्बद्ध हो गया। उत्तर-वैदिक देवताओं का विस्तृत विवरण रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवद्गीता, मारकण्डेय, कल्कि और अन्य अनेक पुराणों और उप-पुराणों में मिलता है।[69]

रामायण के देवता

महान कवि वाल्मीकि ने अपने रामायण में देवताओं एवं देवियों की एक लम्बी सूची से परिचय कराया है। इन्द्र उस समय स्वर्ग के अधिपति और एक योद्धा थे। वह मनुष्य से भी लड़ा करते थे, वह ऐरावत नामक हाथी पर चढ़ा करते थे। ब्रह्मा जो चार मुख और आठ हाथ के देवता थे कलहंस नामक पक्षी पर सवारी करते थे, उनकी पूजा भी अब प्रचलित हो गई थी। वैदिक युग के रुद्र जो दवा बनाया करते थे, वे अब कैलाश पर्वत पर जीवन व्यतीत करने चले गये।

महाभारत के देवता

महाभारत में इन्द्र हजार आँखों से विभूषित किये गये हैं और यम जो मृत्यु के देवता थे, ऐसा कहा जाता है कि वे शनिग्रह से प्रकट हुए हैं और उन्हें नरक का कार्यभार प्रदान किया गया है। वे भैंसे पर चढ़ते हैं। वायु जो हवा के देवता हैं, वे हिरन की सवारी करते हैं। अग्नि के सम्बन्ध में यह कल्पना है कि वे बकरी की सवारी करती हैं। ऐसा पाया गया है कि भगवान् शिव अपने भक्तों की भक्ति से मोहित होकर अपना बड़प्पन छोड़कर उनकी सेवा किये हैं और इन्द्र के साथ उनकी पत्नी तथा शिव के साथ उनकी पत्नी की पूजा का प्रस्ताव सामान्य प्रचलन में होने लगा।

हरिवंश पुराण के देवी-देवता

एक प्रचलित मान्यता के अनुसार बासुदेव भगवान् को एक पुत्र उत्पन्न होने के बाद अपने कार्यों से मुक्त होकर वे बद्रिकाश्रम में शिव की उपासना में ध्यान मग्न होकर बैठ गये। बासुदेव, बलराम और अर्जुन उच्च प्रतिष्ठा पाकर देवताओं की कोटि तक पहुँचे। बलराम की

पहिचान एक अवतार के रूप में हुई।

श्रीमद्भागवत् के देवता

इन्द्र बौद्धों, जैनों और कापालिकों के देवता हो गये। शिव हलका (स्वर्ण) का रस पीने लगे और संहारक के स्थान पर अवस्थित हो गये। क्रमश: उमा, दुर्गा और काली उनकी पत्नियां हैं। शिव के अनुयायियों के प्रियपेय नारियल का रस और अन्य प्रकार की मदिरा हैं। दक्ष-प्रजापति शिव के श्वसुर हुए। कृष्ण, विष्णु के अवतार माने गये। विष्णु की अपेक्षा शिव, ब्रह्मा और इन्द्र का स्थान छोटा माना गया तथा उन्हें विष्णु के आधीन बताया गया। नारदीय और धर्म-पुराणों में विष्णु की महिमा का विवरण है। यद्यपि इसमें शिव और उनकी शक्ति का विवरण भी आया है, परन्तु उनकी महिमा विष्णु से कम बताई गई है। लक्ष्मी और सरस्वती शिव के परिवार में सम्मिलित की गई है।

लिंग, शिव, देवी और कल्कि पुराणों में शिव और उनकी शक्ति को अन्य देवताओं की अपेक्षा उच्च स्थान प्रदान किया गया है। शिव पुराण में कहा गया है कि शिव के एक हजार नाम है।

तन्त्रों के देवी-देवता

उड्डिसा, डभारा, नकुलिसा और अन्य तन्त्रों[70] में शिव और उनकी शक्ति को प्रधानता दी गई है और उनकी पूजा के विविध रूपों का वर्णन किया गया है। महाकला, शिव, भैरव, भैरवी, डाकिनी और योगिनी को देवताओं के समान उच्च-स्थान प्रदान किया गया है।

जैन पुराण के देवी-देवता

हिन्दू-पुराणों की भाँति जैनियों के पास भी उनका अपना पुराण[7] है। इनमें जैनियों के तिर्थमकारों के अतिरिक्त हिन्दू देवी-देवताओं के विवरण भी हैं। जैनियों का आदिपुराण भगवान् रिसभ का विवरण प्रस्तुत करते हुए बताता है कि भगवान् रिसभ के जन्म दिन के अवसर पर इन्द्र उनकी पत्नी तथा अन्य देवी-देवतागण उनसे निम्न स्थान को प्राप्त थे। जैनियों के पद्म-पुराण में हम इन्द्र, हनुमान, राम और लक्ष्मण का विशिष्ट विवरण पाते हैं। अरिस्टानेमि-पुराण में दुर्गा का विवरण है। जैनियों की पुस्तक "भगवती सूत्र" में हम तिर्थमकारों का चित्रण पाते हैं। वे आभूषण के रूप में सर्पों से विभूषित किये गये हैं। ध्यानी और पार्श्वनाथ जो जैनियों के देवता हैं, ध्यान-मग्न शिव के समान दिखाई पड़ते हैं।

बौद्धपुराण के देवी-देवता

जैनियों की भाँति बौद्धों के भी अपने पुराण हैं। इनमें से अधिकांश में बुद्ध की महिमा एवं महत्ता का वर्णन किया गया है। "सुवर्ण-प्रभा" में हम लक्ष्मी और सरस्वती की स्तुतियाँ पाते हैं।

बौद्ध तन्त्र के देवता

"साधना माला" और "साधना समुच्चय" को बौद्ध अपनी तान्त्रिक कृतियाँ मानते हैं। ये महायान सम्प्रदाय से सम्बन्धित हैं। इनमें हम बोधिसत्वों जिन्हें लोकेश्वरा, मैत्रेय और मंजुश्री कहा जाता है, के रूपों का वर्णन पाते हैं। लोकेश्वरा का दूसरा नाम लोकनाथ है। हम निम्नलिखित अन्य नाम भी बौद्ध देवताओं के पाते हैं -- अवालोकितेश्वरा,

खसरपना लोकेश्वरा, हलाहला लोकेश्वरा, सिंहनादा लोकेश्वरा, हरिहरिहरि वहानोद्भव लोकेश्वरा, त्रयलोक्या भयंकरा लोकेश्वरा, पद्मनारतेश्वरा लोकेश्वरा, नीलकंठावार्य लोकेश्वरा इत्यादि। लोकनाथ बुद्ध की प्रतिमा के बायीं तरफ एक तारा नाम की स्त्री की प्रतिमा दिखाई जाती है। बौद्ध कृति "स्वतन्त्र तन्त्र" में तारा का एक विवरण है जिसे "नील सरस्वती तारा" कहा गया है। तारा का मुख-मण्डल गाढ़ा और तीन आँखें प्रदर्शित की गई है। "साधना समुच्चय" में बज्रतारा का विवरण है जिनकी आठ बाहें, चार चेहरे और अनेकानेक आभूषणों से सुसज्जित दिखाई गई है।[72]

"दुर्गा की पूजा मातृ-भूमि की पूजा है या मातृ-भूमि की पूजा दुर्गा की पूजा है।" यह एक धार्मिक मत है, जो विभिन्न रूपों में भारतीय मस्तिष्क और आत्मा द्वारा वैदिक युग से लेकर वर्तमान नवतन्त्र-वाद तक जिसका प्रतिनिधित्व बंकिमचन्द्र, रामकृष्ण-विवेकानन्द ने किया है, खोजा गया है।"[73]

उपर्युक्त आधार की पुष्टि के लिए ग्रामीण जनमानस से उनकी आध्यात्मिक जागरूकता (प्रेम) को जानने हेतु सारिणी संख्या 26 में दिये गये तीन प्रश्न पूछे गये। पहला प्रश्न पूछा गया कि "क्या आप मनौती में विश्वास करते हैं ?" दूसरा प्रश्न पूछा गया कि "क्या आप व्रत-अनुष्ठान में विश्वास करते हैं ?" और तीसरा प्रश्न पूछा गया कि "असफलता के क्षणों में शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करते है, या असफलता को प्रगति के लिए सीढ़ी के समान मानते हैं ?" पहले प्रश्न के उत्तर के तीन विकल्प दिये गये थे। 1- हाँ, 2- नहीं और 3-कभी-कभी । 72·0 प्रतिशत ब्राह्मणों ने मनौती में विश्वास व्यक्त किया और 18·0 प्रतिशत

ब्राह्मणों ने नकारात्मक उत्तर दिया। उत्तरदाताओं में 10·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे कभी-कभी मनौती में विश्वास करते हैं। 67·0 प्रतिशत भूमिहार उत्तरदाताओं ने हाँ, 21·0 प्रतिशत ने नहीं तथा 12·0 प्रतिशत भूमिहार कभी-कभी मनौती में विश्वास करते हैं। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 65·0 प्रतिशत लोग पहले प्रश्न के उत्तर में हाँ, 25·0 प्रतिशत नहीं तथा 10·0 प्रतिशत कभी-कभी कहा। पिछड़ी या मध्यमवर्गीय जातियों के 76·0 प्रतिशत उत्तरदाता हाँ, 20·0 प्रतिशत नहीं तथा 4·0 प्रतिशत कभी-कभी मनौती में विश्वास करते हैं। अनुसूचित जातियों के कुल 73·0 उत्तरदाता मनौती में विश्वास करते हैं, 10·0 प्रतिशत नहीं तथा 17·0 उत्तरदाता कभी-कभी मनौती में विश्वास करते हैं। यदि सम्पूर्ण उत्तरदाताओं के सन्दर्भ में सोचा जाय तो 70·6 प्रतिशत उत्तरदाता मनौती में विश्वास करते हैं। उत्तरदाताओं का एक बड़ा वर्ग 18·8 प्रतिशत मनौती में विश्वास ही नहीं करता है और 10·6 प्रतिशत उत्तरदाता मनौती में कभी-कभी विश्वास करते हैं।

उत्तरदाताओं से जब दूसरा प्रश्न पूछा गया कि "क्या आप व्रत-अनुष्ठान में विश्वास रखते हैं" ? तो 88·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाताओं ने "हाँ" कहा और 12·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने "नहीं" कहा, इसी प्रकार भूमिहार उत्तरदाताओं में से 74·0 प्रतिशत "हाँ" तथा 26·0 प्रतिशत "नहीं" उत्तर दिया। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 76·0 प्रतिशत ने सकारात्मक तथा 24·0 प्रतिशत ने नकारात्मक उत्तर दिया। पिछड़ी जातियों के 72·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सकारात्मक तथा 28·0 प्रतिशत ने नकारात्मक उत्तर दिया। अनुसूचित जातियों में

सारिणी संख्या 26 : ईश्वर के प्रति विश्वास की प्रवृत्ति

जाति (संख्या सहित)		क्या आप मनौती में विश्वास करते हैं ?			क्या व्रत-अनुष्ठान में विश्वास रखते हैं ?		असफलता के क्षणों में शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करते हैं या उसे प्रगति के लिए सीढ़ी के समान मानते हैं ?	
		हाँ	नहीं	कभी-कभी	हाँ	नहीं	शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना	असफलता को सफलता के लिए प्रगति की सीढ़ी
1- ब्राह्मण	100	72	18	10	88	12	26	74
2- भूमिहार	100	67	21	12	74	26	35	65
3- क्षत्रिय	100	65	25	10	76	24	28	72
4- पिछड़ी जाति या मध्यवर्गीय जातियाँ	100	76	20	4	72	28	18	82
5- अनुसूचित जाति	100	73	10	17	80	20	45	55
योग	500	353	94	53	390	110	142	358
		70·6%	18·8%	10·6%	78·0%	22·0%	28·4%	71·6%

80·0 प्रतिशत उत्तरदाता इस प्रश्न के उत्तर में सकारात्मक और 20·0 प्रतिशत ने नकारात्मक उत्तर दिया। यदि इस प्रश्न का उत्तर सम्पूर्ण उत्तरदाताओं के परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो 78·0प्रतिशत उत्तरदाता व्रत अनुष्ठान में विश्वास करते देखे गये हैं और 22·0 प्रतिशत इसमें विश्वास नहीं करते हैं।

उत्तरदाताओं से तीसरा प्रश्न पूछा गया कि "असफलता के क्षणों में अपनी शक्ति के लिए आप ईश्वर की प्रार्थना करते हैं ? या असफलता को प्रगति के लिए सीढ़ी के समान मानते हैं ? तो इस प्रश्न के उत्तर में 26·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाता शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करते हैं और 74·0 प्रतिशत असफलता को प्रगति के लिए सीढ़ी के समान मानते हैं। भूमिहार उत्तरदाताओं में 35·0 प्रतिशत उत्तरदाता असफलता के क्षणों में शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करते हैं और 65·0 प्रतिशत उत्तरदाता असफलता को प्रगति के लिए सीढ़ी के समान मानते हैं। 28·0 प्रतिशत क्षत्रिय उत्तरदाता, 18·0 प्रतिशत मध्यवर्गीय जातियों के तथा 45·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाता असफलता के क्षणों में शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। 72·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 82·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 55·0 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के उत्तरदाता असफलता को अपने लिए प्रगति की सीढ़ी के समान मानते हैं। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 28·4 प्रतिशत उत्तरदाता असफलता के क्षणों में शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करते हैं और 71·6 प्रतिशत उत्तरदाता असफलता को प्रगति की सीढ़ी मानते हैं।

सारिणी संख्या 26 के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- यद्यपि कि भारतीय ग्रामीण समाज वैज्ञानिक और औद्योगिकृत विचारों और पाश्चात्य देशों के विचारों से ओतप्रोत है, फिर भी भारतीय संस्कृति की मूल आध्यात्मिक प्रेम और देवी-देवताओं में आस्था वैदिक युग के समान ही विद्यमान है। थोड़े से लोग व्रत-अनुष्ठान और मनौती में विश्वास नहीं करते हैं वे भी पूर्णतया नास्तिक नहीं हैं।

2- भारतीय समाज के भाग्यवादी दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ है। अब अपनी असफलता के पीछे किसी दैवी शक्ति का प्रभाव नहीं, अपितु अपने किये गये प्रयासों में कमी को लोग महसूस कर रहे हैं। असफलता को लोग, अपने लिए सफलता प्राप्त करने के लिए और अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता मानते हैं। यह विचार पाश्चात्य विचारों से मेल खाता है।

व्यावसायिक प्रगति एवं दैवीय आस्था

भारतीय समाज पाश्चात्य वैज्ञानिक आविष्कारों, तकनीकी ज्ञान एवं वैज्ञानिक विचारधाराओं से प्रभावित हो चुका है, फिर भी भारतीय समाज के लोग अपने हृदय में देवी-देवताओं को ऊँचा स्थान प्रदान किये हुए हैं। ईश्वरीय शक्तियोंमें उनकी आस्था प्राचीन युग के समान ही विद्यमान है। सारिणी संख्या 27 के अनुसार भारतीय ग्रामीण उत्तरदाताओं से इस सन्दर्भ में कई प्रश्न पूछे गये हैं। उत्तरदाताओं से पहला प्रश्न पूछा गया कि "क्या आप अपने व्यवसाय के स्थान या घर में किसी देवता की मूर्ति रखते हैं" ? तो इस प्रश्न का 88·0 प्रतिशत

ब्राह्मण उत्तरदाताओं ने सकारात्मक उत्तर दिया जबकि केवल 12·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाताओं ने नकारात्मक उत्तर दिया। भूमिहार उत्तरदाताओं में 69·0 प्रतिशत ने सकारात्मक तथा 31·0 प्रतिशत ने नकारात्मक उत्तर दिया। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 72·0 प्रतिशत सकारात्मक और 28·0 प्रतिशत नकारात्मक उत्तर दिया। इसी प्रकार पिछड़ी और अनुसूचित जातियों के क्रमशः 60·0 प्रतिशत और 58·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सकारात्मक तथा 40·0 प्रतिशत और 42·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने नकारात्मक उत्तर दिया। उत्तरदाताओं का वह वर्ग जिसने नकारात्मक उत्तर दिया है, उन्होंने स्वीकार किया कि मेरे पास कोई मूर्ति या तस्वीर न होने के बावजूद भी देवताओं में आस्था और विश्वास है।

इसी क्रम में उत्तरदाताओं से दूसरा प्रश्न किया गया कि "यदि आप देवताओं की मूर्ति रखते हैं, तो क्या उनकी पूजा नित्य करते हैं"? इस प्रश्न के उत्तर के तीन विकल्प दिये गये थे--(1) हाँ, (2) नहीं और 3- कभी-कभी। 32·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाताओं ने कहा कि वे नित्य पूजा करते हैं, 58·0 प्रतिशत कभी-कभी तथा 10·0 प्रतिशत कभी पूजा नहीं करते हैं। भूमिहार उत्तरदाताओं में 41·0 प्रतिशत नित्य पूजा करते हैं, 34·0 प्रतिशत कभी-कभी तथा 25·0 प्रतिशत उत्तरदाता पूजा नहीं करते हैं। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 37·0 प्रतिशत नित्य, 40·0 प्रतिशत कभी-कभी तथा 23·0 प्रतिशत कभी पूजा नहीं करते हैं। पिछड़ी जाति के केवल 19·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही नित्य पूजा करते हैं, 53·0 प्रतिशत कभी-कभी तथा 28·0 प्रतिशत कभी पूजा नहीं करते हैं। अनुसूचित जातियों में नित्य पूजा करने वालों की संख्या सर्वाधिक कम केवल 3·0 प्रतिशत है। 56·0 प्रतिशत कभी-कभी पूजा करते हैं तथा 41·0 प्रतिशत

पूजा नहीं करते हैं।

उत्तरदाताओं से तीसरा प्रश्न पूछा गया कि "क्या वर्ष के किसी विशेष दिन देवताओं की पूजा करते हैं" ? इस प्रश्न के उत्तर में सकारात्मक उत्तर देने वाले लोगों में 86·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 76·0 प्रतिशत भूमिहार, 78·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 79·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 80·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग हैं। ऐसे भी उत्तरदाता है जिनकी देवी-देवताओं में आस्था होते हुए भी कभी पूजा नहीं करते हैं। ऐसे उत्तरदाताओं में 14·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 24·0 प्रतिशत भूमिहार, 22·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 21·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियाँ तथा 20·0 प्रतिशत हरिजन है।

उत्तरदाताओं से चौथा प्रश्न किया गया कि "आपके व्यवसाय में निरन्तर प्रगति हो, इसके लिए आप किस देवता की विशेष पूजा करते हैं" ? इसके उत्तर के लिए कई देवताओं के नाम सारिणी में प्रस्तुत किये गयहैं। जिनमें लक्ष्मी-गणेश को एक कोटि में, काली-दुर्गा को भी एक कोटि में, अन्य पारिवारिक परम्परागत् देवताओं को एक कोटि में तथा ईश्वर शकर-विष्णु को एक कोटि में रखा गया है। 8·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तर-दाता अपने व्यवसाय में प्रगति के लिए लक्ष्मी-गणेश की पूजा करते हैं, 30·0 प्रतिशत हनुमान की, 6·0 प्रतिशत काली-दुर्गा की पूजा करते हैं। कोई भी ब्राह्मण उत्तरदाता अपने परम्परागत पारिवारिक देवता की पूजा नहीं करते हैं। 26·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाता अन्य स्थानीय देवताओं की पूजा करते हैं और केवल 8·0 प्रतिशत उत्तरदाता शंकर-विष्णु या ईश्वर की पूजा करते हैं। भूमिहार उत्तरदाताओं में 6·0 प्रतिशत लक्ष्मी-गणेश, 32·0 प्रतिशत हनुमान, 5·0 प्रतिशत काली-दुर्गा, 2·0 प्रतिशत पारिवारिक देवता, 10·0 प्रतिशत स्थानीय देवता तथा 26·0

सारिणी संख्या - 27 : विशिष्ट व्यवसाय से सम्बन्धित देवता और उनके प्रति अभिरुचि

जाति (संख्या सहित)	क्या अपने व्यवसाय के स्थान पर किसी देवता की मूर्ति रखते हैं ?		यदि हाँ तो क्या उनकी पूजा नित्य करते हैं ?			क्या वर्ष के किसी विशेष दिन उनकी पूजा करते हैं ?		आपके व्यवसाय में निरन्तर प्रगति हो, इसके लिए आप किस देवता की विशेष पूजा करते हैं ?					
	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	कभी-कभी	हाँ	नहीं	लक्ष्मी/ गणेष	हनुमान	काली/ दुर्गा	पारिवारिक परम्परागत देवता	अन्य कोई देवता	ईश्वर/ शंकर/ विष्णु
1- ब्राह्मण 100	88	12	32	10	58	86	14	8	30	6	-	26	8
2- भूमिहार 100	69	31	41	25	34	76	24	6	32	5	2	10	26
3- क्षत्रिय 100	72	28	37	23	40	78	22	7	28	32	18	15	-
4-पिछड़ी जाति 100 मध्य0 जातियां	60	40	19	28	53	79	21	11	12	12	24	5	25
5-अनुसूचित जाति 100	58	42	3	41	56	80	20	1	6	9	26	8	6
योग 500	347 69·4	153 30·6	132 26·4	127 25·4	241 48·2	399 79·8	101 20·2	33 6·6	108 21·6	64 12·8	70 14·0	64 12·8	56 13·0%

प्रतिशत उत्तरदाता ईश्वर-शंकर-विष्णु की पूजा करते हैं। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 7·0 प्रतिशत उत्तरदाता लक्ष्मी-गणेश, 28·0 प्रतिशत हनुमान 32·0 प्रतिशत काली-दुर्गा, 18·0 प्रतिशत परम्परागत पारिवारिक देवता 15·0 प्रतिशत स्थानीय देवताओं की पूजा करते हैं। पिछड़ी जातियों के 11·0 प्रतिशत उत्तरदाता लक्ष्मी, गणेश, 12·0 प्रतिशत हनुमान, 12·0 प्रतिशत काली-दुर्गा, 24·0 प्रतिशत परम्परागत पारिवारिक देवता, 5·0 प्रतिशत उत्तरदाता स्थानीय देवता तथा 25·0 प्रतिशत उत्तरदाता ईश्वर-शंकर-विष्णु की पूजा अपने व्यावसायिक प्रगति के लिए करते हैं। अनुसूचित जाति के केवल 1·0 प्रतिशतउत्तरदाता लक्ष्मी-गणेश की पूजा करते हैं, 6·0 प्रतिशत हनुमान, 29·0 प्रतिशत काली-दुर्गा, 26·0प्रतिशत परम्परागत पारिवारिक देवता, 8·0 प्रतिशत स्थानीय देवता 6·0 प्रतिशत ईश्वर-शंकर-विष्णु की पूजा करते हैं।

यदि हम सम्पूर्ण उत्तरदाताओं के सन्दर्भ में विचार करें तो यह स्पष्ट होता है कि 69·4 प्रतिशत उत्तरदाता अपने व्यवसाय के स्थान पर देवता की मूर्ति रखते हैं और 30·6 प्रतिशत उत्तरदाता कोई मूर्ति नहीं रखते हैं। 26·4 प्रतिशत उत्तरदाता नित्य पूजा करते हैं, 25·4 प्रतिशत पूजा नहीं करते हैं, 48·2 प्रतिशत उत्तरदाता कभी-कभी पूजा करते हैं। वर्ष के किसी विशेष दिन 79·8 प्रतिशत उत्तरदाता पूजा करते हैं और 20·2 प्रतिशत पूजा नहीं करते हैं। 6·6 प्रतिशत उत्तरदाता लक्ष्मी-गणेश की पूजा करते हैं, 21·6 प्रतिशत हनुमान की, 12·8 प्रतिशत काली-दुर्गा- की, 14·0 प्रतिशत परम्परागत पारिवारिक देवताओं की, 12·8 प्रतिशत स्थानीय देवताओं तथा 13·0 प्रतिशत उत्तरदाता ईश्वर-शंकर-विष्णु की पूजा करते हैं।

सारिणी संख्या 27 के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- ग्रामीण जनमानस देवी-देवताओं के विश्वास से अभिभूत है और वर्ष के किसी विशेष दिन देवताओं की पूजा अवश्य करता है।

2- देवताओं में अधिक लोकप्रिय हनुमान तथा काली-दुर्गा हैं। परम्परागत और स्थानीय देवता स्थानीय लोगों में लोकप्रिय हैं।

पुनर्जन्म की अवधारणा

भारतीय संस्कृति में पुनर्जन्म की अवधारणा बहुत प्राचीन है। ऐसा माना गया है कि आत्मा अमर है। यह अजन्मा, नित्य, शाश्वत और पुरातन है, शरीर के नाश होने पर भी इसका नाश नहीं होता है। जैसा कि गीता में श्री कृष्ण ने कहा है :--

न जायते म्रियते वा कदाचि -
न्नायं भूत्वा भविता व न भूय: ।
अजो नित्य: शाश्वतो यं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ।।[74]

आत्मा के अमरत्व की गीता में व्यक्त की गई, श्री कृष्ण की यह धारणा समस्त हिन्दू जनमानस में व्याप्त है। यह भी धारणा हिन्दू जनमानस में व्याप्त है कि जीवों का पुनर्जन्म होता है। यह आत्मा जो अमर है, वह एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर को धारण करता रहता है। गीता में

ही कृष्ण ने कहा है कि --

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृहणाति नरोपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ।।[75]

गीता में कही गई उपरोक्त बातों में हिन्दू समुदाय का अटल विश्वास है। गीता हिन्दू समुदाय का पौराणिक-धार्मिक, ग्रन्थ है। हिन्दू ऐसा मानते हैं कि गीता श्रीकृष्ण की वाणी से निकले हुए शब्दों की रचना है, अत: गीता पर हिन्दुओं का देवी-देवताओं के समान ही अटूट श्रद्धा है। गीता की उपरोक्त उक्तियों का हिन्दू समुदाय पर गम्भीर प्रभाव भी है। सारिणी संख्या 28 के अनुसार हिन्दू उत्तरदाताओं से एक प्रश्न किया गया कि "क्या आप मानते हैं कि मरने के बाद पुन: जन्म होता है ? इसप्रश्न के उत्तर के लिए तीन विकल्प दिये गये थे। 1-हाँ, 2-नहीं और 3-नहीं जानते। 68·0 प्रतिशत ब्राह्मण उत्तरदाताओं ने पुनर्जन्म में विश्वास व्यक्त किया, 4·0 पुनर्जन्म में विश्वास नहीं करते और 28·0 ब्राह्मण उत्तरदाता यह नहीं जानते कि पुनर्जन्म होता है या नहीं। भूमिहार उत्तरदाताओं में 73·0 प्रतिशत पुनर्जन्म को मानते हैं, 11·0 प्रतिशत नहीं मानते तथा 16·0 प्रति० नहीं जानते कि पुनर्जन्म होता है। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 74·0 प्रतिशत पुनर्जन्म को मानते हैं, 9·0 प्रतिशत नहीं मानते तथा 17·0 प्रतिशत उत्तर-दाता नहीं जानते। इसी प्रकार पिछड़ी या मध्यवर्गीय जातियों के 64·0 प्रतिशत उत्तरदाता पुनर्जन्म को मानते हैं, 19·0 प्रतिशत नहीं मानते तथा 17·0 प्रतिशत नहीं जानते कि पुनर्जन्म होता है। अनुसूचित जातियों के 74·0 प्रतिशत उत्तरदाता पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं, 6·0 प्रतिशत नहीं करते तथा 20·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं का विचार पुनर्जन्म के सम्बन्ध में अस्पष्ट है।

सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 70·6 प्रतिशत उत्तरदाता पुनर्जन्म को सत्य मानते हैं। 19·6 प्रतिशत उत्तरदाता पुनर्जन्म के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट विचार नहीं रखते तथा केवल 9·8 प्रतिशत उत्तरदाता ही ऐसे हैं जिनका विश्वास पुनर्जन्म में नहीं है।

सारिणी संख्या 28 के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि गीता में वर्णित आत्मा के अमरत्व तथा पुनर्जन्म की अवधारणा आज भी इस वैज्ञानिक युग में भारतीय जनमानस में छायी हुयी है।

सारिणी संख्या 28 में ही उत्तरदाताओं से एक दूसरा प्रश्न किया गया है, जो कर्म से सम्बन्धित है। उनसे पूछा गया कि "क्या पूर्व जन्म के कर्म इस जन्म में भोगने पड़ते हैं ? तो सकारात्मक उत्तर देने वालों में 68·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 73·0 प्रतिशत भूमिहार, 70·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 71·0 प्रतिशत मध्यवर्गीय तथा 76·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग हैं। नकारात्मक उत्तर देने वालों में 26·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 19·0 प्रतिशत भूमिहार, 18·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 25·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियां तथा 16·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाता है। कुछ थोड़े उत्तरदाता ऐसे भी हैं, जो यह नहीं जानते कि पूर्व जन्म के कर्म इस जन्म में भोगने पड़ते हैं या नहीं। ऐसे उत्तरदाताओं में 6·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 8·0 प्रतिशत भूमिहार, 12·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 4·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियां तथा 8·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग हैं। यदि कुल उत्तरदाताओं के विचारों का विश्लेषण किया जाय तो 71·6 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते हैं कि पूर्वजन्म के कर्म इस जन्म में भोगने पड़ते हैं और 20·0 प्रतिशत उत्तरदाता यह नहीं मानते कि पूर्वजन्म

सारिणी संख्या - 28 : पुनर्जन्म के प्रति अभिरूचि

जाति (संख्या सहित)		क्या आप मानते हैं कि मरने के बाद पुन: जन्म होता है ?			क्या पूर्व जन्म के कर्म इस जन्म में भोगने पड़ते हैं ?			अच्छे आचार-विचार अनुष्ठान और दान करने से अगले जन्म में सुख मिलेगा ?		
		हाँ	नहीं	नहीं जानते	हाँ	नहीं	नहीं जानते	हाँ	नहीं	नहीं जानते
1- ब्राह्मण	100	68	4	28	68	26	6	60	32	8
2- भूमिहार	100	73	11	16	73	19	8	63	32	6
3- क्षत्रिय	100	74	9	17	70	18	12	65	28	7
4- पिछड़ी जाति या मध्यवर्गीय जातियाँ	100	64	19	17	71	25	4	67	28	5
5- अनुसूचित जाति	100	74	6	20	76	16	8	71	25	4
योग	500	353	49	98	358	104	38	326	144	30
		70·6%	9·8%	19·6%	71·6%	20·8%	7·6%	65·2%	28·8%	6·0%

के कर्म इस जन्म में भोगने पड़ते हैं। कुछ थोड़े से केवल 7·6 प्रतिशत उत्तरदाता का दृष्टिकोण स्पष्ट नहीं है कि पूर्वजन्म के कर्म इस जन्म में भोगने पड़ते हैं या नहीं ।

गीता में यह उल्लेख आया है कि --

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वर: ।
गृहत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ।।[76]

अर्थात् जैसे वायु, गन्ध के स्थान से गन्ध को लेकर चलता जाता है, वैसे ही यह आत्मा भी जिस पहले शरीर को त्यागता है, उससे मनसहित इन्द्रियों को लेकर जिस शरीर को प्राप्त होता है, उसमें प्रवेश कर जाता है। गीता के इस श्लोक में अवस्थित दर्शन का भारतीय संस्कृति पर अमिट छाप है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि पूर्वजन्म के कर्म इस जन्म में भोगने पड़ते हैं। इस तथ्य को मानते हुए अधिकांश भारतीय ऐसा मानते हैं कि अच्छे आचार-विचार से अगले जन्म में सुख मिलेगा। उत्तरदाताओं से एक प्रश्न किया गया कि "क्या अच्छे आचार-विचार अनुष्ठान या दान करने से अगले जन्म में सुख मिलेगा" ? यह प्रश्न इसलिए किया गया कि यह जाना जा सके कि हिन्दू आध्यात्मिक पुस्तकों में वर्णित हिन्दू-संस्कृति की मूल धारणा कि "अच्छे कर्म का फल अगले जन्म में अच्छा मिलता है, के प्रति लोगों के विचार क्या हैं।

गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन को ज्ञान का उपदेश देते हुए कहते हैं कि --

यदा सत्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत ।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते ।।[77]

अर्थात् जब यह आत्मा सत्वगुण की वृद्धि में मृत्यु को प्राप्त होता है तो वह स्वर्ग को प्राप्त करती है। पुन: श्रीकृष्ण कहते हैं —

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते ।
तथा प्रलिनस्तमसि मूढयोनिषु जायते ।।[78]

अर्थात् रजोगुण के बढ़ने पर शरीर मृत्यु को प्राप्त होता है तो वह कर्मों की आसक्तिवाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है, तथा तमोगुण के बढ़ने पर मरे हुए शरीर की आत्मा कीट, पशु आदि मूढ़ योनियों में उत्पन्न होता है।

गीता में वर्णित इस धारणा का प्रभाव आज भी भारतीय समाज में विद्यमान है। सारिणी संख्या 28 में तीसरे प्रश्न का उत्तर लोगों ने तीन प्रकार से दिये। अच्छे आचार-विचार, अनुष्ठान और दान करने से अगले जन्म में सुख मिलेगा ? इस प्रश्न का सकारात्मक उत्तरदाताओं में 60·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 63·0 प्रतिशत भूमिहार, 65·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 67·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियाँ तथा 71·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाता हैं। 32·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 31·0 प्रतिशत भूमिहार, 28·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 28·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 25·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाता ने नकारात्मक उत्तर दिया। 8·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 6·0 प्रतिशत भूमिहार, 7·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 5·0 पिछड़ी जाति तथा 4·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं ने कोई स्पष्ट उत्तर न दे कर कहा कि हम नहीं जानते कि अच्छे कर्म का फल अगेल जन्म में अच्छा मिलेगा। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं के सन्दर्भ में सोचा जाय तो 65·2 प्रतिशत उत्तरदाताओं की धारणा है कि अच्छे कर्म से अगले जन्म में अच्छा फल या सुख मिलेगा। केवल 28·8 प्रतिशत उत्तरदाता इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर देते हैं और 6·0 प्रतिशत उत्तरदाता इस सम्बन्ध में कुछ

नहीं जानते ।

सारिणी संख्या 29 के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि "आज के इस भौतिकवादी समाज में भी यह धारणा विद्यमान है कि अच्छे कर्म का फल अगले जन्म में अच्छा मिलेगा।

सारिणी संख्या 29 में उत्तरदाताओं से एक प्रश्न किया गया कि "क्या पूर्वजों की पूजा से उनकी आत्मा को शान्तिम मिलती है" ? इस प्रश्न का सकारात्मक उत्तर देने वालों में 54•0 प्रतिशत ब्राह्मण, 60•0 प्रतिशत भूमिहार, 58•0 प्रतिशत क्षत्रिय, 54•0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 58•0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाता है। नकारात्मक उत्तर देने वालों में 14•0 प्रतिशत ब्राह्मण, 18•0 प्रतिशत भूमिहार, 18•0 प्रतिशत क्षत्रिय, 15•0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 22•0 प्रतिशत अनुसूचिज जाति के उम्मीदवार हैं। उत्तरदाताओं का एक बड़ा वर्ग ऐसा भी है जिसकी धारणा स्पष्ट नहीं है। इनमें 32•0 प्रतिशत ब्राह्मण, 22•0 प्रतिशत भूमिहार, 24•0 प्रतिशत क्षत्रिय, 26•0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 20•0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाता है।

सारिणी संख्या 29 के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- आज के भौतिकवादी भारतीय समाज में यह धारणा पुष्ट है कि पूर्वजों की पूजा से उनकी आत्मा को शान्ति मिलती है।

2- यह भी भारतीय समाज में विश्वास बना हुआ है कि पूर्वज अपनी सन्तान की रक्षा करते हैं।

सारिणी संख्या 29 : पूर्वजों के प्रति अभिरुचि

जाति (संख्या सहित)		क्या पूर्वजों की पूजा से उनकी आत्मा को शान्ति मिलती है ?			क्या पूर्वज अपनी सन्तान की रक्षा करते हैं ?	
		हाँ	नहीं	हो सकता है	हाँ	नहीं
1- ब्राह्मण	100	54	14	32	74	26
2- भूमिहार	100	60	18	22	70	30
3- क्षत्रिय	100	58	18	24	76	24
4- पिछड़ी जाति या मध्यवर्गीय जातियाँ	100	54	15	31	74	26
5- अनुसूचित जाति	100	58	22	20	80	20

भारतीय समाज में ईश्वर और किस्मत के प्रति आस्था और श्रद्धा बनी हुई है। अपनी सफलता और असफलता को आज भी लोग ईश्वर और किस्मत से जोड़कर देखने का प्रयास करते हैं। ऐसी धारणा समाज में प्रचलित है कि जिसको जैसा बनाना होता है, ईश्वर उसकी बुद्धि को वैसा ही बना देता है। सारिणी संख्या 30 में इसी तथ्य से सम्बन्धित कुछ प्रश्न लोगों से किये गये हैं। लोगों से एक प्रश्न पूछा गया कि "क्या आप यह मानते हैं कि अपने किये कुछ नहीं होता, सब किस्मत का खेल है ? इस प्रश्न का उत्तर 50·0 प्रतिशत ब्राह्मणों ने सकारात्मक तथा 50· प्रतिशत ने नकारात्मक उत्तर दिया। इसी प्रकार 58·0 प्रतिशत भूमिहार, 62·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 63·0प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 79·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं ने सकारात्मक उत्तर दिया जबकि 42·0 प्रतिशत भूमिहार, 38·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 37·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति और 29·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं ने नकारात्मक उत्तर दिया। इस प्रकार सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 62·4 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने माना कि अपने किये कुछ नहीं होता, सी किस्मत का खेल है; जबकि 37·6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने माना कि अपने ही करने से सब कुछ होता है, किस्मत नाम की कोई वस्तु नहीं है।

उत्तरदाताओं से सारिणी संख्या 30 में एक दूसरा प्रश्न पूछा गया कि "क्या यह सच है कि ईश्वर की इच्छा के बिना कुछ नहीं होता?" इस प्रश्न का सकारात्मक उत्तर 70· प्रतिशत ब्राह्मण, 82·0 प्रतिशत भूमिहार, 78·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 83·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 92·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं ने दिया। इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर 30·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 18·0 प्रतिशत भूमिहार, 22·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 17·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 8·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तर-

दाताओं ने दिया। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 81·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं का विश्वास है कि जो कुछ भी होता है वह सब ईश्वर की इच्छा से ही होता है, जबकि 19·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं की यह मान्यता है कि ईश्वर की इच्छा से कुछ नहीं होता है।

इसी क्रम में उत्तरदाताओं से तीसरा प्रश्न किया गया कि यदि सारे कार्य ईश्वर की इच्छा से ही होते हैं तो क्या बुरे कर्म भी भगवान् की इच्छा से ही होते हैं ? इस प्रश्न का सकारात्मक उत्तर देने वाले उत्तर-दाताओं में 31·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 44·0 प्रतिशत भूमिहार, 34·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 41·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 36·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग हैं। नकारात्मक उत्तरदाताओं में 69·0 प्रतिशत, ब्राह्मण, 56·0 प्रतिशत भूमिहार, 66·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 59·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 64·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के उत्तरदाता है। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में केवल 37·2 प्रतिशत लोग ऐसा मानते हैं कि बुरे कर्म भी भगवान की इच्छा से ही होते हैं,जबकि 62·8 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसा मानते हैं कि बुरे कर्म भगवान की इच्छा से नहीं होते है।

उत्तरदाताओं से एक चौथा प्रश्न किया गया कि "आप अच्छा कर्म किसे कहते हैं"? उन्हें चार अच्छे कर्म बताये गये थे --(1) मातपृ-पिता की सेवा,(2) धर्म के जानकारों की सेवा,(3) जो अपने को ठीक लगे वही करना, (4) गरीबों, असहायों की सेवा करना। उनसे यही भी कहा गया कि इन कर्मों में जो सबसे अच्छा कर्म लगे उसे क्रमशः वरीयता, 1,2,3, और 4 दीजिए। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 75·6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने माता-पिता की सेवा को सर्वोत्तम कर्म मानते हुए पहली वरीयता प्रदान की। दूसरी वरीयता

सारिणी संख्या 30 : ईश्वर के प्रति विश्वास

जाति (संख्या सहित)	अपने किये कुछ नहीं होता सब किस्मत का खेल है -		क्या यह सच है कि भगवान की इच्छा के बिना कुछ नहीं होता ?		यदि हाँ तो क्या बुरे कर्म भगवान की इच्छा से होते हैं ।		अच्छा कर्म किसे कहते हैं ? वरीयता नं0 1,2,3,4 देखें ।							
							माता-पिता की सेवा				धर्म के जानकारों की सेवा			
	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं0	1	2	3	4	1	2	3	4
1- ब्राह्मण 100	50	50	70	30	31	69	68	23	9	-	3	17	31	49
2- भूमिहार 100	58	42	82	18	44	56	73	15	2	-	2	10	42	46
3- क्षत्रिय 100	62	38	78	22	34	66	79	18	2	1	2	8	45	45
4-पिछड़ी जाति 100	63	37	83	17	41	59	83	12	4	1	3	13	44	40
5-अनुसूचित जाति 100	79	21	92	8	36	64	75	20	5	-	-	15	48	37
योग 500	312	188	405	95	186	314	378	88	22	2	10	63	210	217
	62·4	37·6	81·0	19·0	37·2	62·8	75·6	17·6	4·4	·4	2·0	12·6	42·0	43·4%

क्रमशः .....

जाति(संख्या सहित)		अच्छा कर्म किसे कहते हैं ? वरीयता नं0 1,2,3,4 दें							
		जो अपने को ठीक लगे वही करना				गरीबों, असहायों की सेवा करना			
		1	2	3	4	1	2	3	4
1- ब्राह्मण	100	8	14	29	49	15	46	30	9
2- भूमिहार	100	7	15	31	47	8	59	23	10
3- क्षत्रिय	100	10	16	29	45	18	52	25	5
4- पिछड़ी जाति	100	5	17	31	47	9	58	20	13
5- अनुसूचित जाति	100	-	-	44	56	21	60	9	10
योग	500	30	72	164	244	71	275	107	47
		6·0	14·4	32·8	48·8	14·2	55·0	21·4	9·4%

55·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने गरीबों, असहायों की सेवा को प्रदान किया। तीसरी वरीयता जो अपने को ठीक लगे वही करने को तथा चौथी वरीयता क्रम पर 43·4 प्रतिशत लोगों ने रखा।

सारिणी संख्या 30 के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं --

1- वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति के बावजूद भी भारतीय समाज में भाग्यवादी दृष्टिकोण और ईश्वर के प्रति आस्था बनी हुई है।

2- भारतीय लोग बुरे कर्मों के होने में ईश्वर की इच्छा स्वीकार नहीं करते अपितु बुरे कर्मों के लिए अपने को ही दोषी मानते हैं।

3- माता-पिता की सेवा तथा गरीबों, असहायों की सेवा करना भारतीय लोग अपने लिए सर्वोत्तम असहायों की सेवा करना कर्म करना मानते हैं।

4- धर्म के जानकारों जैसे-- पण्डित, मुल्ला-मौलवी तथा पादरियों पर से लोगों का विश्वास कम हुआ है।

REFERENCES

1. See Masson Ollott : The Caste System of India, American Sociological Review (Dec. 1944), p. 655;
   - J.H. Hutton : Caste in India (London : Oxford University press, 1946), pp. 122-24 ;
   - Abbe J. Dubbois : Hindu Manners, Customs and Ceremonies (Oxford Clarendon Press, 1897).
2. G.S. Ghurye : Caste and Class in India (Bombay : Popular Book Depot, 1950), pp. 15-17.
3. Kingsley Davis : The Population of India and Pakistan (Princeton University Press, 1951), p. 168.
4. Noel Gist : Caste differentials in South India, American Sociological review April 1954, pp. 130-134.
   - Edwin D. Driver - Caste and occupational structure in Central India, Social Forces (Oct. 1962), pp. 26-31.
5. M.N. Srinivas : Religion and society Among the Coorgs of South India (Oxford : Clarendon Press, 1952), pp. 24-31 .
6. Andre Beteille : Caste, Class and Power : Changing Pattern of Stratification in a Tanjore Village (University of California Press, 1965), p. 45.
7. सारिणी नं० १.
8. H.A. Gould : "Lucknow Rickshawallas" The Social organisation of an occupational category; International Journal of comparative sociology (March,1965)pp. 45-46.

9. सारिणी नं० 9.

10. F.C. Wang has ruled out this thesis in his paper "Western Impact on Social Mobility in China" American Sociological review (Dec. 1960). According to the content of this paper, in traditional China, there were more opportunities for social Mobility and under Western influence China had for less social Mobility than before.

\- Ping Ti Ho, 'Aspects of Social Mobility in China, 1368-1911. Comparative Study in Society and History (June 1959) pp. 330-359 and Francis L.K. HSU, 'Social Mobility in China, 'American Sociological Review, 14 (Nov. 1949). They also uphold the same view, and their papers thoroughly analyse the nature of social mobility in china.

11. Noel Gist - op.cit.

12. E.D.Driver, op.cit.

13. H.A. Gould : op.cit.

14. Richard D. Lambert : Factory workers and New Factory Population in Poona, Journal of Asian Studies (Nov. 1958), pp. 31-42.

15. Ralph H. Turner : "Sponsored and contest Mobility and the Social system" American Sociological Review (Dec. 1960).

16. See- Lawrence Thomas - The Occupational Structure and Education , (New York : Prentice Hall, 1956) pp. 343-363. He has reached this conclusion that non-manual skills are increasingly acquired through formal education.

- S.M. Lipset and R. Bendix- Social Mobility in Industrial Society, (University of California press, 1959), pp. 91-101.

17. S.M. Dubey - Social Mobility among the professions (Popular Parakashan Bombay, 1975), pp. 84.

18. William H. Swell, A.O. Haller and Murray Strauss : Social Status and Educational and occupational Aspirations : American-Sociological review (June 1957), p. 73.

19. A.O. Hallor and C.E. Butter Worth : "Peer influence on levels of occupational and Educational Aspirations; Social forces (May, 1960).

20. Muzafar Sherif and Caroline W. Sherif - An outline of social Psychology (1956), pp. 280-331.

21. Harry Bielen : The pattern of Responsibility and its Relation to Social class mobility; Journal of Social Psychology, 69 (1956), pp. 33-38.

22. Joseph A. Kohl- "Educational and occupational Aspirations of common man boy" Harvard Educational Review, 28 (1953), pp. 186-203.

23. See Clifford Kirkpatrik and Melwin De Fleur : Influence of professors on the flow of Talent to the academic profession, social forces (May-1960).

24. Majes D. Tarvar also in his paper "occupational Migration Differentials". Social forces, Vol. 43 No. 2 (Dec. 1964) pp. 231-242 Supports this view and condludes : (a) That the professionak, technical and Kindred workers have significantly higher mobility rates than certain specified major occupations. For the total 1949 So intercountry movers professionals were more mobile than all other occupations.

(b) in term of inter-state migration, professionals had significantly higher migration rates than other major occupational groups.

25. S.M. Lipset : Social Mobility and urbanisation; Rural sociology (Sept. 1955) pp. 220-228.

26. See G.Boalt : Social Mobility in Stockholm : A pilot investigation; in Transactions of the Second world Conress of sociology, vol. II (London) International.

27. Chales M. Grigg and Russel Middleton : Community of orientation and Occupational Aspirations of Ninth Grade Students; Social Forces, (May 1960).

28. Cyrus M. Johnson and Alan C. Kerckhoff : Family norms, Social position and the value of change, social forces, vol 43, No. 2 (Dec. 1964), pp. 149-154.

SOCIOLOGY LIBRARY NEHU : SHILLONG

29. Origin in French. The Present quotation is from Warren S. Thompson, Population problems, 4th edition (New York, 1953), p. 43.

30. S.M. Dubey- Social Mobility among the professions, Popular Prakashan Bombay 1975, p. 90.

31. H. Yuan Tien : The Social Mobility Fertility Hypothesis Reconsidered- An Empirial Study; American Sociological Review (April 1961).

32. Robert P. Stuckert- Occupational Mobility and Family Relationship, Social forces (March, 1963), pp. 301Rs307.

33. See- Morris Rosenberg and others : occupations and v values (Free Press, 1957) - Eli Gingberg : occupational choice (Columbia University Press), 1951).

34. See- Richard L. Simpson and Ida Harper Simpson : Values, Personal influence and occupational choice, Social Forces (Dec. 1960).

35. Cyrus M. Johnson and Alan C. Kerckhoff- Adolescent Parent Relationship and Mobility Aspirations; Social Forces, Vol. 43, No. 2 (Dec. 1964), p. 149-54.

36. Lamer T. Empey - Social class and occupational Aspirations A Comparision of Absolute and Relative Measurements. American Sociological Review (April 1956), pp. 703-709.

37. ऋग्वेद: पुरुष सूक्त ।

38. S.M. Lipset and R. Bendix : Social Mobility in Industrial Society" University of California Press, 1959, pp. 14-16.

39. National opinion Research Centre : Jobs and Occupations, A Popular Evaluation, Opinion News, 9 (194), pp. 3-13.

40. Richard Centres : The Psychology of Social Classes; (Princeton University Press), 1949, p. 86.

41. C.A. Messer and J.R. Hall, "The Social Grading of Occupations, in D.V. Glass, (ed), Social Mobility in Britain (London : Routledge and Kegan Paul, 1954, p. 29-50.

Kaare Svalastaga- Prestige, class and Mobility (Copenhague : Cyldendal 1959; pp. 43-131; Albert J. Reiss Jr., Otis Dubey Duncan, Paul K. Hatt & Social North, Occupations and Social Status (New York: Free Press 1961).

42. Robert W. Hodge, Paul M. Siegal & Petter H. Rossi: 'Occupational Prestige in united states, 1925-63; American Journal of Sociology (Nov. 1964), pp. 286-302.

43. R. Bendix- Higher Civili servants in American Society (University of California Press, 1949), pp. 22,32;

- Thomas Bottomore-Higher Civil servants in France; intransaction of the second world congress of sociology, vol. II, pp. 143-153.

- H.E. Dale- The Higher civil servants of Great Britain (Oxford University Press, 1941) pp. 22,62;
- R.K. Kelsall- Higher Civil servants in Britain from 1870 to present day (London : Routledge and Kegan Paul, 1955).

44. S.M. Lipset and R. Bendix : ibid.

45. Willima S. Bennett Jr. and Noel P. Gist : Class and Family influence on Student Aspirations : Social forces (Dec. 1964), pp. 167-173.

46. S.M. Dubey- Social Mobility among the Professions; Popular Prakashan, Bombay (1975), pp. 112-113.

47. S.M. Lipset, R. Bendix, and F. Theodore Malm : Job Plans and the entry into the Labour Market; Social Forces 33 (1955), p. 229

- L.G. Reynolds, The Strudture of Labour Markets ((New York : Harmer and Brothers, 1951), p. 108.

48. Cyrus M. Johnson and Alan C. KercHoff : Social Forces, Vol. 43, No. 2 (Dec. 1964); Family Norms, Social Position and the value of change; pp. 149-159.

49. Natalic Rogoff : Recent Trends in Urban Occupational Mobility : in cities and society, Efited by Paul K. Hatt, Albert J. Reiss Jr. (Free Press, Fourth Printing 1963), pp. 440.

50. S.M. Miller- Ibid, p. 5.

51. Geoffrey Thomas : The social survey, Labour Mobility in Great Britain : (1945-49), 1950.

52. Kunio Odaka : Occupation and Stratification (Tokyo-1958).

53. P.E. Davidson and H. Devey Anderson : Occupational Mobility in and American community (Stanford Univesssity Press 1937). S.M. Lipset, R. Bendix-Social Mobility in Industrial society.(University of Calofirnia Press, 1959).

54. Lundberg - Social Reasearch, pp. 80-81.

55. G.D.H. Cole - The Studies in class structure,pp.78-79.

56. Nels Anderson - Our Industrial urban civilization (Asia Publishing House, 1964), pp. 1-34.

57. Richard T. Curtis -"Note on Occupational Mobility and Union Membership in Detroit", Social Forces, Oct. 1959.

58. Peter Blau- "Occupational Mobility and Inter-personal Relationship" American Sociological review, 21 (1956), pp. 290-95.

59. Richard F. Curtis- Occupatio al (Mobility and Church Participation, Social Forces (May 1960).

60. Philip M. Hauser : "Some Political influences of urbanisation." in cities and societies, Editors Reiss and Hatt (Free Press, Fourth printing, 1962), pp. 527-36.

61. Samuel C. Patterson : 'Inter-generational occupational Mobility and Legislative voting behaviour, 'social forces (Oct. 1964), p. 90.

62. Herbert H. Saluger- Social Status and Political behaviour, The American Journal of Sociology (Sept. 1954), p. 103-113.

63. Pitirim A. Sorokin- Social and cultural Mobility, Free Press of Glencoe Illinois, p. 509.

64. Sutherland, E. - Criminology, p. 128-133; Thomas, W. & E. Ananiecki- The Polish Peasant, Vol. V, p. 167; Mckenzie, R- The Neighbourhood.

65. Dewey John - Human Nature and conduct, p. 130.

66. रामधारी सिंह दिनकर- संस्कृति के चार अध्याय, पृ0 119

67. देखिये - महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य लिखित- "जैन दर्शन" नामक ग्रन्थ की भूमिका में डॉ0 मंगलदेव शास्त्री का मत ।

68. देखिये- आचार्य नरेन्द्रदेव लिखित "बौद्ध-दर्शन"

69. MacDonell's- Vedic Mythology, Fausboll's- Indian Mythology, Nivedita & Coomaraswamy's- Myths of Hindu and Buddists.

70. Vide Avalon's- Hymns to the Goddess and other works on Tantras.

71. Vide Stevenson's- Heart of Zainism.

72. Vide Getty's- Gods of Northern Buddism.

73. Vide Max-Muller's- Ramkrishna : His Life and Teachings.

74. गीता, अध्याय-2, श्लोक 20

75. गीता अध्याय-2, श्लोक 22

76. गीता, अध्याय-15, श्लोक 8

77 & 78. गीता अध्याय-14, श्लोक 14 एवं 15.

चतुर्थ अध्याय

व्यावसायिक गतिशीलता पर प्राप्त तथ्य एवं विभिन्न प्रकार के तथ्यों में सह-सम्बन्ध

व्यावसायिक गतिशीलता पर प्राप्त तथ्य एवं विभिन्न प्रकार के तथ्यों में सह-सम्बन्ध

आय और शिक्षा

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत में शिक्षा का प्रसार पर्याप्त मात्रा में हुआ है। शिक्षा के प्रसार के फलस्वरूप व्यक्ति की आकांक्षाओं में वृद्धि हुई है। परम्परागत भारतीय समाज में शिक्षा का प्रसार जनसामान्य तक हुआ है। आज गाँव-गाँव में स्कूल-कालेजों का जाल सा बिछा हुआ है, और प्रत्येक जाति तथा धर्म के लोगों ने शिक्षा को अपनाया है। शिक्षा के प्रसार के साथ ही साथ लोगों की चेतना में विकास हुआ है, उनके जीवन स्तर में सुधार हुआ है और देश की भी प्रगति हुई है। परन्तु आज भी शिक्षा अधिकांश मात्रा में अभी शहरों तक ही सीमित रह गई है। विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, इण्टरमीडिएट कालेज, तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षण संस्थान अभी ग्रामीण अंचलों से कोसों दूर हैं। भारत की सम्पूर्ण आबादी का लगभग 70·0 प्रतिशत लोग आज भी गाँवों में ही निवास करते हैं और इनके पास तक आज भी उच्च शिक्षा पहुँच नहीं पाई है। गाँवों में अधिकांश केवल प्राइमरी और माध्यमिक स्तर की शिक्षण संस्थाएं ही उपलब्ध हो सकी है और वे भी इतनी अपर्याप्त मात्रा में हैं कि प्रत्येक गाँव इनसे लाभान्वित नहीं हो सका है। फलत: भारत में शिक्षा के प्रसार के बावजूद भी अभी लगभग 35·0 प्रतिशत लोग ही शिक्षित हो सके हैं, जबकि उच्च शिक्षा केवल 5·7 प्रतिशत लोग ही प्राप्त कर सके हैं। अन्य शेष लोगों में अधिकांश प्राइमरी स्तर तक ही शिक्षित हो सके हैं। शिक्षित व्यक्तियों में उच्च जातियों के लोगों की संख्या अधिक है तथा निम्न जाति के लोगों में अशिक्षितों की संख्या

अधिक है। इसका प्रमुख कारण भारत में निम्न जातियों की निर्धनता है। ग्रामीण समुदाय में निम्न जातियों के लोग अपनी जिविका चलाने हेतु मजदूरी या पशु-पालन करते हैं। मजदूरीऔर पशु-पालन से केवल इतनी ही आय हो पाती है कि जैसे-तैसे वे अपना गुजर-बसर कर सकें। उनके छोटे-छोटे बच्चे भी आजीविका अर्जित करने में अपने माता-पिता को सहयोग प्रदान करते हैं। गरीबी और दरिद्रता के वातावरण में पलते हुए उनका ध्यान शिक्षा की ओर जा ही नहीं पाता है। यदि थोड़ी बहुत जागरूकता शिक्षा के प्रति उत्पन्न भी हुई तो वह गांव स्तर तक ही सीमित होकर रह जाती है। गांव में रहने वाले उच्च जातियों के सम्पन्न लोगों में थोड़ा बहुत शिक्षा के प्रति झुकाव हुआ है। ऊंची जातियों के ऐसे लोग खाते-पीते परिवार के लोग हैं और उनमें से कुछ की आय इतनी पर्याप्त है कि ये अपने बच्चों को गांव से बाहर नगरों तक भेजकर उन्हें उच्च शिक्षा प्रदान कर सके हैं। गांवों में रहने वाले किसान स्वयं ही अनाज उगाते हैं, पर उनको पेट भरने तक को पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक भोजन उपलब्ध नहीं हो पाता है। उन्हें न पर्याप्त भोजन, न कपड़े और न अन्य प्राथमिक आवश्यकता की वस्तुएं मिल पाती हैं। "निर्धनता वह दशा है जिसमें एक व्यक्ति अपर्याप्त आय के कारण अपने जीवन स्तर को उतना ऊंचा नहीं रख पाता जिससे उसकी शारीरिक व मानसिक कुशलता बनी रह सके और वह तथा उसके आश्रित समाज के स्तर के अनुसार, जिसका कि वह सदस्य है, कार्य करने में असमर्थ रहते हैं।"[1] गांवों में कृषि की दशा अत्यन्त पिछड़ी हुई है। इसी प्रकार पशु-पालन की दशा भी अत्यन्त पिछड़ी हुई है, ग्रामोद्योग अविकसित हैं। भूमिहीन कृषि मजदूरों की समस्या और भी अधिक जटिल है। किसानों पर सरकारी एवं गैर-सरकारी ऋण का भार भी उनके लिए अभिशाप बना हुआ है। ये सभी समस्याएं भारतीय ग्रामीण समुदायों की विशेषताएं हैं, और गांव की जनता इन्हीं समस्याओं के बीच पल रही है।

इससे एक ओर उनकी आर्थिक नींव कमजोर होती जा रही है, और दूसरी ओर उनकी सामाजिक समस्याएँ बढ़ रही हैं। गाँवों में गरीबी और उच्च शिक्षण संस्थाओं के अभाव के कारण अधिकांश जनता या तो अशिक्षित है या अल्पशिक्षित है। बहुत थोड़े से लोग हैं, जो उच्च शिक्षा प्राप्त कर सके हैं। यह तथ्य इस अध्ययन के लिए एकत्रित आँकड़ों द्वारा प्रमाणित होता है। सारिणी संख्या 4 उत्तरदाताओं के परिवार के आय का विवरण दिया गया है और सारिणी संख्या 5 में उत्तरदाताओं के परिवार की शैक्षणिक उपलब्धियों का विवरण दिया गया है। इन दोनों तालिकाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि जिन उत्तरदाताओं के परिवार की आय अधिक है, उनकी शिक्षा भी अधिक है, और जिनकी आय कम है, उनकी या तो शिक्षा कम है या वे अशिक्षित हैं। सारिणी संख्या 4 से स्पष्ट है कि प्रतिमाह आय का मध्यमान ब्राह्मणों का 507 रु0, भूमिहार 580 रु0, क्षत्रिय 618 रु0, पिछड़ी जातियाँ, 325 रु0 और अनुसूचित जातियाँ 255 रु0 प्रतिमाह हैं। इसी क्रम में यदि हम उनकी शैक्षणिक उपलब्धियों के सम्बन्ध में प्राप्त आँकड़ों का अध्ययन करते हैं तो सारिणी संख्या 5से स्पष्ट है कि उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में ब्राह्मण अशिक्षितों की संख्या 62·0 प्रतिशत, भूमिहार 88·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 78·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति 95·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति में 100·0 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित हैं। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में अशिक्षितों की संख्या ब्राह्मण जाति में 28·0 प्रतिशत, भूमिहार 32·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 31·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति में 70·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति में 93·0 प्रतिशत है। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में अशिक्षितों की संख्या ब्राह्मण जाति में 4·0 प्रतिशत, भूमिहार 4·0 प्रतिशत क्षत्रिय 6·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति 31·0 तथा अनुसूचित जाति में 59·0 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित है।

यदि हम इन विभिन्न जाति के उत्तरदाताओं की शैक्षणिक उपलब्धियों का अध्ययन करते हैं, तो सारिणी संख्या 5 से ही स्पष्ट होता है कि प्राइमरी से लेकर उच्च शिक्षा प्राप्त करने वालों में उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में 38·0 प्रतिशत, 12·0 प्रतिशत भूमिहार, 22·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 5·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति के लोग शिक्षित हैं, जबकि अनुसूचित जातियों में कोई भी शिक्षित नहीं है। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में ब्राह्मण 72·0 प्रतिशत, भूमिहार 88·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 69·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति में 30·0 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति में केवल 7·0 शिक्षित हैं। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में शिक्षितों की संख्या ब्राह्मण जाति में 96·0 प्रतिशत, भूमिहार 96·0 प्रतिशत, क्षत्रिय 94·0 प्रतिशत, पिछड़ी जाति 69·0 प्रतिशत, अनुसूचित जाति में केवल 41·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही शिक्षित हैं। इन आँकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि जिस जाति के उत्तरदाताओं की पारिवारिक आय अधिक है, उनकी शिक्षा भी अधिक है, और जिन उत्तरदाताओं के परिवार की आय कम है, उनकी शिक्षा भी कम है। इसी प्रकार जिनकी शिक्षा अधिक है, उनके परिवार की पारिवारिक आय भी अधिक है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आय और शिक्षा का आपस में पारस्परिक रूप से धनात्मक सह-सम्बन्ध है।

शिक्षा और व्यावसायिक गतिशीलता

भारतवर्ष में विश्वविद्यालयीय शिक्षा आधुनिकता और पाश्चात्य मूल्यों का पर्याय है। विश्वविद्यालयीय शिक्षा ने भारत में शिक्षित मध्यवर्ग को उत्पन्न किया है, जो विभिन्न प्रकार के पेशों जैसे-- कानून, शिक्षा, चिकित्सा, व्यापार, नौकरी इत्यादि विभिन्न प्रकार के पेशों में लगे हुए हैं। शिक्षा के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण ही विभिन्न प्रकार के पेशों और उनको अपनाने की सम्भावनाओं के अवसर भी बढ़े हैं।[2] हाल ही में कुछ समाजशास्त्रियों द्वारा उपनगरों में

सम्पन्न अनेक शोध कार्यों से यह स्पष्ट हुआ है कि लोगों की औपचारिक शिक्षा और उनकी व्यावसायिक उपलब्धियों के बीच धनात्मक सह-सम्बन्ध पाये गये हैं। हाल ही में एक सर्वेक्षण नोएल जिस्ट[3] द्वारा मैसूर और बंगलोर शहरों में सम्पन्न किया गया है, जिसमें उन्होंने पाया है कि औपचारिक शिक्षा के कारण विभिन्न जातियों के परम्परागत पेशों में परिवर्तन हुआ है। उन्होंने बताया है कि उन शहरों में ब्राह्मण जाति अन्य जातियों की अपेक्षा अधिक शिक्षित है, और इसी जाति में सबसे अधिक व्यावसायिक परिवर्तन हुआ है। एक दूसरा अध्ययन इडविन डी0 ड्राइवर द्वारा नागपुर जिले के लोगों के सन्दर्भ में सम्पन्न किया गया है। इस अध्ययन में ड्राइवर द्वारा यह उद्घाटित किया गया है कि मध्य भारत में ग्रामीण और उपनगरीय जातियों के लोगों में अन्त:पीढ़ी गतिशीलता (इन्टर जेनरेशनल मोबिलिटी) बहुधा पाई जाती है। लेकिन यह व्यावसायिक गतिशीलता केवल समान स्तर के व्यवसायों तक ही सीमित है और व्यवसाय का यह परिवर्तन खासतौर से आधुनिक शिक्षा के कारण उत्पन्न हुआ है।[4]

आर्थिक विकास के लिए औद्योगीकरण आवश्यक है। औद्योगिक विकास इसी कारणवश सभी विकसित तथा विकासशील देशों में आवश्यक माना जा रहा है। सभी समाज जैसे-जैसे आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को अपना रहे हैं, वैसे-वैसे उन समाजों में व्यावसायिक गतिशीलता भी बढ़ रही है। पहले भारत जैसे कृषि प्रधान देश में व्यावसायिक गतिशीलता की बात नहीं की जाती थी, लेकिन अब कृषि प्रधान देश भी व्यावसायिक गतिशीलता के कारण उत्पन्न सामाजिक समस्याओं तथा परिवर्तनों से अपने को अधिक सम्बन्धित मान रहे हैं। व्यावसायिक गतिशीलता, सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा देती है, जिसके कारण समाज के सभी पहलू प्रभावित होते हैं।

व्यावसायिक गतिशीलता उन समाजों में अधिक देखने को मिलती है, जो अभी हालही में औद्योगीकरण को अपनाये हैं, लेकिन उन समाजों में जो पूरी तरह औद्योगीकृत हैं, व्यावसायिक तथा सामाजिक गतिशीलता कम देखने को मिलती हैं। रास ने लिखा है कि जैसे-जैसे औद्योगिक समाज परिपक्व होता जाता है, वैसे-वैसे सामाजिक गतिशीलता कम होती जाती है। परिपक्व औद्योगीकरण के कारण "व्यापारी अभिजात वर्ग" में पैठ की गुंजाईश कम होती जाती है। इसे इस बात से सिद्ध किया जा सकता है कि योरोप में जहाँ औद्योगिक क्रान्ति पहले हुई, अमेरिका की तुलना में व्यावसायिक तथा सामाजिक गतिशीलता अब कम है।[5] भारतवर्ष में व्यावसायिक गतिशीलता का कारण अधिकांश लोगों का कृषि पर आश्रित होना है। जैसे-जैसे कृषि करने वाले लोगों की संख्या बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे भूमि का विभाजन स्वाभाविक होता जाता है। लोगों की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति गिरने लगती है, परिणामस्वरूप लोग अन्य व्यवसायों को अपनाने की ओर उन्मुख होते हैं। यही स्थिति खास-तौर से भारत में व्यावसायिक गतिशीलता को बढ़ावा देती है।[6]

शिक्षा के प्रसार का प्रत्यक्ष प्रभाव व्यावसायिक गतिशीलता पर पड़ता है। सामान्य शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा दोनों के प्रसार के कारण सामाजिक गतिशीलता देखने को मिल रही है। नौकरियों में विभिन्न पदों का सीधा सम्बन्ध शिक्षा के स्तर से है। प्रौद्योगिकीय ज्ञान में वृद्धि, प्राविधिक शिक्षा के माध्यम से किया जा रहा है। जैसे-जैसे शिक्षा का प्रसार होता जाता है, वैसे-वैसे व्यावसायिक गतिशीलता की मात्रा बढ़ती जाती है। व्यावसायिक शिक्षा जो श्रमिकों को दी जाती है, उसके परिणामस्वरूप उनकी गतिशीलता में वृद्धि होती है। जैसे- अकुशल श्रमिक का कुशल श्रमिक के रूप में कार्यरत होना आदि। प्रौढ़ शिक्षा का भी प्रभाव व्यावसायिक गतिशीलता पर पड़ता है। विकासशील समाजों में शिक्षा के प्रसार पर विशेष ध्यान इसीलिए दिया जा रहा है, ताकि

व्यावसायिक गतिशीलता को बढ़ाया जा सके। जैसे-जैसे ज्ञान तथा कुशलता में वृद्धि हो रही है, वैसे-वैसे व्यावसायिक गतिशीलता भी बढ़ती जा रही है। उच्च पदों की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति अपने ज्ञान में वृद्धि करे तथा लोगों में उच्च पद पाने की इच्छा जागृत हो। जैसे-जैसे लोगों में अर्जित गुणों की मात्रा बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे लोगों की व्यावसायिक एवं सामाजिक गतिशीलता भी बढ़ती जाती है। ये अर्जित गुण जीवन के किसी भी पहलू से सम्बन्धित हो सकते हैं। परम्परागत देश भारत में भी अब अर्जित गुणों का महत्व स्थापित हो गया है। अर्जित प्रस्थिति ऊँची हो, इसके लिए अर्जित गुणों में विकास आवश्यक है। अब बिना जाति-पाँति या वर्ण भेद का ख्याल किये सभी लोग उन सभी कार्यों को करने को तैयार हैं जो लाभदायक हैं। आज हम देख रहे हैं कि गाँवों में घर-घर में प्रसव कार्य करवाले में केवल हरिजन जाति की स्त्रियाँ ही संलग्न रहती थीं और यह पेशा उनका मौलिक पेशा माना जाता था, लेकिन आज इसके विपरीत उच्च जातियों की शिक्षित लड़कियाँ विशिष्ट शिक्षा प्राप्त करके आधुनिक चिकित्सालयों में प्रसव कार्य करवाने हेतु मिडवाइफ के रूप में नियुक्त हैं। सामाजिक गतिशीलता के लिए केवल शिक्षा ही एकमात्र निर्धारक तत्व नहीं है, बल्कि उस शैक्षणिक व्यवस्था में सन्निहित सामाजिक मूल्य और प्रशिक्षण का प्रसार अधिक प्रभावशाली कारक है।[7]

एस०एम० दूबे ने भी लगभग इसी तथ्य को अपने अध्ययन में प्रमाणित किया है। उन्होंने बताया है कि "ज्यों-ज्यों शैक्षणिक गतिशीलता में वृद्धि होती है, वैसे ही वैसे विशेषीकरण और व्यावसायिकरण में वृद्धि होती है।[8]

हमारे अध्ययन के द्वारा भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। सारिणी संख्या 5 से स्पष्ट है कि ब्राह्मण जाति के उत्तरदाताओं में उनके बाबा की

पीढ़ी में 38•0 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं, पिता की पीढ़ी में 72•0 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 96•0 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं। इसी प्रकार भूमिहार जाति के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में 12•0 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं, पिता की पीढ़ी में 68•0 प्रतिशत तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 96•0 प्रतिशत लोग शिक्षित है। क्षत्रिय जाति के उत्तरदाताओं की बाबा की पीढ़ी में केवल 22•0 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं, पिता की पीढ़ी में 69•0 प्रतिशत तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 94•0 प्रतिशत शिक्षित हैं। पिछड़ी जाति के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में 5•0 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं, पिता की पीढ़ी में 30•0 प्रतिशत तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 69•0 प्रतिशत शिक्षित लोग हैं, जबकि अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में कोई शिक्षित नहीं है, पिता की पीढ़ी में केवल 7•0 प्रतिशत तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 41•0 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं। इस सारिणी के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि क्रमानुसार पीढ़ी दर पीढ़ी विभिन्न जाति के उत्तरदाताओं की साक्षरता में वृद्धि हो रही है और अशिक्षा पीढ़ी दर पीढ़ी कम हो रही है।

बढ़ती हुई शिक्षा का प्रभाव व्यावसायिक गतिशीलता को किस सीमा तक प्रभावित करती है, इस तथ्य को ज्ञात करने हेतु सारिणी संख्या 10 और सारिणी संख्या 11 के आँकड़ों का विश्लेषण आवश्यक है। सारिणी संख्या 10 में उत्तरदाताओं के बाबा और उनके पिता के व्यवसाय का विवरण है तथा तालिका 11 में उत्तरदाताओं के पिता तथा स्वयं उत्तरदाताओं के व्यवसाय का विवरण है। इन दोनों सारिणियों के आधार पर यह स्पष्ट है कि ब्राह्मण जाति के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में 24•0 प्रतिशत लोग पुरोहित कर्म तथा शेष 74•0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य करवाते थे। केवल 2•0 प्रतिशत

लोग ही नौकरी करते थे। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में पुरोहित कर्म करने वाले लोग केवल 16·0 प्रतिशत थे तथा कृषि करवाने वाले लोग 60·0 प्रतिशत थे और नौकरी करने वाले लोग 24·0 प्रतिशत थे। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में पुरोहित कर्म करने वाले केवल 6·0 प्रतिशत लोग हैं, कृषि कार्य करवाने वाले केवल 20·0 प्रतिशत हैं। दुकानदारी करने वाले 6·0 प्रतिशत तथा नौकरी करने वाले 38·0 प्रतिशत लोग हैं और 30·0 प्रतिशत उत्तरदाता-शिक्षा ग्रहण करने वाले हैं। इस सारिणी से यह स्पष्ट है कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी ब्राह्मण जाति के लोग अपने परम्परागत पेशा पुरोहित कर्म एवं कृषि को छोड़कर अन्य व्यवसायों की ओर उन्मुख हुए हैं।

भूमिहार जाति के उत्तर-दाताओं के बाबा की पीढ़ी में 95·0 प्रतिशत लोग अपने परम्परागत पेशे खेती से जुड़े हुए थे, केवल 4·0 प्रतिशत लोग नौकरी में थे। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में 84·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य में संलग्न थे और 16·0 प्रतिशत लोग व्यापार और नौकरियों में संलग्न थे। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में केवल 27·0 प्रतिशत लोग ही खेती में हैं। शेष लोग नौकरी, व्यापार और शिक्षा से सम्बन्धित हैं। इस जाति के लोगों में भी जैसे-जैसे साक्षरता में वृद्धि हुई है, वैसे ही वैसे उनमें व्यावसायिक परिवर्तन में वृद्धि हुई है।

क्षत्रिय जाति के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में 16·0 प्रतिशत लोग फौज की नौकरी में तथा 76·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य में संलग्न थे, तथा अन्य नौकरियों में 8·0 प्रतिशत लोग थे। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में 14·0 प्रतिशत लोग पुलिस और फौज की नौकरी में थे तथा 58·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य में संलग्न थे, 26·0 प्रतिशत लोग नौकरी

तथा 2·0 प्रतिशत लोग व्यापार में संलग्न थे। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में केवल 24·0 प्रतिशत लोग ही कृषि कार्य में संलग्न थे। अन्य 23·0 प्रतिशत लोग पुलिस या फौज में, 36·0 प्रतिशत अन्य नौकरियों में तथा 2·0 प्रतिशत लोग व्यापार में भी संलग्न थे।

पिछड़ी जातियों के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में 36·0 प्रतिशत लोग अपने-अपने जातिगत पेशों जैसे-- पशुपालन, लोहारी, कुम्हारी, नाईगिरी इत्यादि में संलग्न थे तथा 24·0 प्रतिशत लोग कृषि मजदूर थे। 22·0 प्रतिशत लोग खेती करवाते थे, 12·0 प्रतिशत लोग व्यापार तथा 6·0 लोग नौकरियों में संलग्न थे। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में 26·0 प्रतिशत लोग अपने जातिगत पेशों में थे, 24·0 प्रतिशत कृषि मजदूर थे, 29·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य करवाते थे तथा 6·0 लोग व्यापार और दुकानदारी तथा 15·0 प्रतिशत लोग नौकरियां करते थे। उत्तरदाताओं की पीढ़ी में 15·0 प्रतिशत लोग ही अपने जातिगत पेशों में संलग्न थे और केवल 12·0 प्रतिशत लोग ही कृषि मजदूर थे, 16·0 प्रतिशत लोग कृषि कार्य में संलग्न थे। 33·0 प्रतिशत लोग विभिन्न नौकरियों तथा 9·0 प्रतिशत दुकानदारी और व्यापार में संलग्न थे। 15·0 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षा ग्रहण करने वाले हैं।

अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में 29·0 प्रतिशत लोग अपने परम्परागत जातिगत पेशों में संलग्न थे, 56·0 प्रतिशत कृषि मजदूर थे, 5·0 प्रतिशत लोग खेती करवाते थे। उत्तरदाताओं के पिता की पीढ़ी में केवल 25·0 प्रतिशत लोग ही अपने जातिगत पेशों में संलग्न थे, 69·0 प्रतिशत लोग कृषि मजदूर थे, 6·0 प्रतिशत लोग खेती करवाते थे। लेकिन उत्तरदाताओं की पीढ़ी में केवल 6·0 प्रतिशत लोग ही अपने

जातिगत पेशों में संलग्न हैं, 52·0 प्रतिशत लोग कृषि मजदूर हैं, 6·0 प्रतिशत लोग खेती करते हैं। 7·0 प्रतिशत उत्तरदाता नौकरियों में संलग्न हैं और 29·0 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

इन उपर्युक्त सारिणी 4 एवं 5 से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि गांवों में रहने वाली विभिन्न जातियों के लोगों के अपने परम्परागत पारिवारिक पेशों में पर्याप्त विभिन्नता उत्पन्न हो गई है। इन उपर्युक्त सारिणियों के विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते हैं कि अन्त:पीढ़ी शैक्षणिक गतिशीलता ने व्यावसायिक गतिशीलता की दर को बढ़ा दिया है।[9] इस प्रकार यह स्पष्ट है कि शिक्षा और व्यावसायिक गतिशीलता के बीच आपस में पारस्परिक रूप से धनात्मक सह सम्बन्ध है।

व्यावसायिक गतिशीलता और जजमानी व्यवस्था

उपर्युक्त तालिकाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो चुका है कि भारतीय ग्रामीण जीवन में व्यावसायिक गतिशीलता की दर शैक्षणिक गतिशीलता के साथ ही साथ बढ़ रही है। परन्तु भारतीय ग्रामीण परिवेश में व्यावसायिक गतिशीलता को जाति व्यवस्था बहुत हद तक प्रभावित करती है। जाति प्रथा के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति हर तरह के कार्यों को नहीं कर सकता। उसका अपना एक निश्चित पेशा होता है, अत: उसे अपनी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दूसरों से सेवाएँ प्राप्त करनी पड़ती हैं। इस व्यवस्था के अन्तर्गत जो सेवा प्रदान करता है, वह प्रजा कहलाता है और यह प्रजा जिसको अपनी सेवाएँ प्रदान करता है, वह उसका जजमान कहलाता है, जैसे-- ब्राह्मण पुरोहित का कार्य करता है, धोबी कपड़ा धोता है या नाई बाल बनाता है। इस ब्राह्मण, धोबी या नाइयों के कुछ परिवार बंधे होते हैं, जिन परिवारों को वे पुश्तों से अपनी सेवाएं प्रदान करते चले आ रहे हैं। ये सेवाएं प्रयत्क्ष और पारिवारिक स्तर पर होती हैं इसलिए

कोई व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से किसी प्रकार भी अपना नाता नहीं तोड़ सकता है। इसका कारण यह है कि एक व्यक्ति या परिवार विवाह, भोजन, सुरक्षा व संस्कार आदि विषयों के लिए अपनी जाति पर निर्भर रहता है, परन्तु अधिकतर दैनिक व आर्थिक कार्यों व सेवाओं के लिए उसे अन्य जातियों के लोगों पर या अपनी प्रजाओं पर निर्भर रहना पड़ता है। इस प्रकार जजमानी व्यवस्था हिन्दू समाज की ऊँच-नीच सभी जातियों को एक सूत्र में बांधने की एक व्यवस्था बन जाती है। प्रजा और जजमान के बीच सम्बन्ध बहुत कुछ स्थाई होते हैं। जजमानी व्यवस्था के अन्तर्गत सेवाएँ चूंकि प्रत्यक्ष और पारिवारिक स्तर पर होती है, इस कारण कोई भी व्यक्ति अन्य जातियों से किसी भी प्रकार से नाता नहीं तोड़ सकता है। "एक किसान के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह अपने परिवार को सेवा प्रदान करने वाले एक परिवार को हटा सके और उसके स्थान पर किसी दूसरे परिवार की सेवाओं को ग्रहण कर सके।"[10] प्रजाओं की सेवाओं के बदले उन्हें पारितोषण देने का एक परम्परागत तरीका जजमानी व्यवस्था के अन्तर्गत होता है। जिन गांवों का अध्ययन किया गया है, उनमें जजमानी व्यवस्था के अन्तर्गत नगद मजदूरी देने का रिवाज नहीं हैं, और न ही जजमान और प्रजा के बीच पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में पाया जाने वाला मालिक और कर्मचारी जैसा सम्बन्ध होता है। जजमानी व्यवस्था के अन्तर्गत पारितोषण नगद में नहीं अपितु किस्म (काइन्डस्) में दिया जाता है। जजमान से प्रजा को अनाज आदि खाने-पीने की चीजें उनकी सेवोओं के बदले में मिलती रहती है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर विशेषकर तीज- त्यौहारों में या शादी, जनेऊ, मुण्डल आदि के अवसरों पर कपड़े और कुछ नगद बक्शीश या न्यौछावर आदि मिलते रहेते हैं। श्री लेविस के अनुसार जजमानी व्यवस्था के अन्तर्गत अलग-अलग प्रकार की

प्रजाओं को उनकी सेवाओं के बदले में भिन्न-भिन्न मात्रा में अनाज तथा अन्य वस्तुएँ दी जाती रही हैं, जैसा कि आगे दी गई सारिणी से स्पष्ट है --

क्रमसंख्या प्रजा	सेवा का स्वरूप	सेवा के बदले मिले हुए अधिकार
1- बढ़ई और लोहार	कृषि के औजारों की मरम्मत	साल के अन्त में एक हल के पीछे एक मन अनाज और हर बुआई के मौसम में ढाई सेर अनाज ।
2- कुम्हार	मिट्टी के बर्तन देना और विवाह आदि में हल्के काम करना।	बर्तनों के मूल्य के बराबर अनाज, पुत्र-पुत्री के विवाह के अवसर पर स्थिति और सामर्थ्य के अनुसार अनाज।
3- हज्जाम या नाई	बाल बनाना, दाढ़ी बनाना और शादी-विवाह के अवसर पर परम्परागत सेवाएँ करना।	हर फसल कटाई के अवसर पर जितना भी अनाज वह स्वयं उठा सके, उतना अनाज, विवाह आदि के अवसर पर अतिरिक्त अनाज।
4- धोबी	कपड़े धोना ।	उपरोक्त के समान ।
5- भंगी	उपले बनाना, कूड़े हटाना।	दिन में दो बार खाना, हर एक कटाई पर जितना भी अनाज वह उठा सके, उतना अनाज और विवाह आदि के अवसर पर अतिरिक्त अनाज।
6- चमार	खेती के काम में सहायता करना, बेगार या मरे हुए जानवरों को हटाना।	उपज का कुछ भाग और मरे हुए जानवरों की खाल ।
7- ब्राह्मण या	पूजा-पाठ, पुरोहित कर्म इत्यादि	विभिन्न अवसरों पर यथा शक्ति अनाज, नगदी व कपड़ा इत्यादि।

इस सारिणी से स्पष्ट है कि जजमानी कार्य के बदले अनाज आदि ही देने का प्रचलन है, और यह अनाज प्रजा के गुजर-बसर के लिए पर्याप्त होता है, इसलिए रूपयों-पैसों की अपेक्षा सेवाओं के बदले में अनाज लेना ही वे अधिक पसन्द करते हैं।

परम्परागत भारतीय दृष्टिकोण का यह दृढ़ मत था कि एक व्यक्ति का पेशा स्वयं उसके जन्म से ही निर्धारित है, जिसे उसका स्वधर्म कहा जाता था। इस प्रकार की व्यवस्था में व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति जन्मजात होती थी, लेकिन व्यवहार में एक व्यक्ति पूर्णरूपेण अपने व्यवसाय को परिवर्तित करने के लिए स्वतन्त्र है, जहाँ तक उसकी धार्मिक प्रस्थिति में परिवर्तन न हो।[11] उदाहरणस्वरूप एक ब्राह्मण अपनी धार्मिक क्रिया-कलापों के अतिरिक्त कृषि कार्य को अपनाने के लिए स्वतन्त्र था। इसी प्रकार एक अछूत कृषि कार्य अपनाने के लिए स्वतन्त्र था, लेकिन वह पुरोहित कर्म नहीं कर सकता था और ब्राह्मण अपने को कभी चमड़े के कार्य में नहीं लगा सकता था।

यहाँ पर जाति व्यवस्था और व्यावसायिक गतिशीलता के सम्बन्ध में परस्पर दो विरोधी दृष्टिकोण हैं --

1- जाति व्यवस्था केवल प्रत्येक व्यक्ति के लिए केवल एक निश्चित पेशा ही निर्धारित नहीं करती, अपितु उस व्यवसाय के परिवर्तन पर कुछ निश्चित प्रतिबन्ध भी लगा देती है।[12]

2- दूसरी तरफ इसके विपरीत विचारधारा यह है कि जाति व्यवस्था की प्रकृति हमेशा गत्यात्मक रही है, जैसाकि घुरिये ने मध्य युग के दौरान और उसके बाद कुछ विशिष्ट जातियों का विभिन्न पेशों में भाग लेने

की घटना को प्रदर्शित किया है।[13] 1931 की जनगणना रिपोर्ट भी इस तथ्य को प्रमाणित करती है कि कार्य करने वाले केवल आधे पुरुष ही अपने परम्परागत जातिगत व्यवसायों में लगे हुए थे।[14]

हाल ही में दो सर्वेक्षण नोएल जिस्ट और ई0डी0 ड्राइवर द्वारा सम्पन्न किये गये हैं जिसमें यह प्रमाणित हुआ है कि प्रत्येक जाति के 40·0 प्रतिशत से अधिक लोग अपने पिता के परम्परागत व्यवसायों से अलग हुए हैं। खासतौर से ब्राह्मण जाति में ऐसे लोग 82·7 प्रतिशत हैं। इडविन डी0 ड्राइवर ने जाति व्यवस्था से व्यवसाय के सम्बन्ध को मध्य भारत के नागपुर जिले के उपनगर और ग्रामीण परिवेश में प्रदर्शित किया है। यह अध्ययन इस दृष्टिकोण को प्रमाणित करता है कि जाति व्यवस्था, व्यावसायिक परिवर्तन में अवरोध उत्पन्न नहीं करती है।[15] एम0एन0 श्रीनिवास ने विचार किया है कि प्रत्येक जाति परम्परागत रूप से अलग-अलग पेशों से सम्बन्धित होती है,यद्यपि की गांवों में कृषि एक सामान्य पेशा था, जिसको सभी जातियों के लोग जैसे-- ब्राह्मण या अछूत कोई भी कर सकता था। उन्होंने स्पष्ट किया है कि जाति व्यवस्था, कठोर व्यवस्था नहीं है, हमेशा जाति व्यवस्था में जाति व्यवस्था की मध्यम स्तर की जातियों में गतिशीलता सम्भव रही है।[16] बेटली ने स्पष्ट किया है कि परम्परागत सामाजिक व्यवस्था में किसी विशिष्ट जाति में जन्म न केवल किसी व्यक्ति की धार्मिक प्रस्थिति को निर्धारित करता है, बल्कि बहुत हद तक उसकी आर्थिक और राजनैतिक प्रस्थिति को भी निश्चित करती है।[17]

उपरोक्त कथनों की पुष्टि इस अध्ययन के लिए उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर भी किया जा सकता है। सारिणी संख्या 10 और 11 से

स्पष्ट है कि ब्राह्मण जाति के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में अपने जातिगत पेशे को करने वालों की संख्या 24·0 प्रतिशत, पिता की पीढ़ी में 16·0 प्रतिशत तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में केवल 6·0 प्रतिशत ब्राह्मण पुरोहित कर्म करने वाले हैं। भूमिहार जाति जिनका परम्परागत व्यवसाय कृषि है, सारिणी से स्पष्ट है कि भूमिहार उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में कृषि करने वाले 74·0 प्रतिशत लोग हैं और पिता की पीढ़ी में 60·0 प्रतिशत तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में कृषि करने वाले केवल 20·0 प्रतिशत लोग ही हैं। इसी प्रकार क्षत्रिय जाति में जातिगत पेशे के रूप में पुलिस या फौज की नौकरी करने वालों में उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में केवल 16·0 प्रतिशत लोग हैं और कृषि में 76·0 प्रतिशत पिता की पीढ़ी में पुलिस या फौज में 14·0 प्रतिशत तथा कृषि में 58·0 प्रतिशत तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में पुलिस या फौज में प्रतिशत एवं कृषि में केवल 24·0 प्रतिशत लोग ही हैं। पिछड़ी जाति के उत्तरदाताओं के बाबा की पीढ़ी में जातिगत पेशा करने वाले केवल 36·0 प्रतिशत लोग हैं और पिता की पीढ़ी में 26·0 प्रतिशत तथा उत्तरदाताओं की पीढ़ी में जातिगत पेशा करने वाले केवल 15·0 प्रतिशत लोग ही हैं। इसी प्रकार अनुसूचित जातियों में परम्परागत पेशा करने वाले उत्तरदाताओं में बाबा की पीढ़ी में 39·0 प्रतिशत तथा पिता की पीढ़ी में केवल 25·0 प्रतिशत लोग हैं, जबकि उत्तरदाताओं की पीढ़ी में जातिगत पेशा करने वाले केवल 6·0 प्रतिशत लोग ही हैं।

अन्तर्जातीय सम्बन्धों पर आधारित जजमानी व्यवस्था का आज वह रूप नहीं रहा जो पहले था। यह धीमें-धीमें क्षीण होती गई है और निरन्तर हो रही है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् जब देश में औद्योगीकरण

का विकास प्रारम्भ हुआ, इसमें विघटन और तेजी से हुआ। परस्पर सेवा सहायता सम्बन्ध शिथिल हो गये हैं। अनेक सेवक जातियों ने अपने जजमान छोड़ भी दिये हैं। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि परम्परागत भारतीय ग्रामीण समाज में जैसे-जैसे व्यावसायिक गतिशीलता में वृद्धि हो रही है, वैसे ही वैसे जजमानी व्यवस्था टूट रही है। यहाँ पर व्यावसायिक गतिशीलता और जजमानी व्यवस्था के बीच पारस्परिक रूप से ऋणात्मक सहसम्बन्ध है।

व्यावसायिक गतिशीलता और सामाजिक प्रस्थिति

परम्परागत भारतीय ग्रामीण जीवन में जैसे-जैसे व्यावसायिक गतिशीलता में वृद्धि हो रही है, वैसे ही वैसे जजमानी व्यवस्था टूट रही है और सामाजिक प्रस्थिति के निर्धारक तत्व भी वैसे ही वैसे बदल रहे हैं। परम्परागत भारतीय सामाजिक स्तरीकरण जाति व्यवस्था पर आधारित थी, जहाँ किसी व्यक्ति के सामाजिक स्थिति का निर्धारण उसके जन्म और परिवार के आधार पर होता था। आधुनिक शिक्षा, औद्योगिक विकास, व्यावसायिक गतिशीलता तथा राजनैतिक जागरूकता और स्वतन्त्रता की धारणा ने सामाजिक स्तरीकरण के आधार में व्यापक परिवर्तन किया है। अनेकों समाज-शास्त्रीय अध्ययनों द्वारा यह प्रमाणित हुआ है कि व्यावसायिक आकांक्षा और व्यावसायिक गतिशीलता की दर सामाजिक मूल्यों से प्रभावित होते हैं। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि आधुनिक व्यावसायिक गतिशीलता औद्योगिक, सामाजिक और आर्थिक संगठनों का एक अंशमात्र है, जिसका जनतान्त्रिक और सामाजिक मूल्यों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। रोजेनबर्ग

और उनके सहयोगियों ने कालेज के विद्यार्थियों द्वारा व्यवसाय चुनने के कारणों को उनके सामाजिक मूल्यों से सम्बन्धित किया है।[18] उन्होंने अपने तथ्यों से स्पष्ट किया है कि वे लोग जो विभिन्न प्रकार के पेशों में प्रवेश करते हैं, उनका मौलिक रूप से जीवन के तथ्य के रूप में कार्य के प्रति दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न होते हैं। यह स्पष्टत: विदित है कि सामाजिक मूल्य व्यावसायिक चयन को प्रभावित करते हैं, और वे ही व्यावसायिक गतिशीलता के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं, लेकिन व्यावसायिक गतिशीलता भी स्वयं समाज में नये सामाजिक मूल्यों को उत्पन्न करती है। इस प्रकार सामाजिक मूल्य और व्यावसायिक गतिशीलता एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। इस सम्बन्ध में रिचार्ड एल०सिम्पसन और हार्पर सिम्पसन ने अपने अध्ययनों में स्पष्ट किया है कि सामाजिक मूल्य, व्यक्तिगत प्रभाव और व्यावसायिक चयन इन तीनों का परस्परिक रूप से अन्त:सम्बन्ध है और कोई एक तथ्य अन्य दोनों तथ्यों के साथ अन्त:क्रिया करता है।[19]

नये सामाजिक मूल्यों की गहराई और भारतीय समाज के विभिन्न जातियों के लोग किसी सीमा तक जन्मजात सामाजिक प्रस्थिति (एस्क्राइब्ड सोसल स्टेटस) से अर्जित सामाजिक प्रस्थिति (एचीव्ड सोशल स्टेटस) की ओर उन्मुख हुए हैं, यह जानने के लिए साक्षात्कार अनुसूची में कई प्रश्नों का समावेश किया गया है। सारिणी संख्या 19 में उनकी सामाजिक प्रस्थिति के निर्धारण के सन्दर्भ में प्रश्न पूछा गया कि "आपकी सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारण निम्न में से कौन सा तथ्य करता है ? इस प्रश्न के उत्तर के लिए चार विकल्प दिये गये थे, 1- जन्म, 2-सम्पत्ति, 3- व्यवसाय और 4- शिक्षा। ब्राह्मण उत्तरदाताओं में से 32·0 प्रतिशत ने जन्म, 15·0 प्रतिशत ने सम्पत्ति, 13·0 प्रतिशत ने व्यवसाय तथा 40·0 प्रतिशत ने शिक्षा को सामाजिक प्रस्थिति का

निर्धारक कारक बताया। इसी प्रकार भूमिहार उत्तरदाताओं में से 31·0 प्रतिशत ने जन्म, 19·0 प्रतिशत ने सम्पत्ति, 17·0 प्रतिशत ने व्यवसाय तथा 43·0 प्रतिशत लोगों ने शिक्षा। क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 19·0 प्रतिशत जन्म, 12·0 प्रतिशत ने सम्पत्ति, 15·0 प्रतिशत ने व्यवसाय तथा 54·0 प्रतिशत ने शिक्षा को सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारक तत्व माना। पिछड़ी जाति के उत्तरदाताओं में 23·0 प्रतिशत ने जन्म, 11·0 प्रतिशत ने सम्पत्ति, 18·0 प्रतिशत ने व्यवसाय तथा 48·0 प्रतिशत ने शिक्षा तथा अनुसूचित जाति के उत्तरदाताओं में से 25·0 प्रतिशत ने जन्म, 20·0 प्रतिशत ने सम्पत्ति, 17·0 प्रतिशत ने व्यवसाय तथा 38·0 प्रतिशत ने शिक्षा को सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारक तत्व माना। इस प्रकार हम देखते हैं कि सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से केवल 24·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही ऐसे हैं जो अपनी सामाजिक प्रस्थिति के निर्धारण के लिए जन्म को उत्तरदायी कारक मानते हैं, बाकी अन्य 76·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सम्पत्ति, व्यवसाय और शिक्षा को सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारक तत्व माना है। इस प्रकार इस सारणी से यह स्पष्ट हो रहा है कि हमारा समाज जन्मजात प्रस्थिति से अर्जित प्रस्थिति की ओर बढ़ रहा है। उपर्युक्त तथ्य स्पष्ट रूप से यह प्रदर्शित करते हैं कि सामाजिक प्रस्थिति के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन हुआ है। जन्म के विपरीत अधिकांश उत्तरदाताओं ने यह मत व्यक्त किया है कि उनके समुदाय में सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारण व्यवसाय और शिक्षा के द्वारा होता है। यह स्पष्ट रूप से अर्जित सामाजिक प्रस्थिति के विकास का धनात्मक संकेत है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि व्यावसायिक गतिशीलता और सामाजिक प्रस्थिति के बीच आपस में घनिष्ठ सह-सम्बन्ध है। जैसे-जैसे समाज में व्यावसायिक गतिशीलता की वृद्धि होती है, वैसे ही वैसे सामाजिक प्रस्थिति

की धारणा में भी परिवर्तन होता है। अत: व्यावसायिक गतिशीलता और अर्जित सामाजिक प्रस्थिति के बीच धनात्मक सह-सम्बन्ध है।

अर्जित प्रस्थिति और सामाजिक वर्ग

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट हो चुका है कि परम्परागत भारतीय समाज जन्मजात प्रस्थिति से अर्जित प्रस्थिति की ओर बढ़ रहा है। अब व्यक्ति की प्रस्थिति का निर्धारण उसके जाति और परिवार से न होकर, उसके द्वारा अर्जित गुणों के आधार पर हो रहा है। इसके पीछे भारतीय समाज का औद्योगीकरण, नगरीकरण और परिवहन के साधनों का विकास महत्वपूर्ण कारक है, जिसने लोगों को गांव से शहर तथा एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय में परिवर्तन का अवसर प्रदान किया है। औद्योगीकरण और नगरीकरण ने संसार के विभिन्न भागों में जनसंख्या संरचना में परिवर्तन किया है, और नये-नये कार्यों की परिस्थितियों को उत्पन्न किया है, नये-नये व्यवसाय, पेशे और कार्यों को करने का अवसर प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध हुआ है, जिसने समाज को विभिन्न वर्गों और संस्तरणों में विभक्त कर दिया है। इसी प्रकार परिवहन व्यवस्था की क्रान्ति में ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों को शहरों और व्यावसायिक केन्द्रों के निकट लाकर खड़ा कर दिया है। निम्न व्यवसायों से उच्च व्यवसायों में प्रवर्तन (ट्रान्सफर) तथा एक स्थान से दूसरे स्थानपर लोगों के प्रवासन (माइग्रेशन) ने प्रस्थिति के आदर्श और प्रतिष्ठा के प्रतीकों को नये रूपों में स्थापित किया है। आधुनिक युग में कारखानों, व्यावसायिक केन्द्रों, नौकरशाही और नगरों के विकास ने नये प्रकार के व्यक्तित्व और प्रतिभा की मांग ने परम्परागत भारतीय समाज को व्यावसायिक गतिशीलता और अर्जित प्रस्थिति की ओर समाज को उन्मुख किया है। समाज में लोगों को खुली प्रतियोगिताओं और व्यक्तिगत उपलब्धियों के लिए समान अवसर उपलब्ध हुआ है

और यही कारण है कि व्यावसायिक गतिशीलता की वृद्धि ने पूँजीवाद के उत्थान, जनतान्त्रिक शक्ति संरचना और औद्योगिक केन्द्रों के प्रसार के साथ ही साथ समाज में नये संस्तरण और नये समाजिक वर्गों का निर्माण किया है। वर्ग की अवधारणा को मार्क्स ने लोकप्रिय बनाया जिन्होंने इस अस्पष्ट शब्द को व्यवस्थित अर्थ प्रदान किया। मार्क्स से बहुत पहले अरस्तू ने समाज को तीन वर्गों क्रमशः धनी, गरीब और मध्यम में विभक्त किया था। उन्होंने विचार किया था कि मध्यमवर्ग ही सब वर्गों से अच्छा है, क्योंकि पहले वाले दोनों वर्ग जीवन के तर्कसंगत सिद्धान्त का अनुसरण करने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। उनकी राय में सर्वोत्तम राजनैतिक समुदाय का निर्माण मध्यम वर्ग के नागरिकों द्वारा होता है और वे राज्य जिनमें मध्यवर्गीय लोगों की संख्या अधिक होती है, वह अधिक स्थाई होता है। जब पूँजीवाद अपने विकास की प्रारम्भिक अवस्था में था, कार्लमार्क्स ने पहली बार सामाजिक परिवर्तन का विश्लेषण प्रस्तुत किया था और मानव इतिहास के विभिन्न युगों का उद्धरण प्रस्तुत करते हुए विभिन्न सामाजिक वर्गों के उत्थान और पतन का विवरण प्रस्तुत किया था, उन्होंने बताया है कि मालिक और दास, सामन्त और अकुलीन भूस्वामी और कृषि मजदूर, मालिक और मजदूर स्थाई रूप से कभी खुले तौर पर कभी छिपे तौर पर एक दूसरे के विरुद्ध अन्तहीन समय तक लड़ते रहते हैं, जिसकी परिणति या तो समाज के क्रान्तिकारी पुनर्निर्माण में होती है या लड़ते-लड़ते विरोधी वर्गों के विनाश में होती है।[20] मार्क्स ने मानव इतिहास को प्राचीन साम्यवादी, सामन्तवादी और पूँजीवादी समाज में विभक्त किया है। इन प्रत्येक युगों की उत्पादन प्रक्रिया और शासक तथा शासित वर्ग भिन्न-भिन्न होते हैं। सर्वहारा क्रान्ति के बाद साम्यवाद का युग अस्तित्व में आयेगा, जिसमें उत्पादन साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्व, वर्ग विरोध तथा वर्ग विभिन्नता समाप्त हो जाएगी। जैसाकि

मार्क्स ने विवरण प्रस्तुत किया है कि, लोगों का कोई समूह किसी उत्पादन व्यवस्था में "एक समान कार्य, करता है और "एक समान जीवन के ढंग" को जीता है, उस समूह को एक सामाजिक वर्ग कहते हैं। मार्क्स की वर्ग- संरचना की व्याख्या का आधार आर्थिक है, क्योंकि जीवित रहने के कलए अन्य वस्तुओं के अलावा मनुष्य को भोजन, पानी और वस्त्र की आवश्यकता पड़ती है। अत: पहला ऐतिहासिक कार्य मनुष्य की इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऐसे उत्पादन साधनों की आवश्यकता है, जो मनुष्य जीवन को सन्तुष्टि प्रदान कर सके।[21] अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य को कार्य करना पड़ता है। बिना कार्य किये मनुष्य का अस्तित्व सुरक्षित नहीं रह सकता है। कार्य करने की प्रक्रिया में मनुष्य को स्वयं को अभिव्यक्त करना पड़ता है। वह प्रकृति पर नियन्त्रण करता है। एक दूसरे के सम्पर्क में आकर सहयोग और संघर्ष करना पड़ता है और इस प्रकार वह इतिहास का निर्माण करता है। विभिन्न वर्गों के बीच सम्बन्ध का आधार संघर्ष है, जैसाकि मार्क्स ने स्पष्ट किया है कि "सभी समाजों का, यहाँ तक कि वर्तमान समाजों का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास रहा है। वर्ग विरोध की बिन्दु पर जोर डालते हुए मार्क्स ने व्याख्या प्रस्तुत किया है कि अलग-अलग व्यक्ति वर्ग का निर्माण केवल तभी तक करते हैं, जब तक कोई सामान्य संघर्ष चलता रहता है अन्यथा विरोधी पक्ष के रूप में वे एक दूसरे के साथ प्रतियोगियों की भाँति रहते हैं।[22] पूँजीवाद के आगमन से पहले समाज की वर्गीय संरचना तितर-बितर थी यद्यपि कि मानव समाज के इतिहास में हमेशा ही परस्पर दो विरोधी वर्ग विद्यमान रहे हैं, लेकिन पूँजीवादी युग ने वर्गीय संरचना को आसान बना दिया और पूँजीपति वर्ग तथा मजदूर वर्ग के बीच स्पष्ट विभाजन रेखा खींच दी। किसी विशिष्ट व्यवसाय में शासक वर्ग का पतन उस व्यवस्था में अन्तर्निहित तीन शक्तियों-- विरोधाभास, वर्ग-संघर्ष और क्रान्ति, के कारण

होगा। इसके परिणामस्वरूप एक तरफ उस पहली व्यवस्था तथा उसके शासक वर्ग का पतन होगा और दूसरी तरफ उत्पादन के तरीकों में परिवर्तन होगा, जिसके परिणामस्वरूप नई व्यवस्था और नये शासक वर्ग का उदय होगा। ऐतिहासिक विकास की इस प्रक्रिया में सामन्तवाद का पतन पूँजीवाद के द्वारा हुआ और पूँजीवाद का पतन सर्वहारा क्रान्ति द्वारा होगा। इस प्रकार मार्क्स ने मानव इतिहास के विभिन्न युगों में सामाजिक वर्गों की उर्ध्व और अध: गतिशीलता की व्याख्या की है।

भारत में व्यावसायिक गतिशीलता के फलस्वरूप अर्जित प्रस्थिति के कारण ही समाज में भिन्न-भिन्न वर्गों का निर्माण हुआ है। ये वर्ग शुद्ध रूप से व्यवसायों पर आधारित वर्ग होते हैं। जब कोई व्यक्ति किसी व्यवसाय विशेष को करता है तो वह व्यक्ति अपने को उस वर्ग विशेष का सदस्य मानता है। इन वर्गों की सदस्यता जन्म से हनहीं अपितु अर्जित गुणों के कारण प्राप्त होती है, इसमें जाति विशेष का कोई महत्व नहीं होता, जैसे-- व्यापारी वर्ग, वकील वर्ग, अध्यापक वर्ग, लिपिक वर्ग, अभियन्ता वर्ग, कृषक वर्ग, मजदूर वर्ग इत्यादि। जिस व्यक्ति ने जैसा गुण अर्जित किया है, उसे वैसे ही वर्ग की सदस्यता प्राप्त होती है, यही कारण है कि आज भारतीय ग्रामीण परिवेश में भी जहाँ सामाजिक प्रस्थिति और सामाजिक वर्ग जातिगत आधार पर बनते हैं, वहाँ भी लोगों में वर्गीय चेतना का कुछ हद तक विकास हुआ है। सारिणी 4 से स्पष्ट है कि ब्राह्मण जाति के कुल उत्तरदाताओं में से केवल 34·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही अपने को उच्च वर्ग का प्रतिनिधि महसूस करते है, जबकि 48·0 प्रतिशत उच्च-मध्य और 18·0 प्रतिशत निम्न-मध्य वर्ग का सदस्य महसूस करते हैं। यद्यपि कि जातिगत आधार पर ब्राह्मण उच्च वर्ग का ही सदस्य होता है। इसी प्रकार भूमिहार भी जातिगत आधार पर उच्च वर्ग

का ही सदस्य होता है, परन्तु केवल 34·0 प्रतिशत भूमिहार उत्तरदाताओं ने ही अपने को उच्च वर्ग का सदस्य बताया है, जबकि 29·0 प्रतिशत उच्च-मध्य तथा 31·0 प्रतिशत मध्य निम्नवर्ग का अपने को सदस्य मानते हैं। भूमिहार उत्तरदाताओं में 6·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपने को निम्नवर्ग का सदस्य बताया है। जातिगत संरचना में क्षत्रिय जाति, ब्राह्मण और भूमिहार से निचले वर्ग की जाति मानी जाती है, फिर भी क्षत्रिय उत्तरदाताओं में 36·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपने को उच्चवर्ग का सदस्य बताया है और 4·0 प्रतिशत निम्न वर्ग का। पिछड़ी जातियाँ, जातिगत संरचना में मध्यवर्गीय स्थिति को प्राप्त है, परन्तु इनमें भी 4·0 प्रतिशत लोगों ने अपने को उच्चवर्ग का सदस्य बताया है और 16·0 प्रतिशत निम्न वर्ग का। क्षत्रिय और पिछड़ी जाति के शेष अन्य उत्तरदाता अपने को मध्य वर्ग का सदस्य मानते हैं। अनुसूचित जातियाँ जिन्हें परम्परागत भारतीय समाज में अछूत और निम्न वर्ग की स्थिति प्राप्त हैं, इनमें भी 3·0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने को उच्च-मध्य और 29·0 प्रतिशत मध्य निम्न वर्ग का सदस्य महसूस करते हैं। केवल 68·0 प्रतिशत उत्तरदाता ही अपने को निम्न वर्ग का सदस्य मानते हैं।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण जीवन में भी जातिगत संरचना से अलग हटकर वर्गीय संरचना का विकास धीरे-धीरे हो रहा है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो रहा है कि जैसे-जैसे समाज में अर्जित प्रस्थिति को मान्यता मिल रही है, वैसे ही वैसे जातिगत संरचना से अलग हटकर सामाजिक वर्गों का निर्माण हो रहा है। इस प्रकार सामाजिक प्रस्थिति और सामाजिक वर्ग के बीच आपस में धनात्मक सह-सम्बन्ध की स्थापना हो रही है।

कृषि और गरीबी

भारत में गरीबी की अवधारणा उतनी ही पुरानी है, जितना भारतीय समाज का इतिहास।[23] भारत में मुगल शासनकाल तथा अंग्रेजी शासन काल में गरीबी का स्वरूप और अधिक विकराल हो गया। भारत एक कृषि प्रधान देश है।भारत की कुल जनसंख्या की लगभग 70·0 प्रतिशत आबादी आज भी अपनी जीविकोपार्जन के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर ही निर्भर है। सन् 1961 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या के 60·0 प्रतिशत लोग अपनी जीविका के लिए प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर आश्रित थे। यदि अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर आश्रित लोगों को सम्मिलित कर लिया जाय तो यह संख्या 75·0 प्रतिशत से भी अधिक हो जाएगी।[24] यदि कृषि कार्य में लगे हुए लोगों के आधार पर हम विवेचना करें तो भी हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कृषि भारत का सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्यवसाय है। कृषि में लगे हुए पुरुष श्रमिकों की संख्या आज भी बहुत अधिक है, जो स्पष्ट करती है कि भारत एक विकासशील कृषि प्रधान देश है। निम्न सारिणी कृषि कार्य में विभिन्न समयों में लगे हुए लोगों की स्थिति का प्रदर्शन करती है --

जनसंख्या वर्ष	कृषि कार्य में लगे हुए कृषि श्रमिक (प्रतिशत)	
1911	71·1	विभिन्न वर्षों की
1921	71·9	भारतीय जनगणना
1931	71·2	रिपोर्ट से उद्धृत
1941	72·8	

क्रमशः ····

1951	68·9
1961	66·8
1971	62·9
1981	61·8

उपर्युक्त सारिणी से यह सिद्ध होता है कि भारतवासियों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। समाजों के वर्गीकरण में मार्क्स ने भारत को एशियाई समाज के अन्तर्गत रखा था। एशियाई समाज वह है जिसकी कृषि प्रधान आर्थिक व्यवस्था उत्पादन की छोटी-छोटी इकाइयों पर आधारित है।

उपर्युक्त तथ्यों की पुष्टि हमारे आँकड़ों से भी होती है। सारिणी 9 में उत्तरदाताओं से एक प्रश्न किया गया कि "क्या आपके परिवार का कोई सदस्य आज भी अपने परम्परागत पेशे में लगा हुआ है?" इस प्रश्न के उत्तरदाताओं द्वारा दिये गये उत्तरों को देखने से ज्ञात होता है कि 82·0 प्रतिशत ब्राह्मण 98·0 प्रतिशत भूमिहार, 81·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 89·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियाँ तथा 90·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग किसी न किसी प्रकार से कृषि से सम्बन्धित व्यवसायों में ही लगे हुए हैं। आज भी प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर ग्रामीण निवासियों में सारिणी 9 के अनुसार ही 74·0 ब्राह्मण, 89·0 प्रतिशत भूमिहार, 76·0 प्रतिशत क्षत्रिय, 25·0 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 5·0 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग कृषि को ही व्यवसाय के रूप में अपनाये हुए हैं। सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से केवल 2·0 प्रतिशत ब्राह्मण, 2·0 प्रतिशत भूमिहार, 9·0 प्रतिशत क्षत्रिय तथा 11·0 प्रतिशत पिछड़ी जातियों के लोग ही केवल सफेद पोश कार्यों जैसे-- नौकरी और

दुकानदारी इत्यादि को अपने मुख्य व्यवसाय के रूप में अपनाये हुए हैं। उपर्युक्त आकड़े यह सिद्ध करते हैं कि ग्रामीण निवासियों का आज भी मुख्य पेशा कृषि तथा उससे सम्बन्धित व्यवसाय जैसे-- पशुपालन, कुम्हारी, लोहारी कृषि मजदूर इत्यादि।

भारत एक विकासशील देश है और विकासशील देश साधारणतया कृषि प्रधान होते हैं। भारत वर्ष की 1971 की जनगणना की विज्ञप्ति में कहा गया है कि यहाँ 80·0 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में रहती है, जो कृषि कार्यो के द्वारा अपना भरण-पोषण करती है। विकासशील होने के कारण भारत में व्यावसायिक ढाँचा असन्तुलित है। भारतीय जनगणना रिपोर्ट से ज्ञात होता कि 1951 और 1961 के बीच कृषि कार्यों में लगे लोगों की संख्या में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुआ है, जबकि इस 10 वर्ष की अवधि में भारत में तेजी के साथ औद्योगीकरण का विकास हुआ है।[25] आवश्यकता इस बात की है कि कृषि कार्यों को पूर्णरूपेण सुधारा जाय जिसके लिए एक ही साथ विभिन्न सुधारात्मक परिवर्तन किया जाना चाहिए, अन्यथा भविष्य में न तो इससे लाभ होगा और न तो अच्छे परिणाम ही मिलेगें।[26] कृषि की पिछड़ी हुई अवस्था होने के कारण ही भारत के ग्रामीण अंचलों में प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है।

भारत में प्रतिव्यक्ति आय से ही यहाँ की निर्धनता की समस्या को हम समझ सकते हैं। प्रामाणिक विवरण के आधार पर हम इस कथन की पुष्टि कर सकते हैं।

क्रमसंख्या	देश	प्रतिव्यक्ति वार्षिक आय (रुपयों में)
1-	अमेरिका	23,400
2-	आस्ट्रेलिया	15,640
3-	इंग्लैण्ड	10,080
4-	फ्रांस	10,000
5-	जापान	7,260
6-	संयुक्त अरब गणराज्य	2,270
7-	टर्की	1,980
8-	भारत[27]	1,004
9-	पाकिस्तान	960

भारत में प्रतिव्यक्ति आय कम होने के कारण ही गांवों के लोग अपने स्वास्थ्य की रक्षा के लिए आवश्यक सन्तुलित भोजन प्राप्त नहीं कर पाते हैं। हरी सब्जी, दूध, अण्डे, मछली तथा अन्य विटामिनों से युक्त पदार्थों का प्रयोग कठिनता से 15·0 प्रतिशत लोग ही कर पाते हैं। भारत में अधिकांश व्यक्तियों का स्वास्थ्य सामान्य स्तर से बहुत नीचे है। साधारण-रूप से स्वास्थ्य के लिए 3,000 कैलोरी ऊर्जा की भोजन में आवश्यकता होती है, परन्तु भारत में एक सामान्य व्यक्ति को बहुत कठिनाई से 1980 कैलोरी ऊर्जा ही भोजन से प्राप्त हो पाती है। इसके विपरीत एशियाई देशों में ही, वर्मा में लोगों को 2010, ईरान में 2030, चीन में 2050 तथा पाकिस्तान में 2410 कैलोरी ऊर्जा भोजन से प्राप्त हो जाती है।[28]

इस प्रकार भारतवासियों की निर्धनता की समस्या का अनुमान अपर्याप्त भोजन से ही लगाया जा सकता है। निर्धनता के तथ्यों की पुष्टि हमारे उपलब्ध आँकड़ों के आधार पर भी होती है। सारिणी संख्या 4 में उत्तरदाताओं के आयु के मध्यमान का विवरण प्रस्तुत किया गया है। इस तालिका से स्पष्ट है कि ब्राह्मण उत्तरदाताओं के मासिक आय का मध्यमान 507 रु० प्रतिमाह, भूमिहार उत्तरदाताओं का 580 रु०, क्षत्रिय का 618 रु०, पिछड़ी जातियों का 325 रु० तथा अनुसूचित जातियों के आय का मध्यमान प्रतिमाह 255 रु० ही है। आज भारत में मूल्य सूचकांक 608 हो गया है, जिसके आधार पर सरकारी कर्मचारी निम्नतम् 750 रु० प्रतिमाह वेतन की माँग कर रहे हैं, जबकि ग्रामीण निवासी सभी जातियों के कुल उत्तरदाताओं के आय का मध्यमान देखा जाय तो यह सारिणी 4 से 457·10 रु० प्रतिमाह ही है। इस तथ्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्रामीण जनसामान्य अत्यधिक निर्धन है।

उपर्युक्त आँकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो रहा है कि भारतीय ग्रामीण परिवेश में कृषि और गरीबी का पारस्परिक सहसम्बन्ध है। जहाँ अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है, वहाँ गरीबी है।

व्यावसायिक गतिशीलता और धार्मिक आस्था

जब कोई व्यक्ति अपने जीवन पर्यन्त एक ही सामाजिक, व्यावसायिक, आर्थिक या राजनैतिक प्रस्थिति में रह जाता है, तो उसका व्यवहार आवश्यक रूप से कठोर और अनन्य हो जाता है। स्थायी रूप से एक ही सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में कार्य करते-करते उसका शरीर, मस्तिष्क और सम्पूर्ण व्यवहार एक निश्चित आकार और कठोरता ग्रहण कर लेता है।[29] इस आधार पर यदि हम विचार करें तो "एक प्रस्थिति" में रहने वाले लोगों

का व्यवहार आपस में समानता प्राप्त कर लेता है, जबकि दूसरे सामाजिक प्रस्थिति में कार्य करने वाले लोगों का व्यवहार उनसे भिन्न होता है। गतिशील समाज में रहने वाले लोगों का व्यवहार एक दूसरी ही तस्वीर पेश करता है। गतिशील समाज में रहने वाले लोग एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय में तथा एक आर्थिक प्रस्थिति से दूसरी आर्थिक प्रस्थिति में हमेशा गतिमान रहते हैं, फलत: उनकी आदतें और उनका व्यवहार एक निश्चित आकार या कठोरता ग्रहण नहीं कर पाता, क्योंकि एक निश्चित व्यवसाय या आर्थिक प्रस्थिति के लिए जो आदतें या व्यवहार उपयुक्त होते हैं, वे दूसरी व्यावसायिक और आर्थिक प्रस्थिति के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं। किसी व्यक्ति के प्रस्थिति में परिवर्तन उसके शरीर, मस्तिष्क और प्रतिक्रियाओं में तदनुकूल परिवर्तन को अनिवार्य बना देता है। अत: गतिशील समाज में लोगों का व्यवहार, विश्वास और आस्था बहुत अधिक परिवर्तनशील बन जाती है। इस प्रकार व्यवहार का लचीलापन और नम्यता सामाजिक गतिशीलता की अनिवार्य परिणति होती है। इस आधार पर हम एक भारतीय हिन्दू और अमेरिकन के व्यवहार की तुलना कर सकते हैं। एक भारतीय हिन्दू बहुत कुछ अंशों में अपने परम्परागत मूल्यों और व्यवसायों को सम्पन्न करने में अनुकूलित होता है, लेकिन अचानक वह किसी दूसरी सामाजिक और आर्थिक प्रस्थिति में पड़ जाता है तो उसके सारे व्यवहार के तरीके विलुप्त हो जाते हैं और वह किंकर्तव्य विमूढ़ हो जाता है। अमेरिकन लोगों में हम यह देखते हैं कि प्रतिदिन, भले ही आकस्मिक रूप से ही सही, एक प्रस्थिति से दूसरी प्रस्थिति में वे अपने व्यवहार का सन्तुलन बनाये रखते हैं, क्योंकि किसी निश्चित प्रस्थिति में उनका बहुत दिनों तक रहना आवश्यक नहीं होता है।

जब कोई मनुष्य अपने जीवन-पर्यन्त एक निश्चित सामाजिक और आर्थिक परिस्थिति में एक निश्चित व्यवसाय करता रह जाता है तो उसका मस्तिष्क निश्चित रूप से उसके सामाजिक परिवेश से आच्छादित हो जाता है। जाने-अनजाने वह संसार की समस्त गतिविधियों और घटनाओं को अपने "सोशल बाक्स" के चश्में से ही देखने लगता है।[30] चूंकि ऐसे व्यक्ति को दूसरी सामाजिक या आर्थिक प्रस्थिति में गति करने का कोई अवसर उपलब्ध नहीं हो पाता, अत: वह दूसरी सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के आचार, विश्वास, नैतिकता और आस्था से परिचित नहीं हो पाता। अत: वह अपने ही सामाजिक परिवेश से उपलब्ध स्थायी सामाजिक प्रस्थिति से ही दूसरों के सम्बन्ध में विचार करता है। उसके समस्त गुण और क्रिया-कलाप उसकी प्रस्थिति के विश्वास, राय, आदर्श, स्तर और नैतिक मान्यताओं के अनुसार ही प्रतिबिम्बित होती है। वह किसी दूसरी विचारधाराओं और नैतिक मान्यताओं के साथ पूर्णरूपेण सामन्जस्य स्थापित नहीं कर पाता है। उसका अपने "सोशल बाक्स" का एक पक्षीय सोच उसके मस्तिष्क को विस्तृत आयाम नहीं दे पाता है।

एक दूसरी ही तस्वीर ऐसे लोगों द्वारा प्रस्तुत की जाती है जो एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय, गरीब से धनी तथा अधिनस्थ से अधिकारी वर्ग में गति करते रहते हैं। इस प्रकार की गतिशीलता का अर्थ विभिन्न सामाजिक वातावरण, विभिन्न सामाजिक वायुमण्डल, विभिन्न जीवन स्तर, विभिन्न आदतों, नैतिक मान्यताओं, आदर्श, रीति-रिवाज और विश्वासों में गतिशीलता से है। ऐसा व्यक्ति अपना भिन्न दृष्टिकोण रखता है। वह विभिन्न "सोशल बाक्स" का ज्ञान और व्यवहार के तरीकों को ग्रहण करता है। धनी और गरीब, श्रमिक और चिकित्सक, अधीनस्थ और अधिकारी के

अनुभवों के मनोविज्ञान को वह भलीभांति प्रत्यक्ष अनुभव के द्वारा महसूस करता है। इस प्रकार के अनुभवों से उसका मस्तिष्क अधिक लचीला, विस्तृत और खुला हुआ बन जाता है। इस प्रकार की गतिशीलता का प्रभाव हर समाजों में देखा जा सकता है। यदि हमें एक किसान के व्यवहारों की विशिष्टता को देखना है, तो हमें एक ऐसे किसान के पास जाना होगा जो जीवन पर्यन्त किसान रहा हो, न कि ऐसे किसान के पास जो अपने जीवन काल में कुछ थोड़ से ही समय के लिए किसान रहा हो। दूसरी तरफ हम ऐसे व्यक्ति का भी उदाहरण ले सकते हैं, जो किसी खास व्यवसाय में जीवन पर्यन्त रहा हो। वह एक चिकित्सक, एक प्रोफेसर, एक सिपाही या एक कारखाने का संचालक हो सकता है। वह निश्चित ही अपने सामाजिक प्रस्थिति के अनुसार अपनी संकीर्ण मानसिकता का परिचय देगा, बनिस्बत उस व्यक्ति के जो अपने जीवन काल में कई प्रस्थितियों से होकर गुजरा है। स्पष्टीकरण के लिए हम जर्मनी के कारखाना मजदूरों का उदाहरण ले सकते हैं, जिनकी सामाजिक, राजनीतिक विचारधारा और उससे सम्बद्धता सिद्धान्त रूप से आनुवांशिक सर्वहारा में पाई जाती है, जो स्वयं और उनके पिता जीवन-पर्यन्त कारखाना मजदूर रहे हैं। लेकिन जो लोग इस स्थिति को अस्थाई रूप से प्राप्त किये हैं, उनमें बहुत थोड़े अंशों में सामाजिक प्रतिबद्धता, स्थाई सर्वहारा की अपेक्षा पाई जाती है।[31] विभिन्न विचारधाराएं और धार्मिक आस्था किस हद तक सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करते हैं, इसे हम विभिन्न विचार-धाराओं या धार्मिक आस्था और सामाजिक गतिशीलता के बीच सम्बन्ध के तथ्यों का परीक्षण करके कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में पाश्चात्य देशों में सम्पन्न हुए अध्ययनों से पता चलता है कि प्रोटेस्टेन्टवाद, खासतौर से काल्विनवाद व्यावसायिक उपलब्धियों

के लिए प्रोत्साहित करके सामाजिक गतिशीलता को उत्पन्न करती है।[32] मैक्स वेबर ने पूँजीवाद के विकास के प्रारम्भिक अवस्थाओं में "प्रोटेस्टेन्ट एथिक" का अध्ययन प्रारम्भ किया था और उन्होंने अपने एक विद्यार्थी को समसामयिक धार्मिक विश्वास और आर्थिक प्रगति का अनुसन्धान करने का निदेर्श दिया था।[33] उस समय यह एक सर्वविदित तथ्य था कि कैथोलिक देशों की अपेक्षा प्रोटेस्टेन्ट देशों में औद्योगिक विकास अधिक था। संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, इंग्लैण्ड और निदरलैण्ड से प्राप्त आँकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि धार्मिक मूल्य, सामाजिक गतिशीलता और आर्थिक प्रगति को प्रोत्साहित करते हैं।[34]

अमेरिका में प्रोटेस्टेन्ट मान्यता और कैथोलिक मान्यताओंममें अन्तर होने के कारण धार्मिक आस्था और सामाजिक प्रगतिशील के बीच सम्बन्धों का अध्ययन अत्यन्त जटिल है। प्रोटेस्टेन्ट धर्मावलम्बियों की अपेक्षा कैथोलिक धर्मावलम्बियों की संख्या बहुत अधिक है, और ये दूसरे देशों से आकर अमेरिका में बसे हैं। मालविले डाल्टन ने अपनी राय व्यक्त किया है कि "विदेशों में पैदा हुए श्रमिकों में, अपने उन अमेरिका में पैदा हुए साथियों की अपेक्षा, व्यावसायिक उपलब्धियों की ओर झुकाव कम होता है।[35] सैमुअल स्टाफर द्वारा एकत्रित आँकड़े प्रदर्शित करते हैं कि अमेरिका में रहने वाले आप्रवासी प्रोटेस्टेन्ट और कैथोलिक धर्मावलम्बियों की तीसरी पीढ़ी के सदस्यों का व्यावसायिक विवरण अपने पिता और बाबा से भिन्न है। तीसरी पीढ़ी के प्रोटेस्टेन्ट और कैथोलिक व्यक्तियों द्वारा अर्जित व्यावसायिक प्रस्थिति में कोई अन्तर नहीं है। हाल ही के आप्रवासी (माइग्रेन्ट) कैथोलिकों की अपेक्षा प्रोटेस्टेन्ट अधिक अच्छी और उच्च प्रस्थिति में विद्यमान है।[36] अतः दो धार्मिक समुदायों के बीच जब नैतिक मान्यताएँ समान हो

जाती हैं तो उनमें व्यावसायिक विभिन्नता समाप्त हो जाती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में धर्म, सामाजिक गतिशीलता की दर को प्रभावित नहीं करता है[37] या दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि सामाजिक गतिशीलता, धर्म को प्रभावित नहीं करती है।

यदि हम भारतीय सन्दर्भ में धर्म और व्यावसायिक गतिशीलता के बीच सम्बन्धों की खोज करते हैं, तो हमें यह मालूम होता है कि भारत में भी व्यावसायिक गतिशीलता पर धर्म का प्रभाव नहीं पड़ता और न ही धर्म पर व्यावसायिक गतिशीलता का प्रभाव पड़ता है, बल्कि सामाजिक या व्यावसायिक गतिशीलता किसी भी देश में नगरीकरण और औद्योगीकरण से ही प्रभावित होती है। सारिणी 28 से स्पष्ट है कि आज के वैज्ञानिक युग में भी अधिकांश लोग ईश्वर की इच्छा में विश्वास रखते हैं। उत्तरदाताओं से पूछा गया कि "क्या आप ऐसा मानते हैं कि ईश्वर की इच्छा के बिना कुछ नहीं होता ? तो 81·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सकारात्मक उत्तर दिया। सारिणी संख्या 24 में उत्तरदाताओं से प्रश्न किया गया कि क्या आप मनौती में विश्वास रखते हैं ? तो 70·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने "हाँ" कहा। इसी प्रकार व्रत-अनुष्ठान के सन्दर्भ में जब प्रश्न किया गया तो सम्पूर्ण उत्तरदाताओं में से 78·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि वे व्रत और अनुष्ठान में विश्वास रखते हैं। सारिणी संख्या 25 में उत्तरदाताओं से पूछा गया कि "क्या आप अपने व्यवसाय के स्थान पर किसी देवता की मूर्ति रखते हैं तो 69·0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने "हाँ" कहा। पुन: सारिणी संख्या 25 के ही आधार पर उनसे पूछा गया कि "क्या आप वर्ष के किसी विशेष दिन उन देवताओं की पूजा करते हैं ? तो 79·8 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सकारात्मक उत्तर दिया। अपनी व्यावसायिक

प्रगति के लिए वे किसी न किसी देवता की पूजा अवश्य करते हैं। सारिणी संख्या 26 में उत्तरदाताओं से प्रश्न किया गया कि "क्या मरने के बाद पुनर्जन्म होता है ? तो 70·6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने "हाँ" कहा। पुन: उनसे पूछा गया कि "क्या पूर्वजन्म के कर्म इस जन्म में भोगने पड़ते हैं ? तो 71·6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सकारात्मक उत्तर दिया।

उपर्युक्त सारणियों से प्राप्त आँकड़ों से यह पुष्ट करते हैं कि हिन्दुओं की धार्मिक मान्यताओं और नैतिक मूल्यों में परम्परागत धार्मिक एवं नैतिक मूल्यों से विचलन नहीं हुआ है, अपितु आज के वैज्ञानिक युग में भी हिन्दू अपने धार्मिक मूल्यों और मान्यताओं में विश्वास रखते हैं। पिछले अध्यायों में यह स्पष्ट हो चुका है कि भारतीय ग्रामीण परिवेश में भी जहाँ औद्योगीकरण के पहले किसी प्रकार की गतिशीलता नहीं थी, आज उस ग्रामीण समुदाय में भी शिक्षा के प्रसार के फलस्वरूप व्यावसायिक गतिशीलता बढ़ी है।

उपर्युक्त तथ्यों के विश्लेषण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि धर्म और व्यावसायिक गतिशीलता के बीच किसी प्रकार का सह-सम्बन्ध नहीं है।

REFERENCES

1. Gillin and Gillin - Cultural Sociology, p. 258.

2. F.C. Wang - Western Impact on Social Mobility in China (American Sociological Review (Dec. 1960) has ruled out this thesis.

3. Noel Gist- Caste differentials in South India; American Sociological Review, April- 1954, p. 130-134.

4. Edwin D. Driver- Caste and occupational structure in Central India, Social forces (Oct. 1962) pp. 26-31.

5. M. Ross - Social Mobility in Industrial Society, p. 7.

6. Gunnar Myrdal - The Challenge of World Poverty, p. 381.

7. Ralph H. Turner - Sponsored and contest Mobility and the Social System, American Sociological Review, Dec. 1960.

8. S.M. Dubey- "Social Mobility Among the Professions", (1975), p. 83.

9. S.M. Lipset & R. Bendix - SocialMobility in Industrial Society, pp. 91-101.

- Lawrence Thomas- The occupational Structure and Education, p. 343-363.

10. S.C. Dubey - India's changing villages, p. 109-113.

11. S.M. Dubey - Social Mobility among the profession, p. 77.

12. Masson Ollott - The Caste System of India, p. 655.

- J.H. Hutton - Caste in India, p. 122-124.

13. G.S. Ghurye - Caste and class in India, p. 15-17.

14. Kingsley Davis -The Population of India and Pakistan, p. 168.

15. Noel Gist - Caste differentials in South India, p. 130-134.

- Edwin D. Driver - Caste and occupational structure in in Central India, p. 20-31.

16. M.N. Sriniwas - Religion and Society among the Coorgs of South India, p. 24-31.

17. Andre Beteille - Caste, Class and Power, p. 45.

18. Morris Rosenberg and others - Occupations and values p. 173.

- Eli Ginzberg - Occupational choice, p. 205-207.

19. Richard L. Simpson and Ida Harper Simpson - Values, personal influence and occupational choice, p. 83-87.

20. Karl Marx and Friedrich Engeles : Manifesto of the communist party, p. 46.

21. Karl Marx and Friedrich Engeles : The German Indology, p. 16.

22. Ibid, p. 48-49.

23. Gunnar Myrdal - The Challenge of World Poverty, p. 21.

24. Census of India, 1961.

25. Gunnar Myrdal - The Challenge of World Poverty, p.105.

26. Gunnar Myrdal - Asian Drama, Chap. 26, p. 1288.

27. India, 1977-78, p. 161.

28. दिनमान, 17-23 दिसम्बर, 1978, गरीबी रेखा नहीं, लक्ष्मण रेखा (निबन्ध).

29. P.A. Sorokin - Social and Cultural Mobility, p. 508.

30. Ibid, p. 509.

31. Williams, J.M. - Our Rural Heritage, Groves N.E.- Rural Mimd.

Raussing. F.W. - Inventors and Money Makers.

32. Lipset and Bendix - Social Mobility in Industrial Society, p. 49.

33. Max- Weber- The Protestant Ethic and the spirit of Capitalism, where the author has discussed the results of an Investigation by Martin Offer Bacher.

34. Lipset and Bendix - Inbid, p. 49.

35. Malville Dalton- Workers Response and Social background, The Journal of Political Economy, p. 323-332.

36. Samual Stauffer- Civil Liberties.

37. Lipset and Bendix - Ibid, p. 52.

पंचम अध्याय

निष्कर्ष

निष्कर्ष

भारतीय समाज में परिवर्तन की शक्तियाँ सक्रिय हैं। परम्परागत भारतीय समाज के पुराने संरचनात्मक ढाँचे में बदलाव आया है। आधुनिक शिक्षा, वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान का विकास, औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न नये-नये पाश्चात्य विचारों के भारतीय समाज में प्रवेश ने अन्य चीजों के अलावा व्यावसायिक परिवर्तन को बढ़ावा दिया है, और हमारे अनुसन्धान का मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना है कि भारतीय ग्रामीण निवासियों के हिन्दू समुदाय में, जिसका परम्परागत व्यावसायिक आधार जाति व्यवस्था द्वारा सुनिश्चित रहा है, उसमें कितना और किस सीमा तक व्यावसायिक परिवर्तन हुआ है। परम्परागत रूप से प्राचीनकाल से चले आ रहे जाति एवं वर्ण के आधार पर व्यावसायिक विभाजन के स्थान पर आज एक नये ढंग के व्यावसायिक विभिन्नताओं से सम्पन्न समाज का निर्माण धीरे-धीरे उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही, हो रहा है। व्यावसायिक गतिशीलता का अध्ययन स्वाभाविक रूप से व्यावसायिक विभिन्नताओं के ढाँचे में परिवर्तन को समझने में बहुत बड़ी सहायता प्रदान करेगा एवं उसमें निहित कारणों और परिणामों को भी प्रदर्शित करेगा। ग्रामीणवाद, जातिवाद और संयुक्त परिवारवाद, प्राचीन परम्परागत भारतीय समाज के आवश्यक अंग हैं, और जब कभी हम भारतीय समाज के पुराने ढाँचे की संरचना की बात करते हैं, तो हमारा ध्यान तुरन्त इन संस्थाओं के ढाँचे में परिवर्तन की ओर चला जाता है। इन परम्परागत संस्थाओं की नींव शिक्षा और पाश्चात्य औद्योगिक विचारधाराओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न सामाजिक गतिशीलता से हिल गई है। व्यावसायिक परिवर्तन ने परम्परागत ढंग से चल रहे व्यवसायों से

अलग हटकर एक नये ढंग और तरीके के कार्य को प्रोत्साहित किया है। इन नये व्यवसायों के सदस्यों का चुनाव न तो जन्म से और न ही आनुवांशिकता से हुआ है, बल्कि इन सदस्यों का चुनाव कठिन परिश्रम, शिक्षा और तकनीकी प्रशिक्षण से हुआ है।

व्यावसायिक गतिशीलता, औद्योगीकरण तथा नगरीकरण की आवश्यक परिणति है। जैसाकि एण्डरसन ने कहा है कि "उद्योग और व्यापार अपने उत्कृष्ट स्थिति में जिस अनुशासित और नियमबद्ध कार्य की संरचना करते हैं, वह मूल रूप में व्यावसायिक संरचना है।[1] पेशावाद की जड़ उन विकासशील देशों में भी है, जहाँ औद्योगीकरण और नगरीकरण अपने प्रारम्भिक अवस्था में है, पिछले अध्यायों में हमने आधुनिक पेशों के उत्पन्न होने तथा उनकी स्वीकृति का विश्लेषण तीन पीढ़ियों (बाबा, पिता, स्वयं उत्तरदाता) के बीच करने का प्रयास किया है, तथा इस प्रक्रिया का प्रभाव इन नये पेशों के सदस्यों के सामाजिक मूल्य बोध और व्यवहार या दृष्टिकोण में परिवर्तन के सन्दर्भ में जानने का प्रयास किया है।

किसी भी प्रकार का परिवर्तन गतिशीलता कहा जाता है। यह परिवर्तन भले ही निवास स्थान का परिवर्तन हो, चाहे किसी व्यवसाय का परिवर्तन हो या किसी सामाजिक स्तर में परिवर्तन हो। पूर्व औद्योगिक समाजों में जहाँ कई कारणों से परिवर्तन के अवसर बहुत कम उपलब्ध थे, वहाँ औद्योगीकरण, नगीरीकरण, तकनीकी विकास और नये पाश्चात्य विचारों ने समाज के सभी बन्धनों को तोड़कर गतिशीलता के क्षेत्र को बढ़ावा दिया है। सामाजिक गतिशीलता ने जीवन स्तर को ऊँचा उठाया है, मस्तिष्क की

संकीर्णता और अन्धविश्वासों को कम किया है और मनुष्य को उच्च स्तर प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया है। जैसाकि "विल्सन" ने बताया है कि नगरीय जीवन में जड़वादिता और गतिशीलता अपना अतिरिक्त महत्व अर्जित करके, उसने समूह सम्बद्धता के प्रति क्षणिक भावना और राजभक्ति को कम किया है। भौतिक गतिशीलता केवल कई स्थानों से सदस्यता परिवर्तन का एक वाह्य प्रतीक है,सोचने और महसूस करने का एक सहयोगी तरीका है।[2]

इस अध्याय में हम औद्योगिक नगरीय विचारों से व्याप्त ग्रामीण समाज के सामाजिक जीवन में गतिशीलता का प्रभाव उसका महत्व तथा पेशों के स्थान को बार-बार दुहराना चाहेंगे अनेक समस्याएं गतिशीलता और प्रवासन (माइग्रेशन) के सम्बन्ध में उठती हैं। साधारणतया इन समस्याओं के दो ध्रुव हो सकते हैं। एक अपनी उत्पत्ति के स्थान तथा दूसरी उसके गन्तव्य स्थान या ठिकाना। गतिशील लोगों के संगठन को अपने पहले समूह के साथ उस स्थान (प्रस्थिति) को बदलना होगा तथा उन्हें अपने को नये समूह के तौर-तरीकों और जीवन स्तर के साथ समायोजन करके, नये सम्बन्ध तथा नये संगठन का विकास करना होगा। यह बदला हुआ वातावरण गतिशील लोगों की मानसिकता तथा उनके पुराने तौर-तरीकों और उनके अपने चहेते संगठन को प्रभावित करेगा। खासतौर से भारत में यह प्रक्रिया किसी ऐसे व्यक्ति के सम्बन्धों में प्रदर्शित होती है, जो अपना गांव छोड़कर नौकरी के लिए किसी दूसरी जगह चला जाता है, एक ओर उसके गांव, परिवार, जाति और परम्परा में उसके सम्बन्धों का प्रदर्शन होता है, और दूसरी ओर नगरीय जीवन, नये व्यवसाय, एकांकी परिवार और आधुनिक दृष्टिकोण का प्रदर्शन होता है। जैसाकि "थामस" और "ज्नानिकी" ने उद्घाटित किया है। यदि कोई प्रवासित व्यक्ति अपने गन्तव्य स्थान तक पहुँचने में सफल हो जाता है.तो वह अपने उत्पत्ति के स्थान से आई बाधाओं

से दूर हटने का प्रयास करेगा। ये बाधाएँ उसे एक ओर अपनी उत्पत्ति के स्थान की ओर ले जाने का प्रयास करेंगी और दूसरी ओर इसके ठीक विपरीत उसके गन्तव्य स्थान की ओर।[3]

यूनिथान, इन्द्रदेव और योगेन्द्र सिंह ने खोज की है कि "ब्रिटिश सामराज्य के अभ्युदय ने पहली बार न्यायिक, नैतिक, प्रशासनिक, सांस्कृतिक सुधारों की क्रमबद्ध श्रृंखला प्रारम्भ की। इस सुधार ने भारतीय उच्च वर्ग द्वारा स्थापित सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक आधारों को जड़ से हिला दिया।' यह कथन इस प्रस्तुत अध्ययन से भी प्रमाणित होता है। नये-नये व्यवसायों के अभ्युदय ने परम्परागत कुली वर्ग की शक्ति और विशेषाधिकार को धीरे-धीरे समाप्त किया और उनका स्थान आधुनिक कुलीन वर्ग ने ग्रहण कर लिया। इस आधार पर हमारा निम्न निष्कर्ष निकलता है --

1- सभी परम्परागत व्यवसायों के कुलीन वर्ग में बाबा की पीढ़ियों की अपेक्षा पिता और उत्तरदाता की पीढ़ी में उनकी संख्या क्रमश: कम होती गई है।

2- सफेद पोश व्यवसाय करने वाले लोगों की संख्या बाबा की पीढ़ी से लेकर पिता और उत्तरदाताओं की पीढ़ी तक लगातार बढ़ती गई है।

3- इन पीढ़ियों में परम्परागत पेशों से नये पेशों की ओर गति दिखाई पड़ती है।

पिछले अध्यायों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि बाबा की पीढ़ी से लेकर पिता और उत्तरदाताओं की पीढ़ी तक धीरे-धीरे परम्परागत पेशों से हटने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई है। पिता की पीढ़ी में

हमें पर्याप्त रूप से परम्परागत पेशों में कमी दिखाई पड़ती है और उत्तरदाताओं की पीढ़ी में यह बहुत अधिक कम हो गई है। इस प्रक्रिया में हमें शिक्षा के महत्व को भलीभाँति समझना चाहिए। जैसाकि बी0बी0 मिश्रा ने बताया है, "नया मध्यवर्ग जो ब्रिटिश हुकूमत के बाद के कालों में पैदा हुआ, वह माध्यमिक और उच्च शिक्षा की परिणति था, न कि उद्योगों के विकास के फलस्वरूप पैदा हुआ -- भारतीय मध्य वर्ग के एक बड़े भाग ने बुद्धिजीवी वर्ग का निर्माण किया है।"[5]

पिता और उत्तरदाताओं की पीढ़ी की तुलना से हमें निम्न निष्कर्ष प्राप्त होते हैं --

1- शिक्षित पिता के पुत्रों को नये व्यवसायों में प्रवेश करने का अधिक अवसर मिलता है।

2- कृषि, मजदूरी और जातिगत पेशा करने वाले लोगों की आकांक्षाएं अन्य लोगों के बराबर नहीं होती। इसके पीछे अशिक्षा, कम आय, गरीबी, अयोग्यता इत्यादि कारण हैं जिससे उच्च शिक्षा के लिए पर्याप्त साधन नहीं जुटा पाते और जागरूकता की भी कमी रहती है।

3- बढ़ते हुए शिक्षा के प्रसार ने ग्रामीण और कृषि से सम्बन्धित पेशों की ओर रुझान को कम किया है, और अधिक से अधिक लोग नगरीय पेशों की ओर आकर्षित हुए हैं।

अपने अध्ययन में हमने उन लोगों का भी अध्ययन किया है, जिन्होंने अपने जीवन में एक व्यवसाय को छोड़कर दूसरे व्यवसायों में गये हैं, अर्थात् उनके पेशे में गतिशीलता उत्पन्न हुई है। यद्यपि ग्रामीण परिवेश में

ऐसे लोगों की संख्या कम है।

साधारणतया यह अनुमान लगाया जाता है कि किसी भी समाज में अवसर की समानता पर ही गतिशीलता की दर निर्भर होती है। भारत में समानता की संवैधानिक गारन्टी है और जाति, धर्म या लिंग के आधार पर कानून लोगों में कोई भेद नहीं कर सकता। लेकिन प्रस्तुत अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि आज भी निम्न जातियों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति दयनीय ही है। प्रस्तुत अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ है कि गांवों में उच्च जातियों के लोग निम्न जातियों की अपेक्षा सामाजिक और आर्थिक रूप से प्रभावशाली है। प्रजातन्त्र एवं धर्म निरपेक्षता के सिद्धान्त के बावजूद निम्न जातियों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं हो सकी है।

यह कहना गलत होगा कि केवल जाति ही सामाजिक गतिशीलता की दर को निर्धारित करती है। जाति के स्थान पर शिक्षा एक ऐसा कारक पाया गया है, जो गतिशीलता को बहुत अधिक प्रभावित करता है। प्रस्तुत अध्ययन में यह पाया गया है कि ब्राह्मण, भूमिहार और क्षत्रियों के समान ही निम्न जातियों के लोग भी शिक्षित हैं, और शिक्षित होकर अपने परम्परागत व्यवसायों से अलग हटकर नौकरियों इत्यादि में लगे हुए हैं। गांवों में किसी औद्योगिक मजदूर वर्ग का निर्माण नहीं हो सका है, क्योंकि गांवों में किसी भी प्रकार के उद्योग का अभाव है। अधिकांश परिवार कृषक एवं कृषि-मजदूरों के हैं। ऊँची जाति के कृषकों में उध्र्व गतिशीलता अधिक देखने को मिलती है।

व्यावसायिक या सामाजिक गतिशीलता की मात्रा बहुत हद तक सामाजिक व्यवस्था की प्रकृति पर निर्भर करती है, अत: जाति व्यवस्था द्वारा सामाजिक गतिशीलता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन भी भलीभाँति

समझकर लिया जाना चाहिए। इस जांच की परिणाम यह प्रदर्शित करता है कि व्यावसायिक गतिशीलता पर जाति व्यवस्था कोई बड़ी बाधा उपस्थित नहीं करती है, क्योंकि प्रस्तुत अध्ययन के लिए चुने गये उत्तरदाता भिन्न-भिन्न जातियों के हैं और उनमें से प्रत्येक जाति के अधिकांश उत्तरदाताओं ने अपने परम्परागत पेशों से इतर दूसरे पेशों का चुनाव स्वतन्त्रतापूर्वक किये हैं।

यह एक विदित तथ्य है कि गतिशीलता की प्रक्रिया को सबसे अधिक आधुनिक शिक्षा ने प्रभावित किया है। शिक्षा प्रसार गांवों तक भी हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप अशिक्षा की मात्रा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में कम होती गई है, और शिक्षा की मात्रा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में बढ़ती गई है, व्यावसायिक और सामाजिक गतिशीलता के लिए नगरीकरण को भी एक महत्वपूर्ण कारक माना जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में नगरीकरण तो नहीं, परन्तु नगरीय संस्कृति के कुछ तत्व अवश्य विद्यमान है और परिवहन व्यवस्था के विकास ने गांवों को नगरों से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। व्यावसायिक गतिशीलता के सन्दर्भ में परिवार की भूमिका पर भी विचार किया गया है। "संयुक्त परिवार परम्परागत भारतीय पारिवारिक व्यवस्था की रीढ़ है। ··· संयुक्त परिवार की भावना अपने सदस्यों की गतिशीलता को प्रभावित कर सकती है। "जबकि राष्ट्रीय आर्थिक या सामाजिक नियोजन इस प्रकार की गतिशीलता की मांग कर सकती है।[6]

एक आवश्यक प्रक्रिया की भांति व्यावसायिक गतिशीलता सामाजिक संरचना तथा साही साथ व्यक्तियों की मनोवृत्तियों एवं प्रस्थितियों में परिवर्तन ला देती है। गतिशीलता का एक बहुत महत्वपूर्ण परिणाम यह है कि वंशानुगत रूप से हस्तान्तरित होने वाले परम्परागत व्यवसाय जो जाति

व्यवस्था से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित थे, उनके कमी आई है। लोगों के पुराने परम्परागत पारिवारिक व्यवसाय, कृषि व्यवस्था और ग्रामीणवाद का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध था, लेकिन नये प्रशासनिक और औद्योगिक व्यवसायों के उत्थान तथा नगरीय प्रवृत्तियां सुदूर ग्रामीण अंचलों तक भी फैली और इसने लोगों की मनोवृत्तियों एवं आकांक्षाओं को बहुत अधिक प्रभावित किया है।

सामाजिक प्रस्थिति की धारणा में एक स्पष्ट परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहा है, जैसाकि जाति व्यवस्था के अनुसार पहले व्यक्ति की प्रस्थिति का निर्धारण जन्म के आधार पर होता था, लेकिन बहुत कम उत्तरदाता इस सिद्धान्त में अब विश्वास करते हैं। इसके विपरीत अधिकांश उत्तरदाता अपनी उच्च सामाजिक प्रस्थिति के निर्धारण के लिए शिक्षा, व्यवसाय और सम्पत्ति को उत्तरदायी कारक मानते हैं। बहुत आसानी से तर्कसंगत ढंग से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि परम्परागत भारतीय समाज "बन्द सामाजिक स्तरीकरण से "खुले सामाजिक स्तरीकरण की ओर बढ़ रहा है।" यह एक प्रचलित विश्वास बन चुका है कि भारतीय समाज में जातिव्यवस्था अनजाने ढंग से अपनी प्रासंगिकता खोती जा रही है। खान-पान, रहन-सहन, व्यावसायिक चयन इत्यादि में जाति का महत्व कम हुआ है। ग्रामीण समुदाय के उत्तरदाताओं में विवाह के सन्दर्भ में भी धारणाएं बदली हैं। वे लोग भी अब अन्तर्जातीय विवाहों के पक्षधर होते जा रहे हैं।

भारतीय निवासी अपनी धार्मिक आस्था के लिए मशहूर रहे हैं। उच्च शिक्षा, नई व्यावसायिक गतिविधियों और आधुनिक मान्यताओं से समृद्ध ग्रामीण लोगों में आज भी धार्मिक भावना पहले के समान ही उनके

जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान बनाये हुए हैं। अधिकांश हिन्दू पूजा-पाठ के लिए मन्दिरों में जाते हैं और जो नहीं जाते हैं उनमें देवताओं के प्रति सच्ची आस्था बनी हुई है। पूर्वजन्म के कर्मों और पुनर्जन्म में विश्वास पूर्ववत् बना हुआ है। ग्रामीण जनमानस देवी-देवताओं के विश्वास से अभिभूत है और वर्ष के किसी विशेष दिन देवताओं की पूजा अवश्य करता है। लोग ऐसा मानते हैं कि अच्छे कर्म का फल अगले जन्म में अच्छा ही मिलेगा। हिन्दू जनमानस ऐसा मानता है कि पूर्वजों की पूजा से उनकी आत्मा को शान्ति मिलती है। लोगों में ईश्वर के प्रति आस्था बनी हुई है।

भारतीय समाज परिवारवाद से विशेषीकृत है, जिसके अनुसार प्रत्येक औसत भारतीय पर उसके परिवार और माता-पिता का प्रभाव होता है। प्रस्तुत अध्ययन से भी इस बात की पुष्टि होती है कि अधिकांश उत्तरदाता इस बात का समर्थन करते हैं कि लड़के-लड़कियों की शादी उनके माता-पिता द्वारा सुनिश्चित किया जाना चाहिए। सामाजिक गतिशीलता और औद्योगीकरण के कारण बहुत से सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन आया है। अब लोग ऐसा सोचते हैं कि उनकी प्रस्थिति और भूमिका पूर्व निर्धारित नहीं है। सामान्य रूप से कहा जासकता है कि नये सामाजिक मूल्यों की अभिवृद्धि अर्जित समाज के अनुकूल है। लोग अब ऐसा सोचने लगे हैं कि वे अपनी अच्छी सामाजिक प्रस्थिति का निर्माण कठोर परिश्रम और उच्च शिक्षा से कर सकते हैं। अत: भाग्यवादी दृष्टिकोण की अपेक्षा व्यावहारिक दृष्टिकोण का विकास लोगों में हुआ है। अधिकांश लोग ऐसा महसूस करते हैं कि व्यक्तिगत योग्यता और उपलब्धियां जन्म की अपेक्षा, सामाजिक प्रस्थिति के निर्धारण में अधिक महत्वपूर्ण है।

प्रस्थिति भिन्नता (स्टेटस डिसक्रेपैन्सी) की घटना सामान्य रूप से गतिशीलता की परिणति मानी जाती है। किसी विशेष समूह के सदस्य की सामाजिक प्रस्थिति निम्न हो सकती है, परन्तु उसी व्यक्ति की उसी समय आर्थिक सोपान पर प्रस्थिति ऊँची हो सकती है। जैसाकि ग्रामीण परिवेश में बनिया जाति की सामाजिक प्रतिष्ठा एक गरीब ब्राह्मण से निम्न है, परन्तु आर्थिक रूप से बनिया की प्रस्थिति ब्राह्मण से ऊँची है। प्रस्थिति भिन्नता को स्पष्ट करने हेतु हम उदाहरणस्वरूप पत्रकारों को ले सकते हैं। एक पत्रकार की आज के विज्ञापन एवं प्रचार के युग में ऊँची प्रतिष्ठा है, परन्तु उसका वेतन उच्च-व्यावसायियों और सरकारी अधिकारियों की अपेक्षा बहुत कम होती है। यह प्रस्थिति भिन्नता गांवों में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है, जहाँ पर कि निम्न जातियों के लोग आरक्षण सुविधा के कारण सरकारी नौकरियों में उच्च पदों पर रहकर उच्च वेतन प्राप्त कर रहे हैं, परन्तु उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा उनके गांव में जाति के आधार पर निर्धारित की जाती है। जैसाकि एम0एन0 श्रीनिवास ने इंगित किया है कि "निम्न जातियाँ, उच्च जातियों के तौर-तरीकों और रीति-रिवाजों का बिना अपनी आर्थिक स्थिति में परिवर्तन किये नकल करने का प्रयास कर रहे हैं और इस प्रकार वे अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा को ऊँचा उठा रहे हैं।[7] श्रीनिवास ने उद्घाटित किया है कि "भारतीय संस्कृति बहुत तीव्र गति से परिवर्तन की ओर बढ़ रही है, और यह परिवर्तन केवल एक ही दिशा में नहीं हो रहा है। निम्न जातियों के लोगों के जीवन के तौर-तरीकों, मूल्यों और उनके व्यवहार का संस्कृतिकरण हो रहा है। संस्कृतिकरण एक सांस्कृति प्रक्रिया है, लेकिन यह भी महसूस करना आवश्यक है कि संस्कृतिकरण आमतौर पर राजनैतिक और आर्थिक शक्ति अर्जित करने वाली जाति की सहगामी होती है। ये दोनों ही सामाजिक गतिशीलता की

प्रक्रियाएं हैं। यह महसूस करना भी आवश्यक है कि यद्यपि परम्परागत जाति व्यवस्था में भी कुछ निश्चित मात्रा में गतिशीलता रही है, और यह विगत कुछ दशकोंमें बहुत हद तक बढ़ गई है।[8] संस्कृतिकरण की अवधारणा का परीक्षण सर्वप्रथम दक्षिण भारत के ग्रामीण अंचलों में सम्पन्न किया गया। वे लोग जो जातिव्यवस्था में सबसे निचले स्तर पर स्थित हैं, वे अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा की वृद्धि के लिए प्रयासरत हैं। जातियों की गतिशीलता एक विवादास्पद प्रश्न है। कुछ मामलों में कुछ विशिष्ट जातियों ने राजनैतिक और आर्थिक शक्ति अर्जित करके अपने प्रस्थिति में वृद्धि किया है।

सामाजिक गतिशीलता के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण समस्याओं का विवरण कुछ समाज-शास्त्रियों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। ये निम्न हैं --

1- सीमान्त व्यक्ति (मार्जिनल मैन) की समस्या ।

2- सन्दर्भ समूह की समस्या (रिफरेन्स ग्रुप प्राब्लम)

गतिशील समाज में जहाँ व्यक्ति एक व्यवसाय एवं प्रस्थिति से दूसरे व्यवसाय एवं प्रस्थिति में गति कर रहा है, उसे नये-नये व्यवहार के तरीकों और सामाजिक मूल्यों का सामना करना पड़ता है। ऐसा व्यक्ति अचानक स्वयं को पहले के प्रभावों और आदतों से मुक्त नहीं कर पाता है, और उसी समय उसे बदली हुई परिस्थितियों के साथ सामन्जस्य करना पड़ता है। ऐसा व्यक्ति न तो अपने को अपनी पहली परिस्थिति के मूल्यों से अलग कर पाता है, और न तो नई परिस्थिति के साथ पूर्णतया सामन्जस्य स्थापित कर पाता है। वह दो बिन्दुओं के बीच पड़ जाता है और उसे दो प्रकार के मूल्यों की व्यवस्था का सामना करना पड़ता है और वह एक विशेष स्थिति में पड़ जाता है। इस घटना को सीमान्तता कहते हैं और ऐसे व्यक्ति को

सीमान्त-व्यक्ति कहते हैं।[9] गतिशीलता व्यक्ति के समूह की सदस्यता को भी परिवर्तित करने के लिए जिम्मेदार होती है। इस सन्दर्भ में दो समस्याएँ हैं-- प्रथम- व्यक्ति अपने प्राथमिक समूह (प्राइमरी ग्रुप) को या तो छोड़ता है, या छोड़ने की आकांक्षा रखता है, और दूसरा- वह दूसरे समूह का सदस्य होने की आकांक्षा रखता है। इस सन्दर्भ में "सन्दर्भ समूह" (रिफरेन्स ग्रुप) का प्रश्न प्रश्न अस्तित्व में आता है। सीमान्तता और "सन्दर्भ समूह व्यवहार की घटना एक दूसरे से आन्तरिक रूप से सम्बन्धित है और आधुनिक औद्योगिक समाज की अनिवार्य परिणति है। यह स्थिति ग्रामीण निवासियों के व्यवहारों का अवलोकन करने से स्पष्ट हो जाती है, जहाँ एक ओर वे अपने परम्परागत और जातिगत मूल्यों से मुक्त भी नहीं हो सके हैं और दूसरी ओर वे पाश्चात्य शिक्षा और औद्योगिक वातावरण से प्रभावित होकर नये व्यवसायों और प्रस्थितियों की ओर सन्मुख हुए हैं। एक व्यक्ति की आदतें उसका व्यवहार और उसके मूल्य, उसके "सन्दर्भ समूह" में ही समझे जा सकते हैं, क्योंकि व्यक्ति विशेष अपने समूह एवं उसकी संस्कृति से प्रभावित होता है। जैसा कि लेविस ने लिखा है कि "बिना सम्बन्धित पृष्ठभूमि के निर्णय, समझ और व्यक्ति की धारणा असम्भव है और प्रत्येक घटना सीधे तौर पर पृष्ठभूमि पर ही निर्भर करती है।[10] यह अध्ययन यह प्रदर्शित करता है कि अनेक सन्दर्भों में उत्तरदाता सीमान्त स्थिति में पाये गये हैं, जिसे निम्न प्रकार से संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है --

1- सदियों के सन्दर्भ में सीमान्तता प्रत्यक्षत: प्रकट होती है। बहुत से उत्तरदाताओं ने यह स्पष्ट किया है कि शादियाँ माता-पिता की सहमति से निश्चित की जानी चाहिए और साथ ही साथ विवाहित जोड़ों द्वारा भी निश्चित किये जाने को मान्यता प्रदान करते हैं।

2- इसी प्रकार अधिकांश उत्तरदाताओं ने यह बताया है कि उन्होंने अपने जीवन में जो कुछ भी उपलब्ध किया है, वह उनके भाग्य का परिणाम है, जबकि ये ही उत्तरदाता ऐसा भी मानते हैं कि कठिन परिश्रम से अपने भाग्य को बदला जा सकता है। इस सन्दर्भ में उनका व्यवहार भाग्यवाद (फैटलिज्म) और व्यवहारवाद (प्राग्मेटिज्म) के बीच सीमान्त स्थिति में है।

समाज में उध्र्व गतिशीलता समाज के पदसोपान की विभिन्नता को सिद्ध करती है। उध्र्वगतिशीलता की उच्च प्रवृत्ति समाज में सदस्यों को समान अवसर प्रदान करने, खुला स्तरीकरण और अर्जित प्रस्थिति की ओर सामाजिक व्यवस्था को उन्मुख करने की सूचक मानी जाती है। गतिशीलता की सम्पूर्ण विचारधारा लोगों में, समूहों में और वर्गों में असमानता के अस्तित्व को प्रमाणित करती है और उन्हें अर्जित प्रस्थिति में विश्वास करने के लिए प्रेरणा प्रदान करती है। सामाजिक स्तरीकरण का प्रकार्यात्मक सिद्धान्त यह मानता है कि मानव समूह और उसके स्तर में असमानता एक आधारभूत तथ्य है-और इस अध्ययन में असमानता को प्रकार्यात्मक आवश्यकता के रूप में पहचाना गया है। ऐसी आशा की जाती है कि उध्र्व गतिशीलता का आरम्भ असमानताओं के बीच सेतु का कार्य करता है और इसे इगेलिटेरियनिज्म का सूचक माना जाता है। डाहरेनडार्फ ने इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए कहा है कि "यह प्रश्न रह गया है कि क्यों लोगों में असमानता विद्यमान है ? इसका कारण कहाँ स्थित है ? क्या इसे कभी कम या समाप्त किया जा सकता है ? या क्या हमें इसे समाज के एक आवश्यक अंग के रूप में स्वीकार करना पड़ेगा ? असमानता, वर्ग और स्तरीकरण में ऐतिहासिक सम्बन्ध प्रदर्शित करने के लिए उन्होंने आगे कहा "अट्ठारहवीं शताब्दी में जिसे हम

असमानता कहते थे और उन्नीसवीं शताब्दी में वर्गों के निर्माण का कारण मानते थे, उसे आज हम सामाजिक स्तरीकरण के रूप में वर्णन कर सकते हैं।[11] डब्लू०सी० रेन्सीमेन के अनुसार वर्ग, प्रस्थिति और शक्ति (क्लास, स्टेटस, एण्ड पावर) आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक असमानताओं का प्रदर्शन है।[12] भारतीय परिवेश में विभिन्नताओं के तीन प्रकार की असमानताओं को एक उदाहरण के द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। एक कैबिनेट मन्त्री, एक डाक्टर और एक चपरासी तीन ब्राह्मण परिवारों या एक ही ब्राह्मण परिवार में पैदा हुए हैं, उनकी परम्परागत सामाजिक संरचना में उनकी प्रतिष्ठा एक समान हो सकती है, लेकिन उनका वर्ग (आर्थिक) और शक्ति (राजनैतिक) प्रस्थिति में एक दूसरे से भिन्नता होती है। भारत में यह स्थिति उर्ध्व गतिशीलता के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई है।

राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था के रूप में पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों ही उच्च औद्योगीकरण की परिणतियाँ हैं। मार्क्स ने पूँजीवादी समाज की आर्थिक विसंगतियों और लोगों के आर्थिक शोषण से मुक्ति हेतु वर्ग विहीन समाज की परिकल्पना प्रस्तुत की है। ठीक इसी रूप में पूँजीवादी व्यवस्था में भी राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था की जड़ें समानता, स्वतन्त्रता, उदारता और आर्थिक विकास की धारणा में निहित है। मार्क्स के साम्यवादी अवधारणा में वर्गविहीन समाज के निर्माण की परिकल्पना है, जिसमें आर्थिक असमानता को समाप्त करने पर जोर दिया गया है। ऐसा माना जाता है कि यह असमानता पूँजीवादी उत्पादन व्यवस्था के कारण बढ़ी है। मार्क्सवादी चिन्तन में "अर्थ" को ही आधार माना गया है, जिसपर अन्य सारी सामाजिक व्यवस्थाएँ, शक्ति की संरचना (राज्य, सरकार, कानून) अवस्थित हैं। आर्थिक असमानता और असमान वर्गों को स्थाई बनाये रखने में पूँजीवाद

अपनी शक्ति संरचना का भरपूर उपयोग करता है। साम्यवादी व्यवस्था में पूँजीवादी व्यवस्था के वर्ग और आर्थिक असमानताएं दूर हो जाती है, परन्तु मार्क्स यह नहीं देख पाये कि साम्यवादी संरचना में प्रकट होने वाली नई उच्च कुलीन लोग अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक सुविधाएँ, उच्च स्थिति और शक्ति हासिल करेंगे, जैसा कि आज सोवियत रूस और साम्यवादी चीन में देखने में आ रहा है। साम्यवादी व्यवस्था में राज्य शक्ति की मशीनरी सुदृढ़ तो रहेगी, परन्तु वह नई असमानताओं को उत्पन्न करेगी।

पाश्चात्य लोकतान्त्रिक देशों में एक के बाद दूसरे प्रयास होते रहे जिससे समाज में कानूनी और राजनैतिक असमानताओं को दूर किया जा सके। आर्थिक रूप से समृद्ध देशों में जहाँ औद्योगिक और तकनीकी के उच्च विकास ने लोगों के बड़े समूह को उच्च जीवन स्तर प्रदान किया है, वहाँ यह आर्थिक असमानता बहुत हद तक महसूस नहीं की जाती है। परन्तु विकासशील देशों में खासतौर से भारत में यह आर्थिक असमानता उच्च और निम्न के बीच बहुत हद तक हृदयस्पर्शी और कारुणिक है। भारत में यदि व्यावसायिक परिवर्तन की जाँच की जाय तो पता चलता है कि परिवर्तन की यह प्रक्रिया आधुनिक विश्वविद्यालयीय शिक्षा, प्रशासन की नई प्रणाली, नागरिक कानून, उद्योगों एवं नगरों के विकास, भूमि के स्वामित्व का परिवर्तन, परिवहन एवं संचार साधनों के विकास के साथ ही प्रारम्भ हुआ है। परिवर्तन की शक्तियों के समन्वित विकास के परिणामस्वरूप प्रशासकीय तथा नगरीय केन्द्रों की स्थापना हुई, औद्योगिक व्यवसाय एवं विभिन्न पेशों तथा नौकरियों का विकास हुआ, जिसके परिणामस्वरूप धीरे-धीरे परम्परागत कुलीन वर्ग नये-नये व्यापारिक, राजनैतिक, प्रशासनिक और व्यावसायिक कुलीन वर्ग के द्वारा विलुप्त कर दिया गया। धर्म निरपेक्षता और समाजवादी

सिद्धान्तों के कारण नये-नये कुलीन वर्गों का प्रादुर्भाव हुआ है। नई संवैधानिक व्यवस्था ने भारत में सभी लोगों को उनकी जाति, धर्म और लिंग से अलग हटकर सबको समान अवसर प्रदान किया है। इसने सभी को ऊर्ध्व गतिशीलता, स्वतन्त्र प्रतियोगिता एवं अर्जित प्रस्थिति प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया है। आर्थिक और राजनैतिक शक्तियों, सुधार आन्दोलनों तथा सामाजिक कानूनों के कारण भारतीय समाज की सामाजिक संस्थाएं, जैसे-- जाति,परिवार, विवाह और ग्रामीण कृषि अर्थव्यवस्था में बहुत तेजी से परिवर्तन हो रहा है। अपने अध्ययन के आधार पर हम कह सकते हैं कि विगत तीन पीढ़ियों में ऊर्ध्व गतिशीलता के कारण भारतीय समाज में बहुत परिवर्तन हुआ है, परन्तु विशेष रूप से ग्रामीण जनता आज भी अपने परम्पराओं से हटना नहीं चाहती और वह संक्रमण की स्थिति से गुजर रही है। उसका दृष्टिकोण और व्यवहार सीमान्तता की परिधि में है।

भारतीय समाज में शिक्षा और तकनीकी ज्ञान के विकास के बावजूद भी यहाँ के लोगों में भाग्यवादिता का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। अधिकांश लोग अपनी उपलब्धियों के लिए भाग्य को ही उत्तरदायी तथ्य के रूप में स्वीकार करते हैं, लेकिन वे ऐसा भी सोचते हैं कि कठिन परिश्रम करके अपने भाग्य में परिवर्तन लाया जा सकता है। भारतीयों के व्यवहार में गतिशीलता के कारण ही भाग्यवाद और व्यवहारवाद का समन्वय दिखाई पड़ता है। व्यवहारवाद के अन्तर्गत वे ऐसा मानते हैं कि अर्जित गुणों के आधार पर समाज में उच्च प्रस्थिति को प्राप्त किया जा सकता है, लेकिन साथ ही साथ उनकी यह भी मान्यता है कि आध्यात्मिक क्रिया-कलापों के द्वारा देवी-देवताओं को खुश करके भी अपने अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है, और इसी कारणवश वे मन्दिरों या पूजास्थलों पर देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना करने जाते हैं। देवी-देवताओं की पूजा लगभग प्रत्येक ग्रामीण

के यहाँ सम्पन्न किया जाता है। अन्य देवताओं की अपेक्षा स्थानीय देवताओं की लोकप्रियता काफी अधिक है। पिछड़ी जातियों और अनुसूचित जातियों में अभी अन्धविश्वास का लोप नहीं हुआ है। आज भी वर्ष के किसी विशेष दिन वे अपने परम्परागत कुल देवता या ग्राम देवता को खुश करने हेतु पशु-बलि की घृणित परम्परा को किसी न किसी रूप में बनाये हुए हैं।

पुनर्जन्म की अवधारणा ग्रामीण समुदाय में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। अधिकांश उत्तरदाताओं का यह अटल विश्वास है कि आत्मा का विनाश नहीं होता है और वह एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में प्रवेश कर जाती है। लोगों की ऐसी भी मान्यता है कि इस जन्म के कर्मों को अगले जन्म में भोगना पड़ता है। अच्छे कर्मों का फल अगले जन्म में अच्छा ही मिलेगा इस धारणा और विश्वास के चलते लोगों ने माता-पिता की सेवा को अपना सबसे उत्तम कर्म माना है। साधु-सन्तों की लोभी प्रवृत्तियों के कारण लोग उनमें अब पहले जैसा श्रद्धा भाव नहीं रखते हैं। ग्रामीण समुदाय के लोग मानते हैं कि पूर्वजों की पूजा से उनकी आत्मा को शान्ति मिलती है। इस प्रकार हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि भारतीय ग्रामीण जनमानस हिन्दू वैदिक संस्कृति से एक तरफ परिपूर्ण है, वहीं दूसरी तरफ पाश्चात्य विचारों का भी समर्थक है, उसने परम्परागत वर्ण व्यवस्था से अलग हटकर आधुनिक विचारों को आत्मसात करते हुए नये-नये पेशों और नये सामाजिक मूल्यों को स्वीकार करते हुए उनसे अपना सामन्जस्य स्थापित किया है।

REFERENCES

1. Nels Anderson : Our Industrial urban Civilization (Asia Publishing House, 1964), p. 61.

2. Everest K. Wilson - Some Notes on the Pains & Prospects of American Cities, Conference (Vol. 7, 1958), p. 1-15.

3. Thomas and Znaniecke : The Polish Peasant in Europe and America, Second Edition, New York, 1927.

4. Yogendra Simgh, Indra Deva and Unithan - Towards a Sociology of Culture in India, 1965, p. 33.

5. B.B. Mishra -The Indian Middle classes, 1961, p. 343.

6. Ram Krishna Mukherji - Indian Tradition and Social change; intowards a Sociology of culture in India, p. 196-198.

7. M.N. Sriniwas - A note on Sanskritisation and Westernization, p. 383.

8. M.N. Sriniwas - Changing Institutions and values in Modern India, Prentice Hall of India, 1965, p. 436.

9. Robert E. Park : Human Migration and the Marginal man.

- E.U. Stonecuist : The Marginal man.

10. K. Lewis : Psycho-Sociological Problems of minority group, (Character and Personality), 1935.

11. R. Dahrendarf - Essays in the theory of Society, p.152.

12. W.C. Ranciman - Relative Depreivation and Social Justice.

BIBLIOGRAPHY

BIBLIOGRAPHY

1. M. Johnson Cyrus & Kerckhoff Alan C, - Adolescent Parent Relationship and Mobility Aspiration, Social forces, No. 2, Dec. 1964.

2. M. Johnson Cyrus & Kerkhoff Alan C - Family Norm - Social Position and The Value of Change, Social forces, Vol. 43, Dec. 1964.

3. Bose, N.K. (Prof.) - "Modern Bengal" Vidyodaya, Cal. 1959.

4. Gunnar Myrdal - AsianDrama, an inquiry into the poverty of Nations,- A polical book, 1968.

5. Sinha Surjeet et.al - Agriculture, caste and weekly Market, Bul. of ASI, Calcutta, Vol.X, 1961.

6. Sinha, D.P.- Culture Change in an inter-tribal Market, Asia Publishing House, Bombay, 1961.

7. Bhowmik, P.K.- Caste and changing occupation, Vol. III, No. 1, January, 1961.

8. Bhowmik, P.K.- Occupational change and caste structure in rural Market.

9. Malinowski, B. - The Primitive Economics of the Trobiand Islanders, 1926.

10. Saxena, Ranvir- Tribal Economy in Central India, Fa. K.L. Mukhopadhyay, Cal. 1964.

11. Thurnwald, R.- Economics in Primitive communities, London, Oxford book - 1932.

12. Boas, A.N. - Social and Rural Economy of North India, Calcutta- 1942.

13. Desai, M.B. - Rural Economy of Gujrat, Bombay.

14. Majumdar, D.N. - A Tribe in Transition, Cal. 1937.

15. Thusu, K.N. - "The Weekly Markbt etc. in South East Bihar, Vanyazati, Delhi, X.III, 40 ct. 1965.

16. Anderson D.H. & Davidson P.E. - Occupational Mobility in an American Community, Stanford Uni. press, 1937.

17. Anne Roes- The Psychology of occupations, New York, 1956.

18. Anderson, Nels- Our Industrial urban civilization, Asia Publishing house, Bombay, 1964.

19. Bottomore, T.B. - Classes in Modern Society, Goerge Allen and Unwin L.T.D., London, 1969.

20. Berber, Bernard and Berber, E.G. - European Social class, Stability and Change, New York, 1965.

21. Blau Peter- Occupational Mobility and Inter-personal Relationship, American Sociological Review, 1956.

22. Bernard, Barber- Social Statification : A Comparative study of Structure and Process, New york, 1957.

23. Bielen, Harry- The Pattern of Responsibility and its Relation to social class Mobility, Journal of Social Psychology, 1956.

SOCIOLOGY NEHU : SHILLONG

24. Baruah, B. - International occupational Mobility among Medical in Zorhat, 1971.

25. Bhagwan Prasad- Socio-Economic Study of Urban Middle class, Sterling Publishers, Delhi- 1968.

26. Bennet, William, S & Gist Noel P.- Class and Family Influence on Student Aspirations, Social forces, Dec. 1964.

27. Bergel, E.E. - Social Stratification, McGraw Hill Book Co. New York, 1962.

28. Beteille, Andre (Ed.)- Social Inequality, Penguin Books, 1969.

29. Bendix R. and Lipset S.M. - Class, Status and Power A reader in Social stratification, Free Press, 1966.

30. Beteille, Andre - Caste, Class and Power : Changing Pattern of Stratificagion in a Tanjore Village University of Claalifornia Press, 1965.

31. Bendix R. - Higher Civil Servants in American Society University of Colorado Press, 1949.

32. Bendix R. Lipset S.M. - Job Plans and the Entry into the labour Market, Social Forces, 1955.

33. Bendix R. & Lipset S.M. - Social Mobility in Industrial society, University of California Press, 1959.

34. Boalt, G.- Social Mobility in Stockholm- A Pilot Investigation, London, 1954.

35. Bohrnsted George W.- Social Mobility, Aspiration and Fraternity Membership, The Sociological quarterly Winter, 1969.

36. Brauce James M. - International occupational Mobility and Participation in Formal Associations , The Sociological quarterly, Winter, 1971.

37. Breese Gerald - Urbanisation in Newly Developing Countries, Brentice Hall of India, New Delhi, 1969.

38. Buckley William -Social stratification and the Functional Theory of Social Differentation, American Sociological Review, 1959.

39. Butterworth C.E. & Matter A.O.- Peer Influence on Level of occupational and Educational Aspirations, Social Forces, May, 1960.

40. Curtis Richard- Occupational Mobility and Church Participation, Social Forces, May, 1960.

41. Galenson Walter- Scandinavia an comparative labour movement, New York, Prentice Hall, 1952.

42. Curtis Richard- Note on occupational Mobility and Union membership in Detroit Social forces, Oct. 59.

43. Carlsson G. - Social Mobility and Class Structure, Lund C.K.W. Gleerup, 1958.

44. Curtis Richard, Janowitz Morris. - Sociological consequences of occupational mobility in a U.S. Metropolitcal Community, 1957.

45. Centres Richard- The Psychology of Social Classes, Princeton University Press, 1949.

46. Cole G.D.H. - Studies in class structure, Routledge and Kagan Paul, London, 1955.

47. Chhibbar Y.P. - From caste to class - A study of the Indian Middle class, Associted Publishing House, New Delhi, 1968.

48. Clark Robert- Psychoses, Income and occupational Prestige in class, status and power- A reader in Social Stratification.

49. Cliguet Rein P. & Foster Phillip - Potential Elites in Ghana and the Ivory coast, American Journal of Sociology, Nov. 1964.

50. Connor L.R. - Statistics in theory and Practice, 1926.

51. Dubey S.M. - Urbanisation in Tribal Areas in North Eastern India, Dibrugarh University, 1971.

52. Dubey, S.M. - Sodial Mobikity among the professions, Popular Prakashan Bombay, 1972.

53. Dubey S.M. - Comparative Study of Modernisation among the Khasis and Mikiris, Mimeographed Report of the Research Project, Dibrugarh University, 1970.

54. Dubey S.M. - Displacement mobility and conformity with the out group, inter discipline, vol. 4 (2), Summer, 1967.

55. Dubey S.M.- Modern Education occupational mobility and the rise of professions in a developing city, Seminar Paper, Sociology of development, UNESCO, Delhi, Dec. 1968.

56. Davis Kingsley- Human Society, The MacMillan Co. New York, 1969.

57. Davis Kinglsey and Golden Hilda Hertz, - Urbanisation and the development of Pre-Industrial Areas, Economic development and cultural change, Oct. 1951.

58. Davis K. Moore Wilbert E.- Some Principles of stratification, American Sociological review, Vol. 10, April. 1945.

59. Dubbois Abbe J.- Hindu Manners, Customs and ceremonies, Oxford Clarendon Press, 1897.

60. Davis Kinglsey - The Population of India and Pakistan, Princeton University Press, 1951.

61. Durkheim Emile - The Division of Labour in Society Translated by George Simpson, The Free Press, 1947.

62. Dale H.E. - The higher civil servants of great Britain, Oxford University Press, 1941.

63. Dijlas M.- The New class, Thomes and Hudson, London, 1957.

64. Dahrendorj Ralph- Essays in the theory of society, Stanford University Press - 1968.

65. Dahrendorj Ralph- Class and Class conflict in Industrial Society, Stanford, 1959.

66. Driver Edwin D.- Caste and occupational structure in Central India, Social Forces, Oct. 1962.

67. Empeylamer T. -Social and occupational Aspirations : American Sociological Review, April, 1956.

68. Foster George M. -What is Folk Culture, American Anthropologist, L.V. 1963.

69. Foladare S. Irving - A classification of 'Ascribed Status' and 'Achieved Status', The Sociological Quarterly, Winter, 1969.

70. Fox Thomas & Miller S.M. - Occupational Stratification and Mobility, Yale University Press, New Haven 1961

71. Glass D.V. (Ed.) - Social Mobility in Britain, Routledge and Kagan Paul L.T.D., 1954.

72. Ghurye, G.S. - Cities and Civilization, Popular Prakashan, Bombay.

73. Ghurye, G.S.- Caste and Class in India, Popular book depot, Bombay, 1950.

74. Grigg Chales M. & Middleton Russel- Community of orientation and occupational Aspirations of Ninth Grade Students, Social forces, May, 1960.

75. Ginzberg M. - Interchange between Social classes, Economic Journal, Dec. 1954.

76. Ginsberg, Eli,- Occupational choice, Columbia University Press, 1951.

77. Goldhamer Herbert - Social Mobility, International Encyclopaedia of the Social Sciences (Ed.) David L. Shills, 1968.

78. Gist Noel- Caste differentials in South India, American Sociological Review, April, 1954.

79. Gogoi T. - Occupational Mobility Among the Tea garden Managers in Upper Assam, 1972.

80. Gould H.A. - Lucknow Rickshawallas, The Social Organisation of an occupational category; International Journal of comparative sociology, March, 1965.

81. Gould H.A.- Castes, Outcastes and the Sociology of Stratification International Journal of comparative Sociology, Sept. 1960.

82. Hyman Herbert H. - The Psychology of Status, Archives of Psychology, No. 289, 1942.

83. Hall Richard H. - Occupationals and Social structure, Prentice Hall, 1969.

84. Huttan J.H.- Caste in India, Oxford University Press, London, 1946.

85. Hausen Phillip M.- The changing Population Pattern of the Modern City', in cities and society, Free Press, 1963.

86. Hsu Francis L.K.- Social Mobility in China, American Sociological Review-14, November 1949.

87. Hauser Phillip M. - Some Political Influences of Urbanisation in Cities and society in Reiss and Hatt, Free Press, 1963.

88. Hollingshead A.B.Ellis R.K. & Eirby E.- Social Mobility and Mental illness, American Sociological Review, 19, 1954.

89. Hodge Robert W., Siegal Paul M. & Rossi Peter H.- Occupational Prestige in the United States, American Journal of Sociological, Nov. 1964.

90. Ishwarank. - Our Industrial urban civilisation, Asia Publishing House, 1964.

91. Ingham G.K. - Social Stratification : Individual Attributes and Social Relationship.

92. Johnson Cyrus M. & Kerckhoff Alan - Family Norm- Social Position and the value of change, social forces vol. 43, Dec. 1964.

93. Johnson Cyrus M. & Kerckhoff Alan C.- Adolescent Parent Relationship and Mobility Aspiration, Social Forces, Dec. 1964.

94. Kohl J.A. - Educational and occupational Aspirations of common man Boys, Harvard Education Review, 28, 1953.

95. Kelsall R.K. - Higher Civil servants in Britain : Routledge and Kagan Paul, 1955.

96. Kirkpatrik Clifford & Fleur Melvin D. - Influence of Professors on the Flow of Talent to the Academic Profession, Social Forces, May, 1960.

97. Lambert Richard D. - Factory Workers and New Factory- Population in Poona; Journal of Asian Studies, Nov. 1958.

98. Lipset S.M. - Social Mobility and Urbanisation, Rural Sociology Sept. 1955.

99. Lohia Ram Manohar- Marx, Gandhi and Socialism, Navhind, Hyderabad, 1963.

100. Misra B.B. - The Indian Middle classes, Oxford University Press, London, 1961.

101. Marx Karl, Engles Friedrick - Manifesto of the communist Party First German Edition, 1884.

102. Marx Karl, Engles Friedrich- The German Ideology, New York, International Publishers, 1939.

103. Morton Robert K. & Kitt Alice S. - Reference group theory and social Mobility, The Free Press, 1950.

104. Mackay, D.I.- Geographical Mobility and the brain drain, London, 1969.

105. McCully T.- English Education and the origin of Indian Nationalism, New York, 1940.

106. McCord William- Portrait of Transitional man; The new sociology, oxford University Press, New York, 1965.

107. Mukherjee R.K.- Indian Tradition and Social Change, Towards a Sociology of culture in India, Prentice Hall of India, New Delhi, 1965.

108. Miller & M. - Comparative Social Mobility, A trend report and Bibliography; current sociology, Vol. IX. No. 1, 1960.

109. Michels Robert- Social Mobility in general with specials reference to Post War Mobikity, XII International Congress of Sociology, Rome, 1936.

110. Moser C.A. & Hall J.R. - The Social Grading of occupations in D.V. Glass (Ed.) Social Mobility in Britain, London Routledge and Kegan Paul, 1954.

111. National opinion Research centre : Jobs and occupations; A popular Evaluation; Opinion News, 1947.

112. Nagendra S.P. - The Traditional theory of Caste, in towards a sociology of culture in India, Prentice Hall of India, New Delhi, 1965.

113. Odaka Kunio- Occupation and Stratification, Tokyo, 1958.

114. Ollott Masson- The Caste system of India, American Sociological Review, Dec. 1944.

115. Patterson Samual C. - Intergenerational occupational Mobility and Legislative voting Behaviour' Social Forces, Oct. 1964.

116. Parsons Talcott- Some Problems Confornting Socilogy as Profession, in American Sociological Review, August, 1959.

117. Parsons Talcott- A Revised Analytical Approach to the Study of Stratification, in class, status and power.

118. Pareto Vilfred - The Mind and Society (Ed.) Arthur Livingston, Vol. 4, New York, Harcourt Brace and Co. 1935.

119. Park Robert E. - Human Migration and the Marginal Man.

120. Runciman W.C.- Relative Deprivation and Social Justice, Routledge and Kegan Paul, 1966.

121. Reynolds L. G. - The structure of Labour Market, New York, Harper and brothers, 1951.

122. Rao M.S.A. - Urbanisation and Social change, Longmans, New Delhi, 1970.

123. Rogoff Natalie- Recent Trends in Urban occupational mobility, Cities and Society, Free press, 1963.

124. Salz Arthur- Occupations, Theyr and History, Encyclopaedia of social sciences, The MacMillan Co. , New York, 1944.

125. Saluger Berbert H. -Social Status and Political Behaviour, The American Journal of Sociology, Sept. 1954.

126. Swell William H., Raller A.O. & Strauss Murry - Social Status and Education and occupational Aspiration American Sociological Review, June 1957.

127. Sorokin, P.A.- Social and cultural Mobility, Haper & Brothers, 1927.

128. Smelser N.J. & Lipset S.M.- Social structure and Mobility in Economic development, Routledge & Kegan Paul, London, 1966.

129. Stephen Richard M. - Mobility orientation and stratification of 1000 Ninth Grades, American Sociological Review, April, 1957.

130. Stuckert Robert P. - Occupational Mobility and Family Relationship; Social Forces, March, 1963.

131. Srinivas M.N. - Religion and Society among the Coorgs of South India, Clarendon Press, Oxford, 1952.

132. Srinivas M.N. - Caste im Modern India, Asia Publishing House, Bombay, 1970.

133. Srinivas M.N. - Changing Institutions and Values in Modern India Towards a Sociology of Culture in India, Prentice Hall of India, 1965.

134. Sovani & Kusum Pradhan- Occupational Mobility in Poona City Between three generations, Indian Economic Review Aug. 1955.

135. Sovani N.V.- Urbanisation and Urban India, Asia Publishing House, Bombay, 1966.

136. Shills Edward- The Intellectual between Tradition and Modernity- The Indian situation, Mouton & Co. The Hague, 1961.

137. Shah A.B. & Rao C.R.M. - Tradition and Modernity in India, Manaktalas, Bombay, 1965.

138. Tien H. Yuan- The social Mobility, Fertility Hypothesis Reconsidered, American Sociological Review, April, 1961.

139. Tumin Melwin M.- Some Principles of stratification, American Sociological Review, 18, Aug. 1958.

140. Thomas William I. & Znaniecke Flevin - The Polish Peasant in Europe and America, 2nd Edn, New York, 1927.

141. Thomas Lawrence- The occupational structure and Education, New York, Prentice Hall, 1956.

142. Thompson, Patricia G.- Some Factors in upward social Mobility in England, 1971.

143. Thomas Geoffrey - The Social Survey', Labour Mobility in Great Britain.

144. Unithan T.K.N., Deva Indra, Singh Yogendra, Towards a Sociology of Culture in India, Prentice Hall of India, New Delhi, 1985.

145. Wang, F.C.- Western Impact on Social Mobility in China, American Sociological Review, Dec. 1960.

146. Weller Harry K. Schwarz- Values and occupational choice, Social Forces, Dec. 1960.

147. Sutherland E.- Crimonology.

148. Mckenzie R.- The Neighbourhood.

149. Dewey John- Human Nature and conduct.

150. रामधारी सिंह दिनकर - संस्कृति के चार अध्याय ।

151. MacDonell - Vedic Mythology.

152. Fausboll- Indian Mythology.

153. Nivedita & Coomaraswamy- Myths of Hindu and Buddhist

154. Avalon- Hymns to the Goddess and other works on Tantras

155. Stevenson- Heart of Jainism.

156. Max Muller- Ram Krishna, His life and Teachings.

157. Getty - Gods of Northern Buddism.

158. श्रीमदभागवत गीता

159. Gillin-Gillin- Cultural sociology.

160. S.C. Dubey- India's changing villages.

161. दिनमान, दिसम्बर, 1978

162. Williams J.M.- Our Rural Heritage.

163. Groves N.E. - Rural Mind.

164. Taussing F.W. - Invehtors and Money Makers.

165. Max Weber - The Protestant Ethic and the spirit of
Capitalism.

साक्षात्कार अनुसूची

क्रम संख्या ------   तिथि -----

पूर्वी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण अंचलों में
व्यावसायिक गतिशीलता का एक
समाजशास्त्रीय अध्ययन

पी0-एच0डी0 (समाजशास्त्र)
अनुसंधान के निमित्त

निर्देशक -

डा0 गौरी शंकर
प्रोफेसर, समाजशास्त्र

शोधकर्ता -

बिजेन्द्र प्रसाद राय
एम0ए0, बी0एड0

समाजशास्त्र विभाग,
समाज विज्ञान संकाय,
काशी विद्यापीठ
वाराणसी-1985-86

साक्षात्कार अनुसूची

(अ)

1- नाम -------------------

2- पता -------------------

3- आयु -------------------

4- लिंग -------------------

5- धर्म -------------------

6- जाति -------------------

7- राष्ट्रीयता ---------------------

8- वैवाहिक स्थिति -----------अविवाहित/विवाहित/विधुर/तलाकशुदा

(ब) परिवार

1- परिवार की प्रकृति ----------- संयुक्त/एकाकी

2- आपके परिवार के सदस्यों का विवरण -

क्रमसंख्या	सदस्यों के साथ सम्बन्ध	लिंग	आयु	वैवाहिक स्थिति	शिक्षा	व्यवसाय	प्रतिमाह आय
1-							
2-							
3-							
4-							
5-							
6-							
7-							
8-							

(स) शिक्षा 1- कृपया निम्न पीढ़ियों की शैक्षणिक उपलब्धियों को स्पष्ट करें -

क्रमसंख्या	पीढ़ी	विद्यालय का प्रकार जहां शिक्षा प्राप्त की	शैक्षणिक उपलब्धि	
			प्रशिक्षण का प्रकार	प्राप्त डिग्री
1-	बाबा			
2-	पिता			
3-	आप स्वयं			
4-	बच्चे			

2- क्या आप आगे भी शिक्षा प्राप्त करने की अभिरुचि रखते हैं--

हाँ/नहीं

(द) व्यवसाय

1- आपके परिवार का परम्परागत पेशा क्या है --------------

2- क्या आपके परिवार का कोई सदस्य आज भी अपने परम्परागत पेशे में लगा हुआ है ---------- हाँ/नहीं/पहले था अब नहीं

3- पीढ़ी क्रमानुसार अपने परिवार के निम्न सदस्यों के व्यवसाय का विवरण दीजिये --

क्रमसं0	पीढ़ी	व्यवसाय		श्रेणी	मासिक आय	आय के अन्य स्रोत (रु0 में)			
		विस्तृत प्रकार	विशिष्ट काय			कृषि	व्यापार	उद्योग	अन्यस्रोत
1-	बाबा								
2-	पिता								
3-	आप स्वयं								
4-	आपके बच्चे								

4- आपका पहले का रोजगार (यदि कोई हो)

क्रमसं0	व्यवसाय	कार्य का स्थान	इस स्थान से दूरी	रोजगार की अवधि	मासिक आय	छोड़ने का कारण
1-						
2-						
3-						
4-						
5-						

5- क्या आपके पहले व्यवसाय की मजदूरी, कार्य का समय और कार्य की सामान्य दशायें ----- न अच्छी न खराब/अच्छी/अच्छी नहीं थी

प्रकरण	अच्छा	खराब	न अच्छा न खराब
1- मजदूरी			
2- कार्य के घण्टे			
3- सामान्य दशायें			

6- सम्पूर्ण परिस्थितियों में आप अपने पहले व्यवसाय को पसन्द करते हैं या नापसन्द ---------- पसन्द, नापसन्द, तटस्थ

7- आपने अपना वर्तमान पेशा कैसे प्राप्त किया ?
रोजगार दफ्तर, प्रतियोगिता, मित्रों द्वारा, अन्य किसी स्रोत से

8- क्या आपका वर्तमान पेशा पहले वाले पेशे से भिन्न है ? ---- हाँ, नहीं

9- यदि हाँ तो किस सन्दर्भ में --- अच्छा वेतन, उच्च पद, नौकरी की अच्छी दशाएं

10- कृपया अपने व्यवसाय का निम्न विवरण प्रस्तुत करें --

विषय	अच्छा	खराब	तटस्थ
मजदूरी			
कार्य के घण्टे			
सामान्य दशाएं			

11- सम्पूर्ण परिवेश में आप इसे पसन्द करते हैं या नापसन्द -----
पसन्द, नापसन्द, तटस्थ

12- क्या आप अपने पेशे को बदलने का विचार करते हैं ? ------
हाँ, नहीं, अनिश्चत

13- यदि हाँ तो कारण स्पष्ट कीजिए (क्यों) - अपर्याप्त वेतन, वर्तमान स्थान की नापसन्दगी, समायोजन का अभाव, अन्य

14- आप किस प्रकार के व्यवसाय की आकांक्षा रखते हैं ? ------

15- आप पेशे में है या स्वतन्त्र रूप से प्रैक्टिस करते हैं ? कृपया आप बताएं कि आप इससे सन्तुष्ट हैं ? --------- हाँ, नहीं, तटस्थ

16- क्या आपकी पत्नी रोजगार शुदा है ? ------------हाँ, नहीं

17- यदि हाँ तो कृपया बताएं ---- उनका व्यवसाय, कार्य का स्थान, आय

18- आपकी पत्नी के पिता का व्यवसाय ---------

19- आप अपने बच्चों के लिए कौन सा व्यवसाय पसन्द करेंगे।

क्रमसंख्या	बच्चे	व्यवसाय
1-		
2-		
3-		

(य) <u>प्रस्थिति</u>

1- आप अपनी सामाजिक स्थिति के लिए निम्न में से किस कारक को महत्वपूर्ण मानते हैं --

जन्म, सम्पत्ति, शिक्षा, व्यवसाय, अन्य कोई

2- क्या आपका वर्तमान पेशा आपकी सामाजिक स्थिति ऊँचा करने में सहायक हुआ है ? --------- हाँ, नहीं, तटस्थ

3- क्या आप सोचते हैं कि अच्छा पेशा अपनाकर आप अपनी सामाजिक स्थिति अच्छी बना सकते है ? -------- हाँ, नहीं, अनिश्चित

4- क्या आप सोचते हैं कि आपकी सामाजिक स्थिति अपने समुदाय से अपरिवर्तनीय है ? --------- हाँ, नहीं, अनिश्चित

5- क्या आपको अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थिति अच्छी बनाने का पर्याप्त अवसर उपलब्ध है ? ------ हाँ, नहीं, अनिश्चित

6- आप अपने को किस सामाजिक वर्ग का समझते हैं ।

उच्च　　उच्च-मध्य　　मध्य-निम्न　　निम्न

7- क्या आपका अपना निजी मकान है ?

--- हाँ, नहीं

8- अपने कार्य पर जाने हेतु आप किस सवारी का उपयोग करते हैं --

साइकिल　　रिक्शा　　स्वचालित सवारी　　कुछ नहीं

9- क्या आप किसी क्लब, एसोसियेशन, ट्रेड यूनियन ,पार्टी के सदस्य हैं

---- हाँ, नहीं

10- यदि आप मतदाता हैं तो आपके मतदान की सामान्य प्रवृत्ति क्या है ?

(अ) हमेशा एक ही दल को वोट देते हैं।

(ब) दूसरे चुनाव में दूसरे को वोट देते हैं।

(स) तीसरे चुनाव में फिर किसी दूसरे दल को वोट देते हैं।

(द) अपनी जाति के उम्मीदवार को वोट देते हैं ।

11- आप किस विचार से किसी खास उम्मीदवार को वोट देते हैं।

(अ) वैचारिकता (ब) व्यक्तिगत योग्यता, (स) जाति, (द) धर्म, (य) अन्य

12- यदि आपको अच्छी सुविधाएं प्रदान की जाय तो क्या आप अपने राजनीतिक सम्बन्ध, परम्परा, व्यवसाय, धर्म को बदलना चाहेंगे।
--- हाँ, नहीं

(ल) प्रवृत्ति एवं अभिरुचि

1- क्या आप सोचते हैं कि जीवन में आपने जो कुछ भी उपलब्ध किया है वह आपके भाग्य कापरिणाम है ? -------- हाँ, नहीं

2- अपनी जीविका को और अच्छी बनाने की आपकी क्या योजना है।

3- आपने बच्चे के लिए आपकी क्या योजनाएं हैं

4- क्या आप अपने वर्तमान जीवन से सन्तुष्ट हैं या कभी इसे बेहतर बनाने की इच्छा रखते हैं ? ------------ हाँ, नहीं

5- असफलता के क्षणों में क्या आप आराम और शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करते हैं या असफलता को आप प्रगति के लिए सीढ़ी के समान मानते हैं ----------- हाँ, नहीं

6- क्या आप मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा, चर्च जाते हैं ? यदि हाँ तो क्या कभी-कभी, कुछ दिनों के उपरान्त, नियमित ----- हाँ, नहीं

7- क्या आप सोचते हैं विवाह माता-पिता द्वारा निश्चित किया जाना चाहिए या स्वयं विवाहित जोड़े द्वारा ---------

8- क्या आप अन्तरर्जातीय विवाहों के पक्षधर है ? ------

9- क्या आप अपने पुत्रों, पुत्रियों की शादी अन्य जाति, अपने से निम्न या उच्च में कर सकते हैं --------- हाँ, नहीं

(व) विश्वास व्यवस्था

1- क्या आप मनौती में विश्वास रखते हैं ? ------हाँ, नहीं, कभी-कभी

2- क्या आप व्रत, अनुष्ठान में विश्वास रखते हैं ? -----हाँ, नहीं

3- क्या आप यह मानते हैं कि मरने के बाद पुनः जन्म होता है ?
---- हाँ, नहीं, नहीं, जानते

4- क्या पूर्वजन्म के कर्मों को इस जन्म में भोगना पड़ता है ? ------
हाँ, नहीं

5- क्या अच्छे आचार-विचार धार्मिक अनुष्ठान और दान करने से अगले जन्म से सुख मिलेगा ? ------- हाँ, नहीं

6- अपने किये कुछ नहीं होता, सब कुछ किस्मत का खेल है। क्या आप इस बात में विश्वास करते हैं ? ------ हाँ, नहीं

7- क्या यह सच है कि भगवान् की इच्छा के बिना पेड़ की पत्ती भी नहीं हिलती ? ----------- हाँ, नहीं

8- यदि हाँ तो बुरे कर्म की भगवान की इच्छा से ही क्या नहीं होते ? ----------- हाँ, नहीं

9- अच्छा कर्म किसे कहते हैं ? निम्न मे से अपनी पसन्द की वरीयता के अनुसार 1, 2, 3, 4 नम्बर दें।

अ- माता-पिता की सेवा करके और उनकी आज्ञा मानना।

ब- धर्म के जानकारों जैसे पण्डित, मुल्ला, पादरी की सेवा क ना और उनकी आज्ञा मानना

स- जो अपने हृदय को ठीक लगे वही बात करना, किसी अन्य को आज्ञा से नहीं।

द- गरीबों, असहायों और बीमारों की सेवा करना और उनसे बदले में कुछ प्राप्त न करना।

10- क्या पूर्वजों की पूजा से उनकी आत्मा को शान्ति मिलती है ? ---
हाँ, नहीं, हो सकता है।

11- क्या पूर्वज अपनी सन्तान की रक्षा करते हैं ?------ हाँ, नहीं

12- आपके व्यवसाय में निरन्तर प्रगति हो इसके लिए आप किस देवता की विशेष पूजा करते हैं।

13- क्या वर्ष के किसी विशेष दिन जैसे-- दीपावली इत्यादि पर आप अपने व्यवसाय के रक्षक देवता की पूजा करते हैं ? ----- हाँ, नहीं

14- क्या आप अपने व्यवसाय के स्थान पर लक्ष्मी, गणेश इत्यादि किसी देवता की मूर्ति रखते हैं ? -------- हाँ, नहीं

15- यदि हाँ तो क्या उनकी पूजा नित्य करते है ? ----- हाँ, नहीं, कभी-कभी

16- क्या समझते हैं कि अथक परिश्रम से आप अपने जीवन की स्थिति में सुधार ला सकते हैं ?

NEHU LIBRARY 103542
Acc. No.
Acc. by
Date 7-7-05
Class by
Sub. Heading by
Edited by
Transcribed by